Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

स्वाध्याय-सिन्धु

लेखक :
वीरेन्द्र कुमार आर्य (स्वाध्यायी)
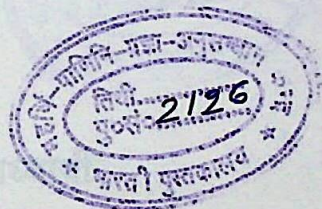
CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशिका -
तथा
पुस्तक प्राप्ति स्थान -

श्रीमती सुषमा वर्मा
धर्मपत्नी- स्वर्गीय श्री ओम्प्रकाश जी वर्मा
बी- २६, तेलियागंज, मेहदौरी कालोनी
इलाहाबाद (उ०प्र०) - २११००४

●

संस्करण : प्रथम - ५०० प्रति
२००६ ई.

●

मूल्य : ५०/-

●

कम्प्यूटर कम्पोजिंग :
ज्योति प्रिंटिंग एजेन्सी
कतुआपुरा, विशेश्वरगंज, वाराणसी
मो0 9415991188

●

मुद्रक :
श्री विष्णु प्रेस
कतुआपुरा, वाराणसी
मो0 9839259865

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय वस्तु

2126

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

मेरी अभिलाषा

मेरा जन्म कस्बा टाण्डा मु० चौक हयातगंज, जि० अम्बेडकर नगर में सम्भ्रान्त आर्य-परिवार में संवत् १९९६, फाल्गुन कृष्ण पक्ष चतुर्थी, ३ फरवरी सन् १९३९ में हुआ था। सभी आर्य संस्कार वैदिक रीति से सम्पन्न होते रहे। मेरे दादा पूज्य श्री सुखमंगल प्रसाद जी आर्य कट्टर आर्य विचार के थे उन्हीं की अमिट छाप मुझ पर भी पड़ी। बचपन से ही आर्य समाज में जाने, विद्वानों के सत्संग एवं उनकी घर पर सेवा करने का अवसर बराबर मिलता रहा। भारतवर्ष के प्रायः उच्चकोटि के विद्वानों का आगमन टाण्डा आर्य समाज में होता, चूँकि दादा जी जीवन-पर्यन्त आर्य समाज के उपप्रधान थे और पिता पूज्य श्री केदारनाथ जी आर्य यज्ञ के कार्यों में पूर्ण रुचि रखते थे, वे समय-समय पर पूरे लग्न के साथ यज्ञ सम्पन्न करवाते थे। बुजुर्गों की सम्पत्ति मुझे विरासत में मिली। मैंने कालेज की शिक्षा सिर्फ १२वीं तक ग्रहण की, गुरुकुलीय शिक्षा से वंचित, फिर भी वैदिक साहित्य का पूर्ण अध्ययन करता रहा। विद्वानों का प्रवचन उनका सान्निध्य बराबर मिलता रहा। गृहस्थाश्रम में धर्मपत्नी का सान्निध्य भी प्रेरणास्त्रोत ही रहा, चूँकि वह भी आर्य विचारधारा से ओतप्रोत रहीं। वे काफी मृदुभाषी, धार्मिक गृहकार्य में निपुण हैं। यही मुख्य कारण रहा जो वैदिक साहित्य को पढ़ते हुये मनन करने के पश्चात् लिखने की प्रेरणा मिली। कभी यह नहीं सोचा कि यह पुस्तक का रूप हो जावेगा। कई विद्वानों को दिखाया सबने इसे पुस्तक के रूप में छपवाने की प्रेरणा दी और आशीर्वाद दिया। संयोग से योग्य आचार्य से भेंट हुई और मनोकामना पूर्ण हुई।

परिवार परिचय :- परमात्मा की असीम कृपा से मेरे दो पुत्र और एक पुत्री हैं। बड़े पुत्र स्व० ओम प्रकाश, एम० एस० सी०, जो स्टेट बैंक में कार्यरत थे। पुत्री बिन्दुलता एम० ए० बैंक में कार्यरत अपने पति श्री अनिल कुमार जी वर्मा के साथ हैं। दूसरा पुत्र विजय प्रकाश, एम० ए० बी० एड०,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो लखनऊ सचिवालय में कार्यरत हैं । जीवकोपार्जन हेतु व्यवसाय करना, वैदिक साहित्य अध्ययन, पुस्तकों का संकलन प्रतिदिन घर पर पति-पत्नी की सह संध्या, अग्निहोत्र, स्वाध्याय करना, यह क्रम लगभग ३१ वर्षों से निरन्तर चल रहा है । परमात्मा की कृपा से पूर्ण आत्मिक संतोष, ईश्वर में पूर्ण विश्वास, जिसकी महान् कृपा से मेरा परिवार उन्नति के पथ पर है ।

अंतिम अभिलाषा कवि की वाणी में—

"मुझे तोड़ लेना वन माली, देना उस पथ पर तुम फेंक ।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पथ जायें वीर अनेक ॥"

मानवता का विनम्र सेवक-
वीरेन्द्र कुमार आर्य 'स्वाध्यायी'
आर्य कुटी, हयातगंज, टाण्डा
जि० अम्बेडकर नगर (उ० प्र०)
चल दूरभाष नं० ९८३९९११४१०
इलाहाबाद का नं० ०५३२-२५४५७६८

जयेष्ठ शु० १०, वि.सं. २०६३
गंगा दशहरा
६ जून २००६

पुनश्च- यह मेरा आलेख 'स्वाध्याय सिन्धु' छपने जा ही रहा था कि दैवदुर्वियोग से १५ नवम्बर सन् २००४ को हमारे सुयोग्य बड़े पुत्र **'प्रियवर ओम् प्रकाश'** सड़क मार्ग पर आहत हो गये, उन्हें बचाया नहीं जा सका, दिया बुझ गया और हमारे सभी कार्य अस्त-व्यस्त हो गये ।

प्रभु दया से हमने अपने आप को सँभाला, और आज **पाणिनि कन्या महाविद्यालय** वाराणसी की आचार्या **मेधा देवी** जी के द्वारा पुस्तक का सम्पूर्ण विशुद्ध सम्पादन कर देने से मैं अब सुपुत्र की स्मृति में ही इसे प्रकाशित कर रहा हूँ ।

-वीरेन्द्र

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2126

पीछे खड़े व्यक्ति दाहिने तरफ - स्व० बड़े पुत्र ओम्प्रकाश (पत्नी) सुषमा
पीछे खड़ा पौत्र शिखर बहू के बगल में दामाद
श्री अनिल कुमार पुत्री बिन्दुलता तथा बहू विजलेस
छोटा पुत्र विजयप्रकाश छोटा पौत्र विभु नाती शिवम्
कुर्सी पर बैठे हुए
पत्नी राजकुमारी आर्या वीरेन्द्र कुमार आर्य (स्वाध्यायी)
नातिनी ऋतु कृति पौत्री आंकांक्षा पौत्र वरुण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रियवर सुपुत्र की पुण्य स्मृति में-
ये 'स्वाध्याय-सुमन' अर्पित

स्व० बड़े पुत्र ओम्प्रकाश

जन्म १५ सितम्बर सन् १९५९ मृत्यु १६ नवम्बर सन् २००४
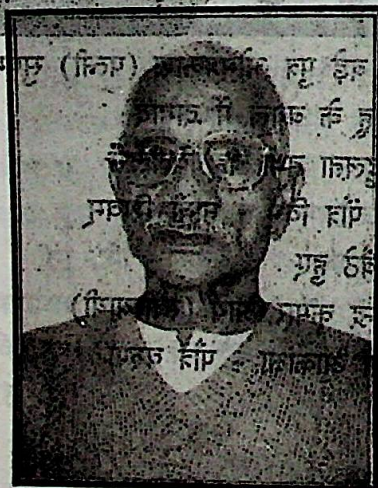
पिता
वीरेन्द्र कुमार आर्य (स्वाध्यायी)

माता
श्रीमती राजकुमारी आर्या

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
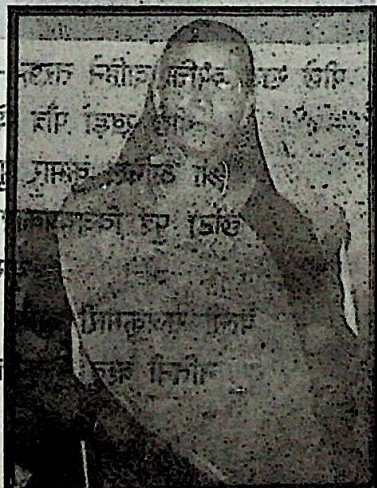
हे मृत्यु !

तू अपने स्वरूप को छुपाती हुई हमारे ही

साथ चारों ओर मँडराती रहती है

पर तुझे हम जान नहीं पाते ।

तुझे जान लेना ही जीवन

की महत्ता है ॥

***

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुभकामना संदेश

हर अच्छे गंतव्य का रास्ता, अच्छी पुस्तकों से होकर गुजरता है, लेखक वीरेन्द्र आर्य जीवन के एक विषम मड़ाव पर लेखन का अति विशिष्ट एवं सराहनीय कार्य किये हैं ।

परिवार एवं कुटुम्ब से ऊपर उठकर कार्य करना एक साधना है । सरल व्यक्तित्व एवं गहन अध्ययन के धनी समीक्षक, वीरेन्द्र आर्य के स्वाध्याय संकलन लेखन को पढ़ा **स्वाध्यायात् मा प्रमदः** से आप्लावित होकर मानव-संस्कृति, संस्कार, समाज, आध्यात्मिक-पूँजी के रक्षार्थ स्वाध्याय-साधना के उपरान्त जटिल से जटिल तत्वों को सरल से सरल सुयोग्य, सार-गर्भित शब्दों में पाठकगण को परोसने का उन्होंने प्रयास किया है ।

यह एक अच्छे आर्य-साधक के रुप में उन्होंने सराहनीय कार्य किया है ।

यह पुस्तक निश्चित रूप से समाज की संस्कृति, संस्कार, समाज, आध्यात्मिक-विचार के रक्षार्थ, मार्गदर्शन का कार्य करेगी । लेखक एक आर्य साधक हैं । इनकी कृति की सफलता की हार्दिक कामना करता हूँ ।

इति शुभम् !

शुभेच्छुक :-

ज्ञानेन्द्र कुमार सिंह

इलाहाबाद (उ०प्र०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिका

शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्राः— हमारे सुधी पाठकगण ! **स्वाध्याय सिंधु** आपके हाथ में है । मुझे अपने लघु जीवन में कई बार यह अनुभव हुआ है कि **"मेरे मन कुछ और है - विधना के कुछ और"** इस बार भी कुछ ऐसा हीं हुआ ।

आर्य समाज गोसाईंगंज (जिला अम्बेडकर नगर) के प्रचार के बाद मुझे आर्य-समाज आरोपुर का कार्यक्रम देना था। अचानक मुझे कार्यक्रम स्थगित होने की सूचना मिली । परिणामस्वरूप अगली प्रचार यात्रा के बीच चार दिन खाली हो गये । मैं आर्य समाज टाण्डा में विश्राम हेतु आ पहुँचा । यहाँ के वरिष्ठ सदस्य श्री वीरेन्द्र कुमार आर्य 'स्वाध्यायी' मुझे पाकर कृतकृत्य हो गये और अतिथि सत्कार हेतु अपने आवास "आर्य कुटी" ले आए । वेद रीति के अनुसार जलपान हुआ । जलपान के बाद सत्संग प्रारम्भ हुआ । 'स्वाध्यायी' जी ने अपने द्वारा लिखी हस्तलिपि दिखाई, जिसे मैं पढ़कर आनन्द की लहरें ले रहा था उसी समय कुटिया की तपस्विनी माता जी (स्वाध्यायी जी की धर्मपत्नी) के मुँह से प्रेरणा निकली कि यदि इसे पुस्तक का रूप मिल जाता...... कई विद्वानों ने देखा सबने यही कहा कि यदि इसे पुस्तक का रूप........बस अक्लमन्द को इशारा काफी ।

मैं माता जी, स्वाध्यायी जी व विद्वानों की अभिलाषा पूर्ण करने का दुःस्साहस कर बैठा । प्रभु का स्मरण कर डायरी लेकर आर्य समाज टाण्डा में आया जुट गया प्रभु कार्य में । तीन दिन की साधना के बाद प्रभु कृपा से हस्तलिपि को पाठ-बद्ध किया । पुस्तक का नामकरण संस्कार करके माता जी, स्वाध्यायी जी, विद्वानों एवं पाठकों को **'स्वाध्याय सिंधु'** समर्पित कर रहा हूँ । मुझे आशा है इस लघु वैदिक साहित्य से आर्य जाति का भला होगा। सबके भला होने पर मेरा भी भला होगा। इन्हीं भावनाओं के साथ आपको यह पुस्तक समर्पित है कि.........

"मेरा मुझमें कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर।
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागत है मोर।।"

विदुषामनुचरः
आचार्य सुरेश चन्द्र जोशी
आर्यावर्त्त साधना सदन
दशहरा बाग, पटेल नगर
बाराबंकी (उ०प्र०)
फोन नं० : 0524-224277

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

स्वाध्याय का सुफल

बात गत सितम्बर माह २००५ ई० की है। इस पुस्तक का पहला प्रूफ लेकर अपने ईश्वर भक्त, स्वाध्यायी भ्राता श्री वीरेन्द्र कुमार जी टाँडा एक दिन सपत्नीक आये, और अपने शान्त-स्थिर-उत्तम जीवन में बीते घोर वज्रपात को सुनाया।

मुझे यह जानकर अत्यधिक दुःख हुआ कि प्रकाशन के व्यय भार की चिन्ता से विमुक्त होकर अपने बड़े सुपुत्र श्री ओम्प्रकाश जी के पास इलाहाबाद में आपने इसे छपने भी दे दिया था कि अचानक कार दुर्घटना में आपके वे ही बड़े सुपुत्र १५ नवम्बर सोमवार सन् २००४ में आहत हो गये और उन्हें बचाया नहीं जा सका। गम्भीर चोट के कारण उनकी धर्मपत्नी-बच्ची भी कई महीने तक चिकित्सालय में भर्ती रहीं। इस दारुण दुःख में स्वर्गीय ओम्प्रकाश जी के माता-पिता ने अपने आपको मात्र ईश्वरभक्ति, दैनिक यज्ञ करने में गहन श्रद्धा, तथा वैदिक ग्रन्थों के स्वाध्याय का अभ्यास होने से ही सँभाला है, इसमें सन्देह नहीं।

शतपथ ब्राह्मण ११.५.७.१ में स्वाध्याय की प्रशंसा करते हुए **'तस्मात् स्वाध्यायः अध्येतव्यः'** इस वाक्य की आवृत्ति की गई है। स्वाध्यायी के लिये वहाँ जो **'युक्तमना भवति, परम-चिकित्सकः आत्मनः भवति'** कहा गया है उसका प्रत्यक्ष प्रमाण आप दोनों की संयमित शान्त वाणी में दिखाई दे रहा था। ज्ञान चर्चा करते हुए 'आपने जीवात्मा के १२ दिन की स्थिति के निरूपण में ऋषि के भाष्य तथा उपनिषद् में विभिन्नता कैसे है' ? यह शंका उपस्थित की। संयोगवश यही सन्देह आर्य पत्रिकाओं में भी छपा था जिसकी अत्युत्तम हृदयग्राही संगति विदुषी पण्डिता सूर्या देवी जी ने अपने 'जीवात्मा के १२ दिन' लेख में कर दी थी, इसके प्रकाशित होने पर तो अनेकों सुयोग्य जनों के प्रशंसापत्र आये कि 'बहुत दिनों की हमारी यह उलझन बहुत सही ढंग से सुलझ गई'।

उस लेख को पढ़कर आप भ्राता श्री वीरेन्द्र कुमार जी इतने गद्गद् हो गये कि वहीं बैठ कर यह कवित्त रच डाला कि-

नदियों में गंगा नदी, ऋतुओं में वसन्त ऋतु
पर्वतों में हिमालय को महान् माना जाता है।
तारों में ध्रुव तारा, ऋषियों में दयानन्द ऋषि
दानों में श्रेष्ठ विद्यादान माना जाता है।।

विद्यादानी, ज्ञानी स्वाभिमानिनी विदुषियों में
एक नाम पूज्या 'प्रज्ञा देवी जी' का आता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्वानों की मण्डली में महान् जिनकी गणना है
शिष्या 'सूर्या देवी' उनकी कितनी सुपण्डिता है ।।

अस्तु । प्रस्तुत 'स्वाध्याय सिन्धु' पुस्तक के परिप्रेक्ष्य में विद्वज्जनों के वे प्रवचन हैं तथा आलेख हैं जिन्हें सुनकर तथा पढ़कर हमारे स्वाध्यायी भ्राता श्री वीरेन्द्र जी ने अपने चिन्तन से यह रूप दिया है- सार संग्रह किया है । एक साधारण गृहस्थ व्यापारी भी अहर्निश ज्ञानपिपासु बनकर कैसे अपना तथा अन्यों का कल्याण करने में सक्षम है यह रचना इन्हीं गुणों की प्रकाशिका है । ऐसी श्रेष्ठ प्रवृत्ति वस्तुतः सराहनीय है ।

पुस्तक सम्पादन की विधा से सर्वथा अपरिचित आपने मुझे इस पुस्तक की जब प्रेस कापी दी तब उसे देखकर उसमें मैंने अतीव श्रम की अपेक्षा अनुभव की । अक्षर अशुद्धि बहुल, अनेकत्र पुनरावृत्ति, सन्दर्भ संख्या रहित प्रमाण लेखन, बहुधा असंगत विपरीतार्थ बोधक वाक्य आदि के अनेकों सुधार इसमें सपरिश्रम अपेक्षित थे । तथापि इस दुःख की घड़ी ने मुझे भावविगलित कर दिया और अपने इस **'श्री जिज्ञासु स्मारक पाणिनि कन्या महाविद्यालय वाराणसी'** के साथ प्रारम्भ से आपका तथा सम्पूर्ण परिवार का जो स्नेह श्रद्धाभाव बना हुआ है उसे मैं तिरोहित नहीं कर सकी और कार्य सम्पादित करने का मैंने निश्चय कर लिया ।

पुस्तक को पूरा पढ़ कर शुद्ध करने में प्रिय सूर्या जी ने बहुत समय लगा कर श्रम किया है । आपने सभी न्यूनताओं को दृष्टिगत किया, मेरे समक्ष उपस्थित किया, और अन्तिम पूरा प्रूफ स्वयं देखकर अत्यावश्यक संशोधन बड़ी मेहनत से मैंने किये हैं ।

कैसा दुःखद संयोग है कि जिसे स्वर्गीय श्री ओम्प्रकाश जी अपने पूज्य पिता जी को उत्साहित-निश्चिन्त करके मुद्रण कराने में तत्पर थे आज उन्हीं की स्मृति में अब यह 'स्वाध्याय-सिन्धु' पुस्तक पाठकों के हाथ में जा रही है ।

वाराणसी स्थित श्री विष्णु प्रेस के मालिक भैया राजू जी से वार्तालाप हमने किया । और जहाँ तक हो लागत कम करके इसे उन्होंने छापा है, और हमारे भ्राता श्री वीरेन्द्र कुमार जी की पुत्रवधू ने हिम्मत करके मुद्रण का भार कथमपि वहन किया है एतदर्थ सभी धन्यवाद के पात्र हैं । परमात्मा आपकी आत्मा में सुख प्रदान करे । आप दोनों माता-पिता का शेष जीवन भी स्थिर-शान्त प्रभुभक्त व्यतीत हो, यही उस देवाधिदेव से मेरी प्रार्थना है ।

अनिर्वेदेन दीर्घेण, निश्चयेन ध्रुवेण च ।
देवदेवप्रसादाच्च, क्षिप्रं फलमवाप्यते ।।

मंगलाभिलाषिणी - मेधा देवी
आचार्या पाणिनि कन्या महाविद्यालय
वाराणसी - १० (उ०प्र०)

आषाढ गुरु पूर्णिमा, वि.सं.२०६३
११.७.०६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ।।

ऋग्वेद ५-८२-५ यजुर्वेद ३०-३।।

अर्थ :- हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता ! समग्र ऐश्वर्ययुक्त परमेश्वर! आप हमारे सम्पूर्ण दुःखों को दूर कीजिए । जो कल्याणकारक पदार्थ हैं उन्हें प्राप्त कराइए ।

प्रार्थना विषय

जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो नि दहाति वेदः।
स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः।।

ऋ० १।९९।१।।

व्याख्यान- हे "**जातवेदः**" परब्रह्मन्/आप जातवेद हो, उत्पन्न मात्र सब जगत् को जानने वाले हो, सर्वत्र प्राप्त हो। जो विद्वानों से ज्ञात सबमें विद्यमान (जात अर्थात् प्रादुर्भूत अनन्त धनवान्-अनन्त ज्ञानवान् हो, इससे आपका नाम जातवेद है) उन आपके लिए "**वयं, सोमं, सुनवाम**" जितने सोम प्रिय गुण विशिष्टादि हमारे पदार्थ हैं, वे सब अर्पित हैं। सो आप हे कृपालो! "**अरातीयतः**" दुष्ट शत्रु जो हम धर्मात्माओं का विरोधी है उसके "**वेदः**" धनैश्वर्यादि का "**नि दहाति**" नित्य दहन करो, जिससे वह दुष्टता को छोड़ के श्रेष्ठता को स्वीकार करे तथा "**नः**" हमको "**दुर्गाणि, विश्वा**" सम्पूर्ण दुस्सह दुःखों से '**पर्षदति**' पार करके आप नित्य सुख को प्राप्त कराइये । "**नावेव, सिन्धुम्**" जैसे अति कठिन नदी व समुद्र से पार होने के लिए नौका होती है। "**दुरितात्यग्निः**" वैसे ही हमको सब पापजनित अत्यन्त पीड़ाओं से पृथक् (भिन्न) करके संसार में और मुक्ति में भी परमसुख को शीघ्र प्राप्त कराइये ।

ओ३म् शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभि स्त्रवन्तु नः।।

ऋक्० १०।९।४ यजु० ३६।१२ अथर्व० १/६/१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शम् = कल्याणकारी **नः** = हमारे लिए **देवीः** = सर्व प्रकाशक, दिव्य गुण विशिष्ट **अभिष्टये** = अभीष्ट आनन्द की प्राप्ति के लिए **आपः** = सर्वव्यापक, सर्वानन्दप्रद, ईश्वर **भवन्तु** = हों, **पीतये** = पूर्ण आनन्द के भोग से तृप्त होने के लिए **शंयोः** = (शम्) कल्याण की **अभिस्रवन्तु** = चारों ओर से वृष्टि करें, **नः** = हमारे लिए ।

भावार्थ- सबका प्रकाशक, सबको आनन्द देने वाला और सर्वव्यापक ईश्वर, मनोवाञ्छित आनन्द के लिए और पूर्ण आनन्द के लिए, हमको कल्याणकारी हो, अर्थात् हमारा कल्याण करे । वही परमेश्वर हम पर सुख और कल्याण की सब ओर से वृष्टि करे ।

न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते । न पञ्चमो न षष्ठः सप्तमो नाप्युच्यते नाऽष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते ।।

(अथर्व० १३।४।१६-१८।)

शब्दार्थ- न दूसरा, न तीसरा, न चौथा ही कहा जाता है। न पाँचवाँ, न छठा, न सातवाँ कहा जाता है। न आठवाँ न नवाँ न दसवाँ ही कहा जाता है ।

भावार्थ- परमात्मा एक है, उससे भिन्न कोई भी दूसरा, तीसरा, चौथा आदि नहीं है। उस एक की ही उपासना करनी चाहिए। वही परमात्मा सच्चिदानन्द, सर्वव्यापक, एक रस है, उसकी उपासना करने से ही मुक्ति धाम को पुरुष प्राप्त हो सकता है। **अतः परमात्मा एक है ।**

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गायत्री महामन्त्र

ऋक्० ३।६२।१० यजु० ३-३५।३०-२ साम० उ० ६/३/१०
३१-७।३६-३ १३।३।३

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् ।।

अर्थ- हे प्राण पवित्रता आनन्द के देने वाले प्रभो ! आप सर्वज्ञ सकल जगत् के उत्पादक हैं। हम आपके पाप-ताप विनाशक विज्ञान स्वरूप का ध्यान करते हैं, जो अति श्रेष्ठ है, आपको वरते हैं, आप हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित कीजिए।

ओ३म्- सर्वरक्षक परमात्मा, **भूः**-प्राणों से प्रिय, **भुवः**-दुःख विनाशक, **स्वः**-सुख स्वरूप है, **तत्**-उस, **सवितुः**-उत्पादक, प्रेरक, प्रकाशक, **वरेण्यम्**-वरने योग्य, **भर्गः**-विशुद्ध ज्ञान स्वरूप, **देवस्य**-देव का, **धीमहि**-हम ध्यान करते हैं, **धियः**-बुद्धियों को, **यः**-जो, **नः**-हमारी, **प्रचोदयात्**-शुभ कार्यों में प्रेरित करे ।

गायत्री छन्द

(यजु० ३।३५, २२।९, ३०।२ में आये तत्सवितुः० मन्त्र का छन्द 'गायत्री' है । गायत्री छन्द २४ अक्षर का होता है, पर मन्त्र में २३ अक्षर हैं। उन २४ अक्षरों की पूर्ति 'इयादिपूरणः' (छन्दः शास्त्र ३.२) पिंगल सूत्रानुसार होती है, अर्थात् 'वरेण्यम्' में य् को इय् कर देते हैं ।

इस प्रकार २४ अक्षर ऐसे गिनेंगे -

१. तत्	७. णि	१३. स्य	१९. यः
२. स	८. यम्	१४. धी	२०. नः
३. वि	९. भर्	१५. म	२१. प्र
४. तुर्	१०. गः	१६. हि	२२. चो
५. व	११. दे	१७. धि	२३. द
६. रे	१२. व	१८. यः	२४. यात्

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३६।३ में महाव्याहृति पूर्वक भूर्भुवः स्वः० मन्त्र का 'स्वराट् गायत्री' छन्द है। 'स्वराट् गायत्री' छन्द में २६ अक्षर होते हैं उसमें १ अक्षर अधिक यानि २७ अक्षर होने पर भी वह 'स्वराट् गायत्री' छन्द ही कहाता है। इस प्रकार ३६।३ में २७ अक्षर हैं- तथा 'प्रायोऽर्थो वृत्तमित्येते पादज्ञानस्य हेतवः' (ऋग्प्राति० १७।२५,२६) 'प्रकरण, अन्वय, गुरु लघु की स्थिति ये ३ पाद ज्ञान के हेतु होते हैं' इस वचनानुसार इसमें ३ पाद हैं। यथा-

भूर्भुवः स्वः तत् सवितुः	प्रथम पाद ८ अक्षर
वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि	द्वितीय पाद ११ अक्षर
धियो यो नः प्रचोदयात्	तृतीय पाद ८ अक्षर
	कुलयोग २७ अक्षर)

सम्पा०।।

ओ३म् स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्। मह्यं दत्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्।।
(अथर्व० १९।७१।१)

अर्थ- ईश्वर उपदेश देता है कि हे मनुष्यो! इष्ट फल देने वाली ज्ञानमयी देववाणी मेरे द्वारा प्रशंसित की गई है। हे विद्वान् लोगो! यह वेदवाणी द्विजों को पवित्र करने वाली है। आयु, प्राण, सुप्रजा, गौ आदि पशु, कीर्ति, धन और वेदाभ्यास के तेज को देने वाली है। इस मंत्र का देवता गायत्री है। द्विजों को पवित्र करने वाली, वर देने वाली, गायत्री की मैंने स्तुति की है, उसका विस्तार, प्रचार करो। वह आयु, स्वास्थ्य, प्रजा, संतान, पशु, कीर्ति, यश, धन और ब्रह्मतेज, मुझको देकर ब्रह्मलोक में पहुँचाती है।

ओ३म् त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्।।
(ऋक्० ७।५९।१२, यजुः०३।६०)

अर्थ- हम लोग पुण्य रूप यश युक्त, आत्मा और शरीर के बल को बढ़ाने वाले, तीनों कालों के ज्ञाता परमपिता परमेश्वर की नित्य अच्छी प्रकार उपासना करें। जैसे लता से जुड़ा हुआ खरबूजा पककर अमृत होकर स्वतः

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेल से छूट जाता है वैसे ही हे परमेश्वर ! हम यशस्वी जीवन वाले होकर जीवन-मरण के बन्धन से छूटकर आपकी महान् कृपा से मोक्ष को प्राप्त करें।

ओ३म् त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुतः ।।

(यजुः० ३।६०)

भावार्थ- मनुष्य लोग परमात्मा को छोड़कर किसी की उपासना न करें, क्योंकि वेद से अविहित और दुःख रूप फल होने से परमात्मा से भिन्न दूसरे किसी की उपासना न करनी चाहिए। कभी नास्तिक पक्ष को लेकर परमात्मा का अनादर भी न करें, जैसे व्यवहार के सुखों के लिए अन्न, जल आदि की इच्छा करते हैं, वैसे ही हम लोग ईश्वर, वेद, वेदोक्त धर्म और मुक्त होने के लिए निरन्तर श्रद्धा करें।

अर्थ- हे प्रभो! उत्तम गन्धयुक्त रक्षक स्वामी सबके अध्यक्ष ! हम आपका निरन्तर ध्यान करें। लता के बंधन से छूटें, पके अमृत रूप खरबूजे के तुल्य इस शरीर से छूट जावें परन्तु मोक्ष और अन्य जन्म के सुख और सत्य धर्म के फल से कभी न छूटें।

इस मंत्र में उपमा अलंकार है।

त्वं हि नः पिता वसो, त्वं माता शतक्रतो बभूविथ ।
अधा ते सुम्नमीमहे ।।

(ऋक्० ८।९८।११, अथर्व० २०।१०८।२, सामवेद उत्तरार्ध ८।२)

अर्थ- हे सर्वव्यापक प्रभो ! आप ही हमारे पिता तथा माता हो। तुम्हीं ने कृपा करके इस सृष्टि की रचना की है। आपने ही विश्व के सभी प्राणियों की भलाई के लिए अनेक वस्तुओं का सृजन किया है। हम सब आपकी महान् कृपा और अनुग्रह प्राप्त करने के लिए आपसे प्रार्थना करते हैं। विश्व के सभी मनुष्य परस्पर एक ही कुटुम्ब के सदस्य हैं। हम सभी पर आप अपनी कृपा की अमृत-वर्षा सदैव किया करें।

ओम् आपो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा ।

अर्थ- सर्वरक्षक ओ३म् सर्वव्यापक, ज्योतिस्वरूप, आनन्द प्रदाता, अमृत रूप, सबसे बड़ा सर्वाधार, दुःख-विनाशक और सुखस्वरूप है, ऐसे परमेश्वर के लिए यह सुन्दर आहुति समर्पित है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म् यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।।
तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ।।

(यजु० ३२।१४)

अर्थ- हे प्रकाश स्वरूप प्रभो ! जिस मेधा बुद्धि धन की कामना विद्वान् जन तथा पितर = माननीय रक्षक महात्माजन करते व प्राप्त होते हैं, उस बुद्धि धन से हे ज्ञान स्वरूप परमेश्वर ! मुझको मेधावी बनाइए, यह मेरी वाणी सत्य होवे।

ओम् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ।।

(यजु० ४०/१६७)

हे स्वप्रकाश, ज्ञानस्वरूप, सब जगत् के प्रकाश करने वाले सकल सुखदाता परमेश्वर! आप जैसे सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं, कृपा करके हम लोगों को विज्ञान व राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए अच्छे धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञान और उत्तम कर्म प्राप्त कराइए और हमसे कुटिलतायुक्त पाप रूप कर्म को दूर कीजिए। इस कारण हम लोग आपकी बहुत प्रकार की स्तुति रूप नम्रतापूर्वक प्रशंसा सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें।

ओ३म्

चत्वारि शृङ्गा त्रयोऽअस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासोऽअस्य ।
त्रिधा बद्धो बृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यां २ऽ आविवेश ।।

(यजु० १७।९१)

पदार्थः- हे मनुष्यो ! तुम जिस (अस्य) इसके (त्रयः) प्रातः सवन, माध्यन्दिन सवन और सायं सवन ये तीन (पादाः) प्राप्ति के साधन (चत्वारि) चार वेद (शृङ्गाः) सींग (द्वे) दो (शीर्षे) अस्तकाल और उदयकाल सिर व जिस (अस्य) इसके (सप्त, हस्तासः) गायत्री आदि छन्द सात हाथ हैं वा जो (त्रिधा) मन्त्र ब्राह्मण और कल्प इन तीन प्रकारों से (बद्धः) बंधा हुआ (महः) बड़ा (देवः) प्राप्त करने योग्य (वृषभः) सुखों को सब ओर से वर्षाने वाला यज्ञ (रोरवीति) प्रातः, मध्य और सायं सवन क्रम से शब्द करता हुआ (मर्त्यान्) मनुष्यों को (आ, विवेश) अच्छे प्रकार प्रवेश करता है, उसका अनुष्ठान करके सुखी होओ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीय पक्षः- हे मनुष्यो ! तुम जिस (अस्य) इसके (त्रयः) भूत, भविष्यत् और वर्तमान तीन काल (पादाः) पग (चत्वारि) नाम आख्यात उपसर्ग और निपात चार (शृङ्गाः) सींग (द्वे) दो (शीर्षे) नित्य और कार्य शब्द सिर व जिस (अस्य) इसके (सप्त, हस्तासः) प्रथमा आदि सात विभक्ति सात हाथ वा जो (त्रिधा, बद्धः) हृदय, कण्ठ और शिर इन तीन स्थानों में बँधा हुआ (महः) बड़ा (देवः) शुद्ध अशुद्ध का प्रकाशक (वृषभः) सुखों का वर्षाने वाला शब्दशास्त्र (रोरवीति) ऋक् यजुः साम और अथर्ववेद से शब्द करता हुआ (मर्त्यान्) मनुष्यों को (आ, विवेश) प्रवेश करता है, उसका अभ्यास करके विद्वान् होओ।

भावार्थः- इस मन्त्र में उभयोक्ति अर्थात् उपमान के न्यूनाधिक धर्मों के कथन से रूपक और श्लेषालङ्कार है। जो मनुष्य यज्ञविद्या और शब्दविद्या को जानते हैं वे महाशय विद्वान् होते हैं।

मूल स्तुति

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ।।

(यजु० ३१।१८)

व्याख्यान – सहस्रशीर्षादि विशेषणोक्त पुरुष सर्वत्र परिपूर्ण है, उस पुरुष को मैं जानता हूँ। अर्थात् सब मनुष्यों को उचित है कि उस परमात्मा को अवश्य जानें, उसको कभी न भूलें, अन्य किसी को ईश्वर न जानें। वह कैसा महान् है कि **'महान्तम्'** बड़ों से भी बड़ा उससे बड़ा व तुल्य कोई नहीं है। **'आदित्यवर्णम्'** आदित्य का रचने वाला प्रकाशक वही एक परमात्मा है तथा वह सदा स्वप्रकाश स्वरूप ही है, किंच **'तमसः परस्तात्'** तम जो अन्धकार, अविद्यादि दोष उससे रहित ही है तथा स्वभक्त, धर्मात्मा, सत्यप्रेमी जनों को भी अविद्यादि दोष रहित सद्यः करने वाला वही परमात्मा है। विद्वानों का ऐसा निश्चय है कि परब्रह्म के ज्ञान और उसकी कृपा के बिना कोई जीव कभी सुखी नहीं होता। **'तमेव विदित्वा०'** उस परमात्मा को जान के ही जीव मृत्यु का उल्लङ्घन कर सकता है अन्यथा नहीं, क्योंकि **'नाऽन्यः, पन्था विद्यतेऽयनाय'** बिना परमेश्वर की भक्ति और उसके ज्ञान के मुक्ति का मार्ग कोई नहीं है, ऐसी परमात्मा की दृढ़ आज्ञा है। सब मनुष्यों को इसे मानना चाहिए और सब पाखण्ड और जञ्जाल छोड़ देना चाहिए।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भावार्थ— उस परम पुरुष को जाने बिना, प्रकृति के इस अंधकार से परे जो आदित्य के समान सूर्यों के सूर्य महासूर्य के समान चमकता है-उसको पाये बिना, उसकी शरण में जाए बिना, मृत्यु से, दुःखों से, कष्टों से, क्लेशों से, निर्धनता, रोग, पराजय, निरादर, आपदाओं और बार-बार जन्म और मरण के चक्कर से बचने का कोई मार्ग है ही नहीं ।

विनय— मैं उस महान् पुरुष को जानता हूँ, जो कि सब संसार में परिपूर्ण हो रहा है, जो इतना महान् है कि ये सब चराचर सृष्टियाँ और ये सब ब्रह्माण्ड उसके एक अंश में स्थित हैं । वह परिपूर्ण पुरुष है । वह सब तरह महान् है । मैं उसे देख रहा हूँ, अनुभव कर रहा हूँ । वह अपने प्रकाश स्वरूप में अपने उज्ज्वल ज्योर्तिमय रूप में सदा सर्वत्र परिपूर्ण हो रहा है, सदा सर्वत्र भासित हो रहा है । वह तम से सर्वथा परे है । अज्ञान-अन्धकार उस विशुद्ध ज्योति को, उस पवित्र प्रकाश को छू तक नहीं सकते । इस संसार में यदि किसी वस्तु से उसके स्वरूप का प्रति निर्देश किया जा सकता है तो इस जाज्वल्यमान आदित्य को देख लो । वह आदित्य-वर्ण है, प्रचंड उज्ज्वल स्वयं प्रकाश रूप है । हे मनुष्यो! तुम उसे देखो, उसे जानो, उसे ही जानकर मनुष्य मृत्यु का अतिक्रमण कर सकता है । हे मृत्यु से मारे हुए मनुष्यो ! हे नाना क्लेशों से सताये हुए संसारियों, तुम उसे क्यों नहीं देखते ? उसे देख लेने पर संसार के अन्य क्लेश तो क्या मृत्यु का महाक्लेश भी मिट जाता है । उसे देखकर मनुष्य अमर और अभय हो जाता है । इसलिए यदि तुम सभी प्रकार के दुःख भय से पार होना चाहते हो, इन क्लेशों बन्धनों से छुटकारा पाना चाहते हो, तो तुम उस व्यापक प्रभु को जानो, उस आदित्य वर्ण को पहचानो । सुख-शान्ति की अभीष्ट स्थिति में पहुँचने के लिए, छुटकारे का महान् सुख प्राप्त करने के लिए, अपने परम धाम (मोक्ष) को पाने के लिए उस प्रभु को जानने के सिवा और कोई रास्ता नहीं है । उस पूर्ण पुरुष को देख लेने के सिवाय और कोई मार्ग नहीं है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर का वैदिक स्वरूप

ईश्वर, जीव, प्रकृति ये तीन अनादि सत्तायें हैं। अनादि अर्थात् जिसका आदि न हो, तो इनका भी कोई आदि नहीं है, क्योंकि ये प्रवाह से ही नित्य हैं। जब कोई वस्तु उत्पन्न हो जाती है तभी साथ ही साथ उसका आदि भी उत्पन्न हो जाता है, किन्तु ये तीनों सत्तायें कभी भी उत्पन्न नहीं होती हैं, अतः उनके आदि का प्रश्न भी उपस्थित नहीं होता है, इसीलिए ये अनादि हैं। ईश्वर ने प्रकृति को लेकर अपने अनन्त ज्ञान तथा सामर्थ्य से इस सृष्टि की रचना की। जिसमें प्रकृति **'उपादान कारण'** है तथा ईश्वर **'निमित्त कारण'**।

जिस प्रकार एक योग्य राजा अपने राज्य तथा प्रजा के कल्याण हेतु न्याय व्यवस्था, दण्ड व्यवस्था इत्यादि भिन्न-भिन्न व्यवस्थायें करता है, उनके लिए नियम बनाता है, जिससे उसकी शासन व्यवस्था ठीक ढंग से संचालित हो सके। ठीक उसी प्रकार राजाओं के राजा उस सम्राट् परमात्मा ने अपनी प्रजा के कल्याणार्थ इस सृष्टि को न्यायपूर्वक नियम में चलाने के लिए सृष्टि के आदि में संविधान के रूप में चारों वेदों की उत्पत्ति की। ऐसा संसार का कल्याण चाहने वाला कैसा परमात्मा है वह? उसका क्या स्वरूप है? क्या आकारवान् है? इसका उत्तर यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय का आठवाँ मंत्र है-

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविर ꣳ शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः॥

(यजु० ४०।८)

वह परमेश्वर (**कविः**) सबका जानने वाला (**मनीषी**) सबके मन का साक्षी (**परिभूः**) सबके ऊपर विराजमान (**स्वयंभूः**) और स्वयं उत्पन्न होने वाला अनादि स्वरूप है (**सपर्यगात्**) इसीलिए सर्वत्र व्यापक (**शुक्रम्**) अत्यन्त पराक्रम वाला (**अकायम्**) शरीर से रहित (**अव्रणम्**) कटना, पिटना, घाव आदि से रहित (**अस्नाविरम्**) नाड़ी आदि बंधनों से रहित (**शुद्धम्**) सब दोषों से पृथक् और (**अपापविद्धम्**) सब पापों से न्यारा है, ऐसे उस परमेश्वर ने (**शाश्वतीभ्यः समाभ्यः**) सृष्टि के आदि में समस्त प्रजाओं के कल्याण हेतु (**अर्थान् व्यदधात्**) सत्य अर्थों का उपदेश किया।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इससे सिद्ध हुआ कि वह परमेश्वर अकाय, अव्रण, अस्नाविर है अर्थात् निराकार है ।

इसी विषय में अथर्ववेद का मन्त्र है-

बालादेकमणीयस्कमुतैकं नैव दृश्यते

(अथर्व० १०।८।२५)

वह एक आत्मा एक बाल से भी अधिक सूक्ष्म है तथा वह एक परमात्मा जो कि दिखाई नहीं देता है अर्थात् निराकार है । परमात्मा सच्चिदानन्द स्वरूप है, उसमें सत्, चित्, आनन्द तीनों का समावेश है । हाथ, पैर इत्यादि अवयवों से रहित परमात्मा की कोई प्रतिमा नहीं है ।

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः

(यजु० ३२।३)

इस मन्त्र से स्पष्ट हुआ कि परमात्मा की कोई मूर्ति नहीं वह निराकार है । परमात्मा के स्वरूप के विषय में अथर्ववेद में कहा है कि-

स्वर्यस्य च केवलम्

(अथर्व० १०।८।१)

वह परमात्मा केवल सुख स्वरूप है क्योंकि वह सच्चिदानन्दादि लक्षणों से युक्त है । वह कभी भी जन्म-मरण के बंधन में नहीं आता । अविद्यादि क्लेशों से पृथक् है और अनन्त ज्ञान का भंडार है । परमात्मा सर्वव्यापक है तथा वह सृष्टि के कण-कण में रमा हुआ है ।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत् किञ्च जगत्यां जगत्

(यजु० ४०।१)

इस संसार में सर्वत्र उस परमात्मा का वास है ।

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदुः

(ऋक्० १।१६४।३९)

यहाँ प्रश्न किया कि **(ऋचो अक्षरे)** वह अविनाशी सबसे श्रेष्ठ आकाशवत् व्यापक सर्वत्र वास करने वाला परमेश्वर जो चारों वेदों का प्रतिपाद्य है वह ब्रह्म क्या वस्तु है ? उत्तर मिला कि **(यस्मिन् विश्वे देवाः-अधि निषेदुः)** जिसमें सम्पूर्ण विद्वान् सब इन्द्रियाँ, सब मनुष्य तथा सूर्यादि लोक स्थित हैं वह परमेश्वर कहलाता है । और फिर पुनः परमात्मा स्वयं अथर्ववेद में कहते हैं-

---

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहमेव वात इव प्र वाम्यारभमाणा भुवनानि विश्वा ।
परो दिवा पर एना पृथिव्यैतावती महिम्ना सं बभूव ।।

अथर्व० ४।३०।८।।

मैं ही सब लोकों को छूता हुआ शक्ति वाले पवन के समान चलता रहता हूँ, प्रतीत होता हूँ। सूर्यलोक से परे इस पृथ्वी से भी परे वर्तमान होकर इतनी बड़ी शक्ति को अपनी महिमा से प्राप्त हुआ हूँ। इससे स्पष्ट हुआ कि परमेश्वर शक्ति स्वरूप है। इस प्रकार परमात्मा सृष्टि में निवास करता है, किन्तु अजन्मा होकर तथा पाप रहित बनकर। परमात्मा का स्वरूप स्पष्ट करने के लिए वेद मंत्रों में विभिन्न प्रकार का वर्णन मिलता है। गायत्री छन्द का सुप्रसिद्ध मंत्र- **भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्**

(यजु० ३६।३)

इसमें ईश्वर को प्राणों का प्राण, दुःख विनाशक, सुख स्वरूप कहा है। सविता विशेषण से वह जगदुत्पादक है यह स्पष्ट हुआ।

तस्माद् यज्ञात्सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ।।

(यजु० ३१।७)

परमात्मा के द्वारा ही वेदोत्पत्ति हुई है, इस कथन की पुष्टि में यह मंत्र है। जो सूर्य, चन्द्रमा, तारे, विद्युत् आदि का प्रकाशक है। जिसकी आज्ञा के बिना वृक्ष का एक पत्ता भी नहीं हिल सकता, अन्य कार्यों की बात ही क्या ?

उस प्रसिद्ध स्वामी की इस सृष्टि में कई लोग सत्ता नहीं मानते हैं और वेदों की भी निन्दा करते हैं। उन मूढ़ मनुष्यों के लिए ही मनु महाराज ने स्पष्ट कहा है- "**नास्तिको वेदनिन्दकः** मनु० १।१३०" ऐसे पथ भ्रष्ट मानवों को परमात्मा अपना न्याय स्वरूप दिखाता है, उन्हें उनके दुष्ट कर्मों का फल देता है अपने न्याय रूपी दण्ड से उन्हें रुलाता है, अतएव वह रुद्र है। इस प्रकार अपने विभिन्न गुणों तथा स्वरूपों के कारण परमेश्वर अनेक नामों से जाना जाता है। जैसे- **शिव, बृहस्पति, महेश, विष्णु, आदित्य, प्राज्ञ, वरुण, सविता,** किन्तु अज्ञान में डूबे अपने स्वार्थ में मग्न लोगों ने इन्हीं नामों को लेकर अपने अलग-अलग ईश्वर बना लिए और इनके निवास स्थान भी निश्चित कर दिए। इसी संदर्भ में किसी कवि ने कहा-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमले कमला शेते हरः शेते हिमालये ।
क्षीराब्धौ च हरिः शेते मन्ये मत्कुणशंकया ।।

कमला अर्थात् लक्ष्मी जी कमल में सोती हैं **हरः** अर्थात् शिव जी हिमालय में सोते हैं और क्षीर सागर में विष्णु जी सोते हैं ।

इससे स्पष्ट हुआ कि इनके ईश्वर एकदेशी हैं किन्तु वेदों में वर्णित ईश्वर तो सर्वव्यापक है । विष्णु अर्थात्-

वेवेष्टि व्याप्नोति चराऽचरं जगत् स विष्णुः

जो चराचर जगत् में व्याप्त है वह विष्णु हैं और जो कल्याण करने वाला है वह शिव है । अब जो एकदेशी परमेश्वर है उसके द्वारा सबका कल्याण करना कैसे सम्भव हो सकता है, किन्तु इसे सर्वव्यापक मानने पर यह असम्भव नहीं हो सकता है ।

इसी प्रकार पौराणिक पंडितों ने वेद मंत्रों के अर्थों को अपने स्वार्थ सिद्धि में जनमानस तक पहुँचाया । उदाहरण हेतु यजुर्वेद का मंत्र प्रस्तुत है-

गणानां त्वा गणपतिं हवामहे

(यजु० २३।१९)

अर्थ – (गणानां त्वा गणपतिम्) जो परमात्मा गणनीय पदार्थों का पालन करने वाला है उसका हम सब **(हवामहे)** आह्वान करते हैं, उसे ग्रहण करते हैं। **इसी मंत्र में गणपति का अर्थ घोड़ा किया पौराणिक पंडित महीधर ने।** जो गणों का स्वामी है वह है गणपति अर्थात् परमेश्वर जो निराकार है । महीधर की दृष्टि में घोड़ा कौन से गण का स्वामी है और वह किसका पालन करता है ? किन्तु ये निज स्वार्थ सिद्धि के लिए लगाये गये आडम्बरपूर्ण अर्थ हैं। वस्तुतः परमात्मा ही इस सम्पूर्ण सृष्टि का स्वामी है गणपति है, जो अत्यन्त कुशलतापूर्वक इसका संचालन कर रहा है । इस प्रकार परमात्मा अनन्त ज्ञान-विज्ञान से भरपूर है । उसका वेद ज्ञान असीम है । ऐसे परमात्मा के लिए अथर्ववेद का निम्न मंत्र प्रस्तुत है-

तेनार्हति ब्रह्मणा स्पर्धितुं कः

(अथर्व० १९।२३।३०)

उस परमात्मा से स्पर्धा करने में कौन समर्थ है अर्थात् कोई नहीं । इसलिए ईश्वर को प्राप्त करने हेतु उसका स्वरूप जानने के लिए वेद ज्ञान प्राप्त करना होगा, तभी ईश्वर के सच्चे निराकार स्वरूप का दर्शन होगा ।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदों में ज्ञान-विज्ञान पर महर्षि दयानन्द का दार्शनिक चिन्तन

आज के युग में जब कि विज्ञान अपनी चरम सीमा पर है, केवल श्रद्धा और मान्यता के आधार पर किसी भी बात को सत्य मानने के लिए आज का शिक्षित वर्ग तैयार नहीं है । वह हर बात को विज्ञान की कसौटी पर परखना चाहता है। ऋषि दयानन्द के आगमन से पूर्व देश विदेश में मनुष्य जाति परम्परागत मान्यताओं और अन्धविश्वासों के जाल में फंसकर नाना प्रकार के दुःखों से पीड़ित थी । यदि यह कहा जाए कि ज्ञान-विज्ञान की सूक्ष्म दृष्टि वर्तमान युग को ऋषि दयानन्द ने वेदों के आधार पर बताई तो यह बात पूर्ण सत्य है । ऋषि के आगमन से पूर्व ज्ञान-विज्ञान की दो स्थिति थीं । एक तरफ तो कुछ वर्ग अन्धविश्वास में फंसकर अज्ञान के अंधकार पूर्ण मार्ग में फंसे हुए थे, तो दूसरी ओर आधुनिक वैज्ञानिक वर्ग ईश्वरीय सत्ता में ही विश्वास नहीं करता था । इन दोनों की स्थितियों में पूर्व और पश्चिम का अंतर था, फिर भी यथार्थ ज्ञान से दूर दोनों की अज्ञानता की स्थिति विपरीत दिशा में होते हुए भी एक समान थी । एक वर्ग रेत को शक्कर मान रहा था तो दूसरा वर्ग शक्कर के अस्तित्व को इन्कार कर रहा था । एक का आधार भावना थी और दूसरे का आधार भ्रान्त धारणा थी । ऋषि दयानन्द ने दोनों वर्गों को तलाशकर ज्ञान-विज्ञान की नई दिशा प्रदान की, किन्तु इसके साथ यह बात भी उतनी ही कटु सत्य है कि ऋषि दयानन्द ने कोई नई बात या सिद्धान्त संसार के सामने प्रस्तुत नहीं किया, अपितु ब्रह्मा से लेकर जैमिनि और व्यास पर्यन्त प्राचीन ऋषियों ने जिन सिद्धान्तों का बोध कराया था, उन्हीं सिद्धान्तों और मान्यताओं को अपनी शैली में बतलाया । ऋषि ने हमें एक ऐसी दृष्टि प्रदान की जिससे हम आत्मा-परमात्मा और प्रकृति का दर्शन कर सकें । महर्षि दयानन्द की दिव्य दृष्टि संसार के उस बिन्दु पर जाकर स्थिर हो जाती है जो इस स्थूल जगत् से भी परे एक परम सूक्ष्म शक्ति है, जो इस सृष्टि का निमित्त कारण व कर्त्ता है । ज्ञान के क्षेत्र में बढ़ते-बढ़ते सम्वत् १८९० की शिवरात्रि घटना से लेकर अलखनन्दा की बर्फीली घाटी और घने जंगलों में भटकते हुए अंत में मथुरा में गुरु

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरजानन्द जी के द्वार पर पहुँचकर उनकी वह दिव्य दृष्टि उसी वेद पर जाकर स्थिर हो जाती है, जिस वेद के एक भाग यजुर्वेद को शिवरात्रि की घटना से दो वर्ष पूर्व ही वे कंठस्थ कर चुके थे । इसी वेद ज्ञान के प्रचार व प्रसार में महर्षि ने अपना जीवन समर्पित कर दिया । इस समर्पण के पीछे पूज्य गुरु श्री विरजानन्द दण्डी का वह उद्बोधन कार्य करता रहा जिसे गुरु दक्षिणा के रूप में दण्डी स्वामी ने अपने होनहार शिष्य से माँगा था । एक सर्वव्यापक, निराकार अनादि ईश्वर और दूसरा ज्ञान-विज्ञान का आदि स्रोत नित्य ज्ञान, ये दो ही सार थे जिसे महर्षि ने यथार्थ रूप में जाना और विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया । आपने इसी तत्व ज्ञान को आर्य समाज के पहले और तीसरे नियम में नींव के रूप में प्रस्तुत किया ।

"सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है" । तथा **"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है । वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है ।"** आर्य समाज संस्था के लिए यह एक नियम है, पर वास्तव में ऋषि का ये विश्वव्यापी उद्घोष है-कि सब सत्य विद्या या ज्ञान का दाता परमेश्वर है अन्य दूसरा कोई हो नहीं सकता है । इससे स्पष्ट है कि महर्षि की दृष्टि में वेद ईश्वरीय ज्ञान है । वेद अपौरुषेय है यह अटल सत्य है । स्वामी जी ने नम्र निवेदन किया-गुरुदेव, यह सेवक अपने मन सहित तन को आपके चरणों में अर्पित किए हुए है श्रीमुख से जो भी आदेश होगा उसे शिरोधार्य करूँगा, आजीवन निभाऊँगा, गुरु महाराज आज्ञा दीजिए । अपने प्यारे शिष्य का प्रोत्साहन पूर्ण वाक्य सुनकर विरजानन्द जी का रोम-रोम हर्षित हो गया । उनके हृदय में शिष्य स्नेह का स्रोत प्रबलता से प्रवाहित होने लगा, उन्होंने पुनः आशीर्वादपूर्वक कहा-वत्स ! भारत देश में दीन-हीन जन अनेक दुःख पा रहे हैं, जाओ उनका उद्धार करो । मतमतान्तरों के कारण जो कुरीतियाँ प्रचलित हो गई हैं उनका निवारण करो । आर्य जनता की बिगड़ी हुई दशा को सुधारो । आर्य सन्तान का उपकार करो । ऋषि शैली प्रचलित करके वैदिक ग्रन्थों के पठन-पाठन में लोगों को प्रवृत्तिशील बनाओ । गंगा-यमुना के निरन्तर गतिशील प्रवाह की भाँति लोकहित कामना से क्रियात्मक जीवन बिताओ, प्रिय पुत्र ! गुरु दक्षिणा में यही वस्तु मुझे दान करो, अन्य किसी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

सांसारिक वस्तु की मुझे चाह नहीं है । गुरु जी के इस आदेश को शिरोधार्य कर महर्षि दयानन्द ने वेद की वीणा इस युग में झंकृत कर दी, जिस स्वर के सामने संसार के सारे स्वर बेसुर प्रतीत होते हैं । स्वामी दयानन्द जी के सम्पूर्ण दर्शन का आधार है **'वेद और ईश्वर'**। एक साधन है तो दूसरा साध्य। महर्षि के वेद संबंधी मान्यताओं से उन लोगों की आँखें खुल गईं जो 'वेदों' को गड़रिये के गीत बतलाते थे । आज विश्व का वैज्ञानिक वर्ग भी ऋषि के अद्भुत ज्ञान की ओर आकृष्ट हो रहा है । महर्षि जहाँ वेद ज्ञान को 'नित्य और ईश्वरीय' ज्ञान मानते हैं, वहाँ वे वेद को ही ज्ञान का आदि-स्रोत भी मानते हैं । क्योंकि आज भी हम देखते हैं कि हमें ज्ञान तभी प्राप्त होता है जब हम किसी से ज्ञान प्राप्त करते हैं। किसी से ज्ञान प्राप्त किए बिना, किसी से बिना सुने या बिना देखे, हमें किसी भी प्रकार का ज्ञान प्राप्त नहीं होता है । महर्षि ने स्पष्ट लिखा है कि 'अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा' इन चार शरीरधारी पुरुषों को क्रमशः सृष्टि के आदि में 'ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद' का प्रकाश परमात्मा द्वारा मिला, वह प्रकाश इनके ज्ञान के बीच में हुआ था । ये चार महर्षि मंत्रों के रचयिता नहीं, अपितु प्रकट करने वाले वक्ता मात्र थे । इन वेदों का प्रकाशक तो स्वयं परमात्मा ही है। गायत्र्यादि छन्दों की रचना ईश्वरकृत है । शास्त्रों के आधार पर कलियुग की गणना चार लाख बत्तीस हजार वर्ष होती है । कलियुग से दुगुना द्वापर, कलियुग से तिगुना त्रेता और कलियुग से चौगुना सतयुग होता है । इन चारों को मिलाकर एक चतुर्युगी कहाती है । ऐसे इकहत्तर चतुर्युगियों का एक मनु या मन्वन्तर कहाता है और चौदह मन्वन्तरों का एक कल्प या एक ब्रह्म दिन कहाता है, जिसे एक सृष्टि काल कहते हैं या एक हजार चतुर्युगियों का एक ब्रह्म दिन कहता है ।

महर्षि दयानन्द वेद में तीन प्रकार की विद्या मानते हैं, या वेद में तीन मुख्य विषय हैं, वे हैं- **'ज्ञान, कर्म, उपासना'**। सम्पूर्ण ऋग्वेद हमें सृष्टि के पदार्थों का और प्रभु के स्वरूप का ज्ञान कराता है, इसीलिए ऋग्वेद ज्ञानकाण्ड का वेद है। यजुर्वेद कर्मकाण्ड का, सामवेद उपासना काण्ड का और अथर्ववेद में विज्ञान का भंडार है । ज्ञान, कर्म, उपासना विषयक दृष्टि से वेद तीन भी माने जाते हैं, इसी से इसको 'वेदत्रयी' कहते हैं । ज्ञानपूर्वक श्रेष्ठ कर्म करते हुए प्राणी उपासना करे तो प्रभु दर्शन व मोक्ष रूपी लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षि द्वारा वेद मंत्रों की गणना निम्न है-

ऋग्वेद मंत्र संख्या - १०५८९ इसमें दस मंडल हैं ।

यजुर्वेद मंत्र संख्या - १९७५ इसमें चालीस अध्याय हैं ।

सामवेद मंत्र संख्या - १८७३ इसमें २ आर्चिक हैं ।

अथर्ववेद मंत्र संख्या - ५९७७ इसमें बीस काण्ड हैं ।

कुल मंत्रों की संख्या २०४१४ है ।

स्वामी दयानन्द वेद को ही ईश्वरीय ज्ञान होने से स्वतः प्रमाण मानते हैं और जितने भी ग्रन्थ हैं, शास्त्र हैं वे वेदोक्त होने से परतः प्रमाण माने जाते हैं। किसी भी ग्रन्थ में जो बात वेदानुकूल है उसे मानना चाहिए और जो वेद विरुद्ध बाते हैं उसे छोड़ने में सर्वदा अग्रसर रहना चाहिए । महर्षि की मान्यता के अनुसार वेद केवल हमारे धर्म ग्रन्थ ही नहीं हैं, अपितु सम्पूर्ण ज्ञान व विद्या की पुस्तक हैं । इसी से ऋषि ने स्पष्ट कर दिया कि- **'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है ।'** इस प्रकार वेद को केवल धर्म पुस्तक कहना योग्य नहीं अपितु वेद ज्ञान की पुस्तक है । वेद जब ज्ञान की पुस्तक है तो वह मानव-मात्र अर्थात् स्त्री-पुरुष बिना भेदभाव के वेद का पठन-पाठन अवश्य करें । महर्षि दयानन्द की सम्पूर्ण मान्यतायें ज्ञान-विज्ञान की कसौटी पर सत्य सिद्ध होती हैं, जिन्हें कोई ज्ञान के आधार पर चुनौती नहीं दे सकता ।

वैदिक मान्यताओं का संक्षेप में वर्णन निम्न है-

१. वेद ईश्वरीय ज्ञान है ।
२. वेद ज्ञान नित्य है ।
३. वेद ही ज्ञान का आदि स्रोत है ।
४. वेद हर सृष्टि के आदि में श्वासवत् प्रकट होते हैं और प्रलय में श्वासवत् प्रभु के सामर्थ्य में लीन रहते हैं ।
५. सृष्टि के आदि में परम पुण्यात्माओं को वेद का ज्ञान मिलता है, उनके क्रमशः 'अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा' उपाधि नाम होते हैं ।
६. वेद में सब सत्य विद्यायें समाविष्ट हैं और वह मूल रूप में या बीज रूप में हैं ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. वेद चार ही हैं । परिशिष्ट वेद नहीं है और ब्राह्मण-ग्रन्थों की गणना वेदों में नहीं हो सकती है ।
८. ज्ञान कर्म उपासना एवं विज्ञान क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, तथा अथर्ववेद के मुख्यतया अपने-अपने विषय हैं । वैसे प्रत्येक वेद में चारों ही विषय हैं ।
९. वेद के शब्दों का अर्थ यौगिक प्रक्रिया से ही करना चाहिए ।
१०. ऋषि मंत्रों के द्रष्टा होते हैं स्रष्टा नहीं ।
११. देवता मंत्र के प्रतिपाद्य विषय को कहते हैं ।
१२. वेद को धर्म पुस्तक न कहकर ज्ञान की पुस्तक कहना पूर्ण सत्य है ।
१३. वेद स्वतः प्रमाण हैं ।
१४. वेदोत्पत्ति हुए १,९६,०८,५३,१०७ एक अरब छियानबे करोड़ आठ लाख तिरपन हजार एक सौ सात वर्ष चल रहा है ।

(यह गणना सन् २००६ तक है, पुनः नवसंवत्सर पर बदल जावेगी ।)

१. यह सृष्टि संवत् संख्या बीते सन्धि कालों की संख्या को घटाने पर बनती है । उसको जोड़ने पर १,९७,२९,४९,१०७ यह सृष्टि संवत् संख्या बनेगी ।

एक कल्प के १४ मन्वन्तरों में १५ सन्धिकाल होते हैं । १३ सन्धिकाल - १४ मन्वन्तरों के बीच में आते हैं । एक सन्धिकाल प्रथम मन्वन्तर के पूर्व आता है और एक सन्धिकाल प्रथम मन्वन्तर के पश्चात् आता है । इस प्रकार १५ सन्धिकाल हुए । एक सन्धिकाल का समय १७,२८,००० है । इसमें १५ सन्धियों का गुणा करने पर पूरी संख्या २,५९,२०,०० हुई । अब इसमें से सृष्टि की भोग्य सन्धियों १,३८,२४,००० का यह समय घटा देने पर १,२०,९६,००० समय बनेगा । इसको बीते सन्धिकाल से युक्त सृष्टि संवत् संख्या १,९७,२९,४९,१०७ से घटाने पर १९६०८५३१०७ निकल आयेगा । तात्पर्य हुआ कि यह प्रतिपादित सृष्टि संवत् संख्या सन्धि काल गणना की संख्या से रहित संख्या दर्शाई है । ॥सम्पा०॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेद और नारी

हमारे देश में अज्ञानता से नारी जाति को नीचा दिखाकर उसकी बहुत ही दुर्दशा की गई है, किन्तु इतिहास उठाकर देखें जहाँ नारी का गौरवपूर्ण स्थान रहा है । सुप्रसिद्ध समाज-सुधारक महर्षि दयानन्द सरस्वती के हम ऋणी हैं कि उन्होंने हमारे भूले हुए स्वाभिमान को याद दिलाया । नकली धर्माचार्यों की **"स्त्रीशूद्रौ नाधीयाताम् इति श्रुतिः"** जैसी कपोलकल्पित उक्तियों का सप्रमाण उत्तर दिया । आश्चर्य होता है **'श्री शंकराचार्य'** जैसे विद्वानों पर, कि जिन्होंने **'द्वारं किमेकम् नरकस्य नारी'** कहकर नारियों को नरक का द्वार बताया । लेकिन ऋग्वेद का प्रमाण है-

देवीर्द्वारो वि श्रायध्वम् सुप्रायणा न ऊतये ।
प्र प्र यज्ञं पृणीतन ।।

(५।५।५)

अर्थ– हे मनुष्यो ! तुम **(सुप्रायणाः)** भली प्रकार गृहों में प्रवेश करो तथा **(द्वारः)** द्वारों के समान सुख देने वाली उत्तम **(देवीः)** दिव्य नारियों का **(नः ऊतये)** हम सबकी = समाज की रक्षा के लिए **(वि श्रायध्वम्)** विशेष रूप से आश्रयण करो एवं **(यज्ञम्)** गृहस्थाश्रम रूपी यज्ञ को **(प्र प्र पृणीतन)** पुष्ट करो। इस प्रकार से इस वेद मंत्र में नारी को सुख का द्वार बताया गया है ।

संत तुलसीदास जी ने तो **'ढोल गँवार शूद्र पशु नारी, ये सब ताडन के अधिकारी'** कहकर वेद पढ़ने के अधिकार की चर्चा न कर नारी को ताडन का ही अधिकारी बताया, जबकि यजुर्वेद के २६वें अध्याय के दूसरे मंत्र में स्पष्ट कहा है कि-

यथेमां वाचं कल्याणीम् आवदानि जनेभ्यः ।
ब्रह्मराजन्याभ्या ँ शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय ।।

अर्थ– ईश्वर ने उपदेश दिया कि **(यथा)** जैसे मैं **(जनेभ्यः)** सब मनुष्यों के लिए **(इमाम्)** इस **(कल्याणीम्)** कल्याण अर्थात् संसार को मुक्ति के सुख को देने हारी **(वाचम्)** ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का **(आवदानि)** उपदेश करता हूँ वैसे तुम भी किया करो तथा **(ब्रह्मराजन्याभ्याम्)** ब्राह्मण, क्षत्रिय, **(अर्य्याय)** वैश्य **(शूद्राय)** शूद्र और **(स्वाय)** अपने भृत्य व स्त्री आदि **(अरणाय)** और अति शूद्रादि के लिए भी यह वेदों का प्रकाश किया है ।

इससे यह सिद्ध हुआ कि परमात्मा ने कल्याणी वेदवाणी का उपदेश

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समस्त मानवमात्र को, संसार की सम्पूर्ण जनता को चाहे वह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, स्त्री-पुरुष कोई भी हो सबको दिया है, जिससे सभी विज्ञान को बढ़ाकर दुःखों से छूटकर आनन्द को प्राप्त होवें। इसी प्रकार अथर्ववेद ११।६।१८ मंत्र में जहाँ **'ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्'** कहकर ब्रह्मचर्य के सेवन से अर्थात् ब्रह्म नाम वेदादि शास्त्रों को पढ़ कर उत्तम शिक्षा को प्राप्त करके कन्या तदनुरूप पति को प्राप्त हो ऐसा बताया गया है वहाँ कन्या को सुस्पष्ट ब्रह्मचर्य के पालन के लिए वेद पढ़ने के लिए कहा गया है और भी श्रौतग्रन्थों में- **इमं मन्त्रं पत्नी पठेत्** ऐसा आज्ञा देकर पत्नी से ही मंत्रों को बुलवाया है। कहीं भी यह नहीं कहा गया है कि स्त्रियाँ वेद न पढ़ें या व्यक्ति विशेष ही पढ़े। परमपिता परमात्मा ने तो सम्पूर्ण जगत् को वेदादि ग्रन्थों को पढ़ने का आदेश दिया है तथा अग्निहोत्रादि अनुष्ठान की आज्ञा दी है। **पञ्चजना मम होत्रं जुषध्वम्** (ऋक्० १०।५३।४) चारों वर्ण तथा अन्य सभी इस अग्निहोत्रादि का प्रीतिपूर्वक अनुष्ठान करें। तैत्तिरीय ब्राह्मण में कहा- **अयज्ञो वा एष यो अपत्नीकः** पत्नी के बिना यज्ञ करना न करने के समान होता है। इन प्रमाणों से स्पष्ट है नारी वेदमन्त्रों का उच्चारण, उनका पाठ स्वाध्याय, उपदेश सब कर सकती है।

स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ (ऋक्० ८।३३।१९)

इस मंत्र के पाठ से तो नारी यज्ञ की ब्रह्मा बन सकती है, जो यज्ञ का सर्वोच्च स्थान है। जब तक नारी वेद का पठन, पाठन न करेगी तो कैसे यज्ञ में इस उच्च स्थान को प्राप्त करेगी। भविष्य पुराण में भी सब आश्रमों से श्रेष्ठ गृहस्थाश्रम को तथा गृहस्थ में घर को एवं घर में भी नारियों को सबसे श्रेष्ठ माना है। यजुर्वेद के २३वें अध्याय के ३६-३७वें मंत्र का तो देवता ही स्त्री है। वेदों के अनेक मंत्रों में नारी को **"पुरन्धि, काम्या, कुलायिनी, उरुधारा, चतुष्कपर्दा"** आदि नामों से सम्बोधित किया है। यजुर्वेद के १५।३ मंत्र में नारी को **"स्तोमपृष्ठा"** विशेषण से विभूषित किया है।

स्तोमाः पृष्ठा अर्थात् ज्ञापयितुम् इष्टा यस्याः सा स्तोमपृष्ठा

इन मंत्रों से पता लगा कि स्त्री को वेद मंत्रों को जानना चाहिए। उसे वेद पढ़ने का अधिकार है। प्राचीन समय में नारियाँ राजा-महाराजाओं के साथ शास्त्रार्थ करती थीं। राजा जनक के दरबार में याज्ञवल्क्य, मैत्रेयी, गार्गी संवाद प्रसिद्ध है। विचार करें जो आँख, कान, नाक, मस्तिष्क, बुद्धि नर में हैं वे ही परमात्मा ने नारियों को भी दिये हैं, फिर परमात्मा की वेद वाणी का ज्ञानवर्धन पुरुष करें तो नारियाँ क्यों वंचित की जावें ?

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेद में त्रैतवाद, सामान्य ज्ञान, मूर्ति-पूजा निषेध

१. 'ओ३म्' शब्द में तीन अक्षर हैं- (अ + उ + म्)
२. 'ओ३म्' शब्द में मध्य में ३ का अंक लिखते हैं।
३. 'ओ३म्' शब्द के तीनों अक्षर त्रिलोकात्मक ऋग्, यजुः, साम के द्योतक है।
४. वेदों की रचनाएँ भी तीन प्रकार की हैं। ऋक्, साम और यजुः अर्थात् पद्यात्मक, गद्यात्मक तथा गानात्मक।
५. 'गायत्री' एवं 'वैदिक' शब्द भी तीन अक्षरों से संयुक्त हैं।
६. शान्ति पाठ के अन्त में शान्तिः शब्द भी तीन बार बोला जाता है।
७. विवाह आदि शुभ कर्मों में 'विष्टरो, विष्टरो, विष्टरः' 'पाद्यम्, पाद्यम्, पाद्यम्' अर्घः, अर्घः, अर्घः तथा आचमनीयम्, आचमनीयम्, आचमनीयम् ये वचन तीन-तीन बार बोले जाते हैं।
८. निरुक्तकार मुख्यतया तीन देवता मानते हैं-अग्नि, वायु, आदित्य।
९. सवन तीन माने गये हैं-प्रातः सवन, माध्यन्दिन सवन, तृतीय सवन।
१०. अग्नि तीन माने गये हैं-गार्हपत्य, आहवनीय, दक्षिणाग्नि।
११. यज्ञोपवीत तीन सूत्रों का होता है।
१२. शास्त्रीय ऋण तीन प्रकार के हैं-ऋषिऋण, देवऋण, पितृऋण।
१३. गुरु तीन माने गये हैं-माता, पिता, आचार्य।
१४. सांख्य शास्त्र में तीन प्रकार के दुःख गिनाये गये हैं-आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक अर्थात् दैहिक, दैविक, भौतिक दुःख।
१५. सांख्य दर्शन में तीन प्रकार के पदार्थ व तीन ही गुण कहे गये हैं- सत्व, रजस् और तमस्।
१६. अनादि पदार्थ तीन ही होते हैं-ईश्वर, जीव, प्रकृति।
१७. हिन्दी व्याकरण में तीन काल- वर्तमान, भूत, भविष्यत् तथा तीन वचन- एकवचन, द्विवचन, बहुवचन और तीन पुरुष-प्रथम, मध्यम व उत्तम माने गये हैं।
१८. मानव जीवन की तीन अवस्थायें होती हैं-बाल्यावस्था, यौवनावस्था एवं वृद्धावस्था।
१९. शिक्षा के क्षेत्र में भी तीन श्रेणियां होती हैं-प्रथम, द्वितीय व तृतीय।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०. युद्ध क्षेत्र में तीन सेवायें कार्यरत हैं-थल सेना, जल सेना, वायु सेना।
२१. वायु के तीन गुण होते हैं-मन्द, सुगन्ध, शीतल ।
२२. कर्म तीन प्रकार के होते हैं-संचित, प्रारब्ध,क्रियमाण ।
२३. शारीरिक कष्ट, दोष तीन होते हैं-वात, पित्त, कफ ।
२४. बल तीन होते हैं-तन, मन, धन ।
२५. परशुराम, श्रीराम, बलराम तीन रामाख्य हैं ।

वेदों के बारे में सामान्य ज्ञान

१. वेद विश्व का सबसे प्राचीन धर्म-ग्रन्थ है ।
२. वेद का अर्थ है-ईश्वरीय ज्ञान ।
३. सृष्टि प्रारम्भ हुए १,९६,०८,५३,१०७ (यह गणना सन् २००६ तक होगी) वर्ष हो गये हैं तभी विश्व को मानव के कल्याण हेतु परमात्मा ने ज्ञान का प्रकाश वेदों के रूप में दिया था । (इस विषय पर पृ० १७ भी देखें ।)
४. वेद चार हैं-ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद ।
५. परमात्मा ने सृष्टि के आदि में जिन चार लोगों के कर्म सर्वश्रेष्ठ थे उनको समाधि अवस्था में अग्नि ऋषि को ऋग्वेद, वायु ऋषि को यजुर्वेद, आदित्य ऋषि को सामवेद और अंगिरा ऋषि को अथर्ववेद का ज्ञान दिया था ।
६. ऋग्वेद में ज्ञानकाण्ड, यजुर्वेद में कर्मकाण्ड, सामवेद में उपासना काण्ड एवं अथर्ववेद में विज्ञान काण्ड है ।
७. मानव मात्र के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के लिए आवश्यक सारा ज्ञान-विज्ञान वेदों में बीज रूप में विद्यमान है ।
८. चारों वेदों का विवरण निम्न है- (अ) ऋग्वेद में १० मंडल, ८ अष्टक, ६४ अध्याय, ८५ अनुवाक, १०२५ सूक्त २०२४ वर्ग तथा १०५८९ मंत्र हैं ।
   (ब) यजुर्वेद में ४० अध्याय तथा १९७५ मंत्र हैं ।
   (स) सामवेद के दो भाग हैं-पूर्वार्धं तथा उत्तरार्ध इसमें २२ अध्याय तथा१८७३ मंत्र हैं ।
   (द) अथर्ववेद में २० काण्ड २४ प्रपाठक, १११ अनुवाक, ७०८ सूक्त, ७३० वर्ग तथा ५९७७ मंत्र हैं ।
९. वेदों में इस प्रकार कुल २०४१४ मंत्र हैं ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. चारों वेदों के चार उपवेद हैं । ऋग्वेद का आयुर्वेद, यजुर्वेद का धनुर्वेद, सामवेद का गन्धर्ववेद और अथर्ववेद का अर्थवेद (शिल्प विद्या) इसमें विज्ञान भी है ।

११. चारों वेदों के चार ब्राह्मण ग्रन्थ हैं । ऋग्वेद का ऐतरेय, यजुर्वेद का शतपथ, सामवेद का साम ब्राह्मण और अथर्ववेद का गोपथ । ये वेदों के व्याख्या ग्रन्थ हैं । इनसे वेदों की विस्तृत जानकारी मिलती है । इन्हें पुराण भी कहते हैं, यही सच्चे पुराण हैं जो पढ़ने योग्य हैं ।

१२. वेदों के छः अंग हैं जिन्हें वेदांग कहते हैं-शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द तथा ज्योतिष । इन्हें छः शास्त्र भी कहते हैं ।

१३. वेदों के छः उपांग हैं-न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा तथा वेदान्त इन्हें छः दर्शन भी कहते हैं ।

१४. वेदों की बारह शाखाएँ हैं । ऋग्वेद की शाकल, वाष्कल । यजुर्वेद की काण्व, माध्यन्दिनी, तैत्तिरीय संहिता, काठक, मैत्रायणी । सामवेद की कौथुमी, जैमिनीय, राणायनीय व अथर्ववेद की शौनक और पैप्पलाद ।

१५. छठे उपांग-वेदान्त दर्शन को अच्छी प्रकार समझने के लिए उससे पहले ग्यारह प्रामाणिक ऋषियों के बनाये हुए उपनिषदों से ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है । ग्यारह उपनिषद् निम्न हैं-ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक, श्वेताश्वतर ।

१६. कुल ४७ धर्म ग्रन्थों के बाद रामायण, श्रीमद् भगवत् गीता एवं महाभारत का क्रम आता है जो कि मूलतः धर्मग्रन्थ न होकर इतिहास ग्रन्थ हैं ।

१७. यदि गम्भीरता से विचारा जाए तो सम्पूर्ण संसार में धर्म ग्रन्थ केवल 'वेद' ही है, क्योंकि उसी में जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त सब प्रकार की आवश्यक विद्याओं का प्रकाश है ।

१८. महाभारत युद्ध के पश्चात् आज से लगभग तीन हजार वर्ष के भीतर अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं । इन ग्रन्थों में लौकिक इतिहास एवं मिथ्या कल्पनाओं और प्रक्षेपों की भरमार है । इन्हें धर्मग्रन्थ नहीं कहा जा सकता है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९. वेदों में ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता माना है, उसी की उपासना का निर्देश है । यह आर्य समाज का दूसरा नियम भी है । उपासना किसी अन्य देवी-देवता की नहीं होनी चाहिए ।

२०. वेदों के अनुसार ईश्वर अवतार नहीं लेता, अर्थात् कभी भी शरीर धारण नहीं करता है ।

२१. जीव और ईश्वर (ब्रह्म) एक नहीं है, बल्कि दोनों अलग-अलग सत्तायें हैं और प्रकृति इन दोनों से अलग तीसरा तत्व है । ये तीनों अनादि हैं, इसे त्रैतवाद कहा जाता है ।

२२. हरिद्वार, काशी, अयोध्या, मथुरा आदि तीर्थ नहीं हैं । तीर्थ तो विद्या का अध्ययन, यम नियमों का पालन योगाभ्यास व सत्संग आदि है ।

२३. भूत प्रेत, डाकिनी आदि के प्रचलित स्वरूप को वेदों में स्वीकार नहीं किया जाता है । यह सब मिथ्या व कल्पना मात्र है । स्वर्ग और नरक किसी स्थान विशेष में नहीं होते हैं, जहाँ विशेष सुख है वहाँ स्वर्ग है और जहाँ विशेष दुःख है वही नरक है ।

२४. स्वर्ग के कोई अलग से देवता नहीं होते हैं । माता, पिता, आचार्य, विद्वान् तथा पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु आदि ही स्वर्ग के देवता हैं ।

२५. राम, कृष्ण, शिव, ब्रह्मा, विष्णु आदि महापुरुष थे, न कि ईश्वर या ईश्वर के अवतार ।

२६. जो मनुष्य जैसा शुभ या अशुभ कर्म करता है उसको वैसा ही सुख या दुःख रूप फल अवश्य मिलता है । ईश्वर किसी भी मनुष्य के पाप को किसी परिस्थिति में क्षमा नहीं करता है ।

२७. मनुष्य मात्र को वेद पढ़ने का अधिकार है चाहे वह स्त्री हो या शूद्र ।

२८. गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर मानव समाज को चार भागों में बाँटा जाता है जिन्हें चार वर्ण भी कहते हैं । वे हैं-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२९. व्यक्तिगत जीवन को भी चार भागों में बाँटा गया है, इन्हें आश्रम कहते हैं । २५ वर्ष की अवस्था तक ब्रह्मचर्य आश्रम, ५० वर्ष की अवस्था तक गृहस्थाश्रम, ७५ वर्ष तक की अवस्था तक वानप्रस्थाश्रम और उससे आगे संन्यास आश्रम माना गया है । व्यक्ति के ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम की कोई जाति नहीं होती है ।

३०. जन्म से कोई भी व्यक्ति ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र नहीं होता । वह अपने गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर ब्राह्मणादि कहलाते हैं ।

३१. वैदिक धर्म पुर्नजन्म को मानता है । अच्छे कर्म अधिक करने पर अगले जन्म में मनुष्य का शरीर और बुरे कर्म अधिक करने पर पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि का शरीर मिलता है ।

३२. गंगा, यमुना आदि नदियों में स्नान करने से पाप नहीं छूटते । वेद के अनुसार उत्तम कर्म करने से मनुष्य भविष्य में पाप करने से बच सकता है, किंतु किए गए कर्मों के फल से नहीं बच सकता है ।

३३. जीवित माता, पिता, आचार्य, विद्वान् आदि की सेवा करना ही सच्चा श्राद्ध कहलाता है । मृत पितरों के नाम ब्राह्मणों को दिया हुआ भोजन, वस्त्र, धनादि मृत पितरों को नहीं मिलता ।

चारों वेदों में मूर्ति पूजा का निषेध है

१. साकार में मन स्थिर कभी नहीं हो सकता क्योंकि उसको मन झट ग्रहण करके उसी के एक-एक अवयव में घूमता और दूसरे में दौड़ जाता है। और निराकार अनन्त परमात्मा के ग्रहण में यावत्सामर्थ्य मन अत्यन्त दौड़ता है तो भी अन्त नहीं पाता निरवयव होने से चंचल भी नहीं रहता, किन्तु उसी के गुण-कर्म-स्वभाव का विचार करता-करता आनन्द में मग्न होकर स्थिर हो जाता है। और जो साकार में स्थिर होता तो सब जगत् का मन स्थिर हो जाता, क्योंकि जगत् में मनुष्य, स्त्री, पुत्र, धन, मित्र आदि साकार में फँसा रहता है। परन्तु किसी का मन स्थिर तो नहीं होता जब तक निराकार में न लगावें, और निरवयव होने से उसमें मन स्थिर हो जाता है, इसलिए मूर्तिपूजा करना अधर्म है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

२. उसमें करोड़ों रुपये मन्दिरों में व्यय करके दरिद्र होते हैं और उसमें प्रमाद होता है ।

३. स्त्री-पुरुषों का मन्दिरों में मेला होने से व्यभिचार, लड़ाई, बखेड़ा और रोगादि उत्पन्न होते हैं ।

४. उसी को धर्म, अर्थ, काम, मुक्ति का साधन मान के पुरुषार्थ रहित होकर मनुष्य जन्म व्यर्थ गंवाता है ।

५. नाना प्रकार की विरुद्ध स्वरूप नाम चरित्रयुक्त मूर्तियों के पुजारियों का ऐक्यमत नष्ट होके विरुद्ध मत में चलकर आपस में फूट बढ़ा के देश का नाश करते हैं ।

६. उसी के भरोसे में शत्रु का पराजय और अपना विजय मान बैठे रहते हैं। उनका पराजय होकर राज्य स्वातन्त्र्य और धन का सुख उनके शत्रुओं के स्वाधीन होता है और आप पराधीन भठियारे के टट्टू और कुम्हार के गदहे के समान शत्रुओं के वश में होकर अनेक-विधि दुःख पाते हैं ।

७. जब कोई किसी को कहे कि हम तेरे बैठने के आसन व नाम पर पत्थर धरें तो जैसे वह उस पर क्रोधित होकर मारता व गाली प्रदान देता है। वैसे ही जो परमेश्वर के उपासना के स्थान हृदय और नाम पर पाषाणादि मूर्तियाँ धरते हैं उन दुष्टबुद्धि वालों का सत्यानाश परमेश्वर क्यों न करे।

८. भ्रान्त होकर मन्दिर-मन्दिर देश देशान्तर में घूमते-घूमते दुःख पाते, धर्म संसार और परमार्थ का काम नष्ट करते, चोर आदि से पीड़ित होते ठगों से ठगाते रहते हैं ।

९. दुष्ट पुजारियों को धन देते हैं । वे उस धन को वेश्या, परस्त्रीगमन, मद्य, मांसाहार, लड़ाई-बखेड़ों में व्यय करते हैं । जिससे दाता के सुख का मूल नष्ट होकर दुःख होता है ।

१०. माता-पिता आदि माननीयों का अपमान कर पाषाणादि मूर्तियों का मान करके कृतघ्न हो जाते हैं ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. उन मूर्तियों को कोई तोड़ देता या चुरा लेता तो हाय तोबा करके रोते हैं।
१२. पुजारी परस्त्रियों के संग और पुजारिन परपुरुषों के संग से प्रायः दूषित होकर स्त्री-पुरुष के प्रेम के आनन्द को हाथ से खो बैठते हैं ।
१३. स्वामी सेवक की आज्ञा का पालन यथावत् न होने से परस्पर विरुद्ध भाव होकर नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं ।
१४. जड़ का ध्यान करने वाले का आत्मा भी जड़ बुद्धि हो जाता है क्योंकि ध्येय का जड़त्व धर्म अन्तःकरण द्वारा आत्मा में अवश्य आता है ।
१५. परमेश्वर ने सुगन्धि युक्त पुष्पादि पदार्थ वायु जल के दुर्गन्ध निवारण और आरोग्यता के लिए बनाये हैं । उनको पुजारी जी तोड़ताड़ कर न जाने उन पुष्पों की कितने दिन तक सुगन्धि आकाश में चढ़कर वायु, जल की शुद्धि करता और पूर्ण सुगन्धि के समय तक उसका सुगन्ध होता, उसका नाश मध्य में ही कर देते हैं । पुष्पादि कींच के साथ मिल, सड़कर उल्टा दुर्गन्ध उत्पन्न करते हैं । क्या परमात्मा ने पत्थर पर चढ़ाने के लिए पुष्पादि सुगन्धियुक्त पदार्थ रचे हैं ?
१६. पत्थर पर चढ़े हुए पुष्प, चन्दन और अक्षत आदि सबका जल और मृत्तिका के संयोग होने से मोरी व कुण्ड में आकर सड़के इतना उससे दुर्गन्ध आकाश में चढ़ता है कि जितना मनुष्य के मल का और सहस्र जीव उसमें पड़ते उसी में मरते और सड़ते हैं । ऐसे-ऐसे अनेक मूर्तिपूजा के करने में दोष आते हैं । इसलिए सर्वथा पाषाणादि मूर्तिपूजा सज्जन लोगों को त्यक्तव्य है और जिन्होंने पाषाणमय मूर्ति की पूजा की है या करते हैं और करेंगे वे पूर्वोक्त दोषों से न बचे, न बचते हैं और न बचेंगे ।

(सत्यार्थ प्रकाश ११वाँ समुल्लास)

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर प्राप्ति का मार्ग

एक साधारण मनुष्य ईश्वर को इसलिए नहीं जान पाता या विश्वास नहीं कर पाता, कारण वह ईश्वर को इसी आँखों से देखना चाहता है, जबकि ईश्वर आँखों से देखने का विषय नहीं है। यह तो आत्मा का, परमात्मा को जो उसके पास ही हृदय में बैठा है उसकी अनुभूति करने का है। ईश्वर निराकार है, उसकी कोई आकृति नहीं है। इसलिए इन आँखों से देखने का कोई सवाल ही नहीं उठता है।

सपर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविर ꣳ शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः॥

(यजु० ४०।८)

अर्थ— वह परमेश्वर सबका जानने वाला, सबके मन का साथी, सबके ऊपर विराजमान और स्वयं उत्पन्न होने वाला अनादि स्वरूप है, इसीलिए सर्वत्र व्यापक अत्यन्त पराक्रमी नस नाड़ियों के बंधन से रहित, कटना-पिटना, घाव आदि से रहित सब दोषों से पृथक्, सब पापों से न्यारा है। ऐसे उस परमेश्वर ने सृष्टि के आदि में समस्त प्रजाओं के कल्याण हेतु सत्य अर्थों का उपदेश किया। इससे सिद्ध हुआ कि वह परमेश्वर अकाय, अव्रण, अस्नाविर, निराकार है।

ईश्वर ने मनुष्य को सब किस्म के ज्ञान प्राप्ति के लिए पांच ज्ञानेन्द्रियाँ दी हैं जो पाँच विषयों का ज्ञान व अनुभव कराती हैं। वे पाँच इन्द्रियाँ हैं- **आँख, कान, नाक, जिह्वा और त्वचा**। इनके पाँच ही विषय हैं क्रमशः **रूप, शब्द, गन्ध, रस तथा स्पर्श।** और इनके पाँच ही देवता है जिनसे यह इन्द्रियाँ शक्ति ग्रहण करती हैं। वे हैं क्रमशः **अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी और आकाश**। आँख रूप देखने का काम करती है इसका देवता **अग्नि** है। जहाँ अग्नि होगी वहीं आप आँखों से रूप देख सकते हैं। **सूर्य, चन्द्रमा, दीपक, बिजली** आदि अग्नि के ही रूप हैं। इसी प्रकार **कान** का विषय है **शब्द** और देवता है **आकाश यानी शून्य स्थान**। जहाँ खाली जगह होगी वहीं चोट मारने से शब्द सुनाई देगा जैसे खाली टीन पीटने से शब्द सुनाई देता है। शब्द को हम कान से ही सुन सकते हैं। यदि शब्द को आँखों से देखना चाहें तो चाहते हुए भी नहीं देख सकते हैं। इसी प्रकार **नाक** का विषय है

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गन्ध और उसका देवता है **पृथ्वी** । हमें जहाँ भी फल, फूल, पत्तों में गन्ध मिलती है, वह पृथ्वी से ही ली हुई होती है । गन्ध को हम नाक से ही जान सकते हैं । आँखों से देखना चाहें तो देख नहीं सकते हैं । इसी तरह **जिह्वा** का विषय है **रस** = स्वाद और उसका देवता है **पानी** । जहाँ आपको स्वाद मालूम होता है या जिस वस्तु को खाने-पीने से हमको स्वाद मालूम होता है तो समझना चाहिए कि पानी से ही प्राप्त हुआ है । फलों में स्वाद, गन्ने में मिठास, नीम में कड़वापन, नींबू में खटास हमें जो महसूस होता है, वह पानी से ही प्राप्त हुआ होता है, यानी वह पानी का ही अलग-अलग **रस** = स्वाद है । हम स्वाद को आँखों से देखना चाहें तो देख नहीं सकते हैं । जहाँ हमें **स्पर्श** से सुख मिलता है वह **त्वचा** का विषय है और **हवा** से प्राप्त होता है । हमें सर्दी, गर्मी का अनुभव किसी प्रकार का सुख, दुःख जो त्वचा के स्पर्श से मिलता है वह त्वचा का विषय ही कहलाता है और हवा से प्राप्त होता है । इन सुखों को हम आँख से देखना चाहें तो नहीं देख सकते हैं, परन्तु यह सुख, दुःख, सुगन्ध, दुर्गन्ध, रस, शब्द आदि होते अवश्य हैं, इसे कोई इन्कार नहीं कर सकता है जबकि यह सब आँखों से नहीं दिखाई पड़ता है, इससे पता लगा कि परमात्मा इन आँखों से देखने वाली वस्तु नहीं, हृदय में ही आत्मा को परमात्मा के दर्शन होते हैं । अष्टांग योग विधि पर चलने के बाद ही ऐसा संभव है । परमात्मा ने मनुष्य को अन्तःकरण की भी चार इन्द्रियाँ दी हैं क्रमशः-**मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार** । **मन** से मनुष्य विचार करता है बड़ी-बड़ी आशायें सोचता है तथा भूख, प्यास, भय, शोक का अनुभव करता है । **बुद्धि** से अच्छे-बुरे का निर्णय करता है तथा मन का स्वभाव चंचल होने से उसके ऊपर नियंत्रण रखता है । मनुष्य **बुद्धि** से ही ज्ञान का विकास करता है । चित्त पर देखी हुई तथा सोची हुई वस्तु अंकित हो जाती है और फिर कभी उसको याद करने से वह चीज उभरकर बुद्धि में आ जाती है । **चित्त** का काम किसी भी वस्तु को देखी हुई या सोची हुई को संग्रह कर लेना अर्थात् चित्त पटल पर अंकित कर लेना है । **अहंकार** से अहम् भाव का उत्पन्न होना यानी मनुष्य को अपने अस्तित्व का मैं हूँ, यह मेरा है, का बोध होता है । इन सब ज्ञानेन्द्रियों तथा हमारी पाँच कर्म इन्द्रियों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(हाथ, पांव, मुख, मल, मूत्र द्वार) तथा पूरे शरीर का स्वामी आत्मा है, जो हृदय स्थान में सूक्ष्म रूप में विराजमान है इसी के साँथ परमात्मा भी अति सूक्ष्म रूप में उपस्थित है। परमात्मा की अनुभूति करना आत्मा का काम है। वैसे आत्मा, परमात्मा एक ही स्थान पर रहते हैं, परंतु आत्मा अपने द्वेष, ईर्ष्या, घृणा, लोभ, मोह आदि विकारों से ढकी रहती है, जिससे वह परमात्मा को नहीं देख पाती है, जैसे मैले शीशे में मुख नहीं दिखाई देता उसी प्रकार आत्मा भी विकार रूपी मैलों से ढकी रहने के कारण ज्योति स्वरूप परमात्मा को नहीं देख पाती। यदि मनुष्य इन विकारों को दूर करके, ईश्वर के गुणों को अपने में धारण करे यानी ईश्वर दयालु, परोपकारी, न्यायकारी, निष्पक्ष आदि गुणों से विभूषित है, हम भी इन गुणों को धारण करें, अपने व्यवहार में प्रयोग करें अपने मन को ज्ञान, तप व संयम द्वारा स्थिर करके यम, नियमों से समाधि अवस्था तक पहुँचायें तो ज्ञान के नेत्रों से परमात्मा के दर्शन अवश्य कर सकते हैं। दर्शन का मतलब परमात्मा अथाह आनन्द का सागर है उसमें प्रवेश होकर अपार आनन्द की अनुभूति कर सकते हैं, जैसे अग्नि गर्मी का भंडार है। हम अग्नि के जितना समीप होंगे हमें उतनी ही अधिक गर्मी लगेगी। इसी प्रकार परमात्मा भी आनन्द का भंडार है, हम अपने अच्छे कर्मों तथा शुद्ध आचरण व्यवहार के द्वारा जितना ही परमात्मा के पास जावेंगे उतना ही ज्यादा आनन्द की अनुभूति हमें होती जायेगी। योग साधना से समाधि अवस्था में पहुँचकर हम पूर्ण आनन्दमय हो जावेंगे। यही परमात्मा की प्राप्ति है। इसी प्रकार वेदानुकूल चलने वाला मनुष्य मृत्यु के बाद मुक्ति अवस्था में भी परमात्मा के समीप रहता है, आत्मा की यही आनन्दमयी स्थिति है जो मनुष्य का अंतिम लक्ष्य है। कुछ पौराणिक भाई कहते हैं कि जब परमात्मा कण-कण में है तो इस मूर्ति में भी है, इसी से हम मूर्तिपूजा करते हैं तो वह भी परमात्मा की पूजा है। मूर्ति में परमात्मा तो है परन्तु पूजा करने वाले की आत्मा मूर्ति में नहीं है। परमात्मा के दर्शन या उसकी अनुभूति सिर्फ आत्मा ही कर सकता है, इसीलिए जहाँ परमात्मा और आत्मा दोनों एक साथ हैं वहीं पर हम वेदानुकूल चलकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमात्मा के आनन्द की अनुभूति कर सकते हैं । तीन तत्व ही अनादि व अनन्त हैं, जिनका न कभी आरम्भ हुआ और न कभी अन्त होगा । वे तीन तत्व हैं-**ईश्वर, जीव, प्रकृति** ।

प्रकृति – सत् है इसका अस्तित्व है ।

जीव – सत् चित् है, उसका अस्तित्व है । वह चेतन, गतिशील भी है ।

ईश्वर – सत् चित्, आनन्द है । उसका अस्तित्व है, चेतन है साथ ही आनन्द का भंडार है ।

ईश्वर ऊपर, जीव बीच में, प्रकृति नीचे । यदि मनुष्य नीचे प्रकृति की तरफ जावेगा तो वह भोग में फंसेगा । कारण प्रकृति में **रूप, शब्द, गंध, रस, स्पर्श** विषयों का आकर्षण है । इसीलिए मनुष्य अपनी ज्ञानेन्द्रियों को सन्तुष्ट करने के लिए इन विषयों में फंसेगा और क्षणिक सुख के लिए वह ईश्वर के विशाल आनन्द को छोड़ देगा । यदि मनुष्य अच्छे काम करता हुआ आध्यात्मिक मार्ग पर बढ़ेगा तो परमात्मा के समीप हो जावेगा । परमात्मा आनन्द का सागर है । मनुष्य जितना ही ईश्वरीय कामों को करेगा उतना ही आनन्द को प्राप्त करेगा । अंत में यम-नियमों का पालन कर योग साधना से समाधि अवस्था में पहुँच जावेगा तब परमात्मा की आनन्दमयी गोद में बैठकर अनन्त आनन्द की प्राप्ति कर सकेगा, जिसके लिए वह प्रयत्नशील था ।

❖❖❖

समाधिनिर्धूतमलस्य चेतसो निवेशितस्यात्मनि यत् सुखं भवेत् ।
न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा स्वयं तदन्तःकरणेन गृह्यते ।।

(मैत्रायणी उ० ६।९)

समाधि द्वारा निर्मल चित्त वाले अभ्यासी साधक को परमात्मलीन होने पर जो सुख होता है उसका वर्णन मुख से नहीं किया जा सकता, वह तो गूँगे के गुड़ के समान बस अनुभव किया जा सकता है । ।। सम्पा० ।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यज्ञ-महिमा

ऋग्वेद का प्रारम्भ 'यज्ञ' शब्द के साथ हुआ है ।

अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ।।

ऋक्० १।१।१॥

भावार्थ– यज्ञ कर्म के प्रकाशक, ऋतुओं के निर्माता, समस्त जगत् के प्रकाशक, योग और क्षेम द्वारा सबके कल्याणकारक, रमणीय पदार्थों को अपनी शक्ति में बाँधने वाले उस ज्ञान स्वरूप प्रभु की मैं स्तुति करता हूँ।

यज्ञ को सर्वश्रेष्ठ कर्म कहा गया है । इससे इहलोक और परलोक दोनों में सुख-आनन्द मिलता है । एक समय की बात है कि ऋषि याज्ञवल्क्य जी राजा जनक के पास बैठे थे, राजा ने पूछा भगवन्! यज्ञ का शुभ कर्म तो इहलोक में दिखाई पड़ता है । इससे जल, वायु, वनस्पति आदि पवित्र रोगरहित होते हैं । औषधि, अन्न, वृक्ष, लता, पौधों, मनुष्यों को शक्ति मिलती है तथा हानिकारक कीटाणुओं का नाश होता है, परन्तु इस यज्ञ के करने से परलोक में क्या लाभ होता है ? ऋषि याज्ञवल्क्य ने कहा-हवनकुण्ड की पवित्र अग्नि में जो आहुतियाँ दी जाती हैं, अग्नि उनके दो रूप बनाती है ।

१. हवनकुण्ड में पड़ी सामग्री, घृत, समिधा, आदि को सूक्ष्म रूप देकर सारे वायुमंडल में फैला देती है ।
२. दूसरा वह रूप है जो आहुति देने वालों और यज्ञवेदी पर उपस्थित सभी लोगों के हृदय पटल पर सूक्ष्म रूप से प्रवेश करती है । श्रद्धा, भक्ति और तन्मयता से दी गई आहुति सबके हृदय में स्वतः प्रवेश करती है । इससे मन के अंदर से गंदे विचार निकलते हैं और अच्छे विचारों का आगमन होता है ।

इसीलिए वेद, शास्त्र में लिखा है कि ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थी को प्रतिदिन यज्ञ करना चाहिए । संन्यासी इससे मुक्त है, क्योंकि तीनों आश्रमों से निकलकर अपने आपको ब्रह्माग्नि में अर्पित कर देता है । श्रद्धा, प्रेम, भक्ति से डाली गई आहुति धर्म का रूप धारण करती है और अंत समय में जब सूक्ष्म शरीर के साथ आत्मा कर्मानुसार इस भौतिक शरीर को छोड़ता है, तो धार्मिक संस्कार से बनी हुई ये आहुतियाँ सूक्ष्म शरीर को अपने साथ मिला लेती हैं । सूक्ष्म शरीर के साथ जब आत्मा इस संसार से जाता है तब कौन इसकी सहायता करता है । जैसे किसी कवि ने कहा है-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे भार्या गृहद्वारि जनः श्मशाने ।
देहश्चितायां परलोकमार्गे, धर्माऽनुगो गच्छति जीव एकः ।।

सुभाषित-रत्न-भा० ९२।५५॥

अर्थ– अंतकाल आने पर धन भूमि पर, पशु इत्यादि अपने बाड़े में, पत्नी घर के द्वार तक, अन्य लोग श्मशान भूमि तक और शरीर चिता पर ये सब इस प्रकार रह जाते हैं । परलोक में केवल धर्म ही जाता है । वहाँ पर सहायता के लिए माता-पिता, पुत्र, पत्नी, कोई नहीं जाता, केवल धर्म ही साथ जाता है । मनुष्य अकेला ही संसार में आता जाता है । अपने अच्छे बुरे कर्मों का फल अकेला भोगता है, इसीलिए मनुष्य को अपना जीवन यज्ञमय बनाना चाहिए और मृत्यु को सदैव याद रखना चाहिए । जिससे इहलोक, परलोक दोनों सुधर जावे । सम्पूर्ण आयु यज्ञ से ओत-प्रोत हो ।

उस यज्ञमय जीवन में तीन सवन होते हैं । **(१) प्रातः सवन, (२) माध्यन्दिन सवन, (३) तृतीय सवन।** मनुष्य का जीवन यज्ञ रूप होकर तीन अवस्थाओं से गुजरता है । दूसरों के भलाई हेतु कल्याणकारी प्रातः सवन का छन्द **गायत्री छन्द,** जिसमें २४ मात्रायें हैं । माध्यन्दिन सवन का छन्द है **त्रिष्टुप् छन्द,** जिसमें ४४ मात्रायें हैं और सायं सवन का छन्द **जगती छन्द,** जिसमें ४८ मात्रायें हैं । भाव यह है कि मनुष्य यज्ञ रूप होके २४ वर्ष तक ब्रह्मचर्याश्रम में रहे तब यज्ञ रूप होके ४४ वर्ष तक गृहस्थ और वानप्रस्थाश्रम में रहे और जब जीवन की संध्या आ जावे तो ४८ वर्ष तक संन्यासाश्रम में रहे । इस प्रकार से यज्ञरूप होकर ११६ वर्ष की अवस्था आराम से पार कर सकता है ।

१. प्रातःसवन को दीक्षा कहते हैं– ऐसी दशा में जिसमें तप करना है, भोजन, पानी, आवास का ढंग से प्रबंध न होने पर भी तप की भावना से ज्ञान और शक्ति प्राप्त करते जाना, ब्रह्मचर्य को धारण करके अपने लक्ष्य की ओर बढ़ना दीक्षा कहलाता है । कष्ट, क्लेश, संकटों को सहन करना दीक्षा है ।

२. माध्यन्दिन सवन को उपसदा कहते हैं– केवल सुख, चैन, आनन्द खेल, हँसते गाते हुए अपना और दूसरों का भला करते हुए कमाते और खर्च करते हुए आगे बढ़ते जाना ।

३. तृतीय सवन को दक्षिणा कहते हैं– केवल दूसरों के कल्याण के लिए जीवन धारण करना अपना समय, अपनी सम्पत्ति, अपना स्वास्थ्य, अपना सब कुछ लोक कल्याण में लगा देना । सारे संसार को अपना परिवार समझकर उसके भले के लिए प्रयत्न करते रहना ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये तीन बातें जिस जीवन में हैं—**दीक्षा, उपसदा और दक्षिणा** वह यज्ञमय जीवन है। और जो व्यक्ति यज्ञरूप है उसका दृढ़ संकल्प कभी असफल नहीं होता। **वेद में प्राणीमात्र के लिए आदेश है कि—**

यज्ञ जीवन का हमारे श्रेष्ठ सुन्दर कर्म है।
यज्ञ का करना कराना आर्यों का धर्म है॥
यज्ञ से हों सुगन्धित दिशायें शान्त हो वातावरण।
यज्ञ से सत्ज्ञान हो और यज्ञ से हो शुद्ध आचरण॥
यज्ञ से सुख सम्पदा हो, दूर सारे कष्ट हों।
यज्ञ से हो स्वस्थ काया व्याधियाँ सब नष्ट हों॥
यज्ञ से दुष्काल मिटते यज्ञ से जल वृष्टि हो।
यज्ञ से धन-धान्य हो बहुभाँति सुखमय सृष्टि हो॥
यज्ञ है प्रिय मोक्षदाता यज्ञ शक्ति अनूप है।
यज्ञमय यह विश्व है, यह विश्व यज्ञ स्वरूप है॥
यज्ञ पुण्य प्रकाश से सब पाप ताप तिमिर हरें।
यज्ञ नौका से अगम संसार सागर से तरें॥

ओ३म् आयुर्यज्ञेन कल्पतां, प्राणो यज्ञेन कल्पतां, चक्षुर्यज्ञेन कल्पतां, श्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां, वाग्यज्ञेन कल्पतां, मनो यज्ञेन कल्पतां, आत्मा यज्ञेन कल्पतां, ब्रह्मा यज्ञेन कल्पतां, ज्योतिर्यज्ञेन कल्पतां, स्वर्यज्ञेन कल्पतां, पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां, यज्ञो यज्ञेन कल्पताम्''।। (यजु० १८।२९)

अर्थ—हे परमपिता परमात्मा! हम लोग आयु, प्राण, चक्षु, कान, वाणी, मन, जीवात्मा, वेदविद्या और विद्वान्, ज्योति, सुख साधन, पृथिव्यादि सब लोक आधार तथा पुरुषार्थ और यह यज्ञ सब पदार्थ आपके अर्पण करते हैं। हे कृपानिधे-हम लोगों का योग-क्षेम आप ही सदा करें। आपकी कृपा से सर्वत्र हमको विजय सुख मिले।

स्वाहा-जैसा ज्ञान आत्मा में हो वैसा ही जीभ से बोले विपरीत नहीं।

वेद में ज्ञान यज्ञ की प्रार्थना

ओ३म् देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय।। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु।

(यजु० ३०।१)

भावार्थ—परमेश्वर सबको सत्यकर्म करने की तथा सत्य का संरक्षण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने की बुद्धि देवे। अपने ज्ञान से पवित्र करने वाला ज्ञानी हमारे ज्ञान को पवित्र करे तथा उत्तम वक्ता हमारी वाणी को मधुर बनाये, जिससे हम सब उन्नति कर सकें।

स्वर्गकामो यजेत, पुत्रकामो यजेत, धनकामो यजेत

विशेष सुखों के लिए यज्ञ करे। **'पुत्रेष्टि यज्ञ'** पुत्रों के लिए, सभी ऐश्वर्यों के लिए यज्ञ करे। इसी भाव को यज्ञ प्रार्थना में यूँ कहा गया है-

भावना मिट जाये मन से, पाप अत्याचार की।
कामनायें पूर्ण होवें यज्ञ से नर-नार की ।।

यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म शत० ब्रा० १।७।१।५।। अतः यज्ञ करने वालों को देवी एवं देवता कहा जाता है और इसे **'देवयज्ञ'** कहते हैं। यज्ञ आकाश में बोया जाता है और अन्न भूमि में। अन्न को मनुष्य बोते हैं और यज्ञ देवता बोते हैं। अन्न-फल आदि जो पदार्थ हम भूमि में बोते हैं, उसे हजार गुणा करके भूमि हमको देती है, वैसे ही हम जो आकाश में बोयेंगे, आकाश भी हमें हजार गुणा करके दे देगा, परन्तु यह ध्यान रखें कि भूमि से आकाश करोड़ों गुणा बड़ा है। अतः देवताओं के सभी कार्य महान् होते हैं।

१. यज्ञ सृष्टि रचना का आधार है।
२. यज्ञ आत्म-उन्नति का अमर संगीत है।
३. यज्ञ आत्मबल, संकल्प बल और मनोबल का अनुपम आधार है।
४. यह मनोवाञ्छित फलों का दाता है।
५. यज्ञ से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सुखों की प्राप्ति होती है।
६. यज्ञ भव-सिन्धु का पतवार है।
७. यज्ञ से दैविक, दैहिक और भौतिक तापों का उन्मूलन होता है।
८. यज्ञ और प्रार्थना में अमोघ बल है।
९. यज्ञमय जीवन बनाकर अक्षय सुखों को प्राप्त करो, यह वेद का उपदेश है।
१०. यज्ञ दान और तप से मानव देव संज्ञा का अधिकारी बन जाता है।
११. यज्ञ करने वाला महापुरुष विश्ववन्दनीय, अभिनन्दनीय और पूजनीय बनता है।
१२. यज्ञ सृष्टि सुमन है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३. यज्ञ करने से मनुष्य शतायु होकर दरिद्रता, बीमारियों का नाश करता है ।

१४. यज्ञ करने से विश्व-बन्धुत्व की भावनायें हृदय आकाश में उदित होती हैं ।

१५. यज्ञ मंगल मूल है, इसके करने से वैदिक युग का निर्माण सम्भव है ।

१६. यज्ञ करने से मनुष्यों का मन निरुद्ध होता है ।

१७. यज्ञ की महिमा चारों वेद, छः शास्त्र, उपनिषद् सभी में वर्णित है।

सुगन्धि का वर्णन- देवता यज्ञाग्नि में सात्विक, पौष्टिक, रोगनाशक और सुगन्धित पदार्थों को स्वाहा कहते ही आकाश में बीजारोपण कर देते हैं । स्वाहा का अर्थ होता है-समर्पण, कल्याणी वाणी, भेंट के साथ-साथ 'स्वाहा' का अर्थ होता है 'हँसना' जैसे स्व = स्वयं, आह = हँसनाँ, क्योंकि जब आप हँसेंगे, तो अहा, अहा तीन बार करके ही हँसेंगे इस प्रकार स्वाहा-स्वाहा का अर्थ 'वाहा-वाहा' बन जाता है, मानों सुगन्धि से सब प्रसन्न हो जाते हैं ।

'आवश्यक जानकारी' – पंडित वीरसेन वेदश्रमी जी लिखते हैं कि आकाश को पाँच नामों से पुकारा जाता है ।

'गगन, अन्तरिक्ष, नभ, द्युलोक, आकाश' – यहाँ से दस किलोमीटर की ऊँचाई तक **'गगन'** पृथ्वी मण्डल है और उससे दस किलोमीटर ऊपर **'अन्तरिक्ष'** कहते हैं और जो नीचे, ऊपर, इधर, उधर खाली स्थान है उसे **'आकाश'** कहते हैं ।

विश्व में जितने भी शब्द हैं उन सबमें **'गायत्री मंत्र'** के शब्दों में सबसे अधिक तरंगित होने की शक्ति है । वायु प्रदूषण को दूर करने में सबसे अधिक क्षमता **'जायफल'** में होती है ।

हृदय – हृदय यज्ञ वेदी है इसमें ज्ञान की अग्नि जलाकर, उसमें श्रद्धा की आहुति डाली जाए तो जीवन सफल हो जावेगा ।

वैदिक संस्कृति में पंच महायज्ञों का विशेष महत्व है । मनु भगवान् ने पंचमहायज्ञों को नियमित रूप से करने का विधान बताया है ।

ऋषियज्ञं देवयज्ञं भूतयज्ञं च सर्वदा ।
नृयज्ञं पितृयज्ञं च यथाशक्ति न हापयेत् ।।

(मनु०४।२१)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन पंचयज्ञों का वर्गीकरण व लक्षण निम्न प्रकार से है-

१. ब्रह्मयज्ञ – इस यज्ञ को स्वाध्याय एवं ईश्वरोपासना इन दो भागों में विभक्त किया है ।

(क) स्वाध्याय – स्वाध्याय के अन्तर्गत आर्ष-ग्रन्थों तथा प्राचीन वैदिक सत्शास्त्रों एवं वेदों के अध्ययन का विधान है । इस अध्ययन से मनुष्य मननशील, ज्ञानी, विवेकी, दार्शनिक, वैज्ञानिक तथा ज्ञान से ओतप्रोत होकर समाज व अपना भला कर सकता है और अंधकार से दूर प्रकाश ज्योति से विश्व में सत्य मार्ग प्रशस्त करता है ।

(ख) सन्ध्योपासना (योग प्राणायाम विधि) – योग प्राणायाम विधि से बल पौरुष की वृद्धि होती है । शरीर निरोग रहकर स्वाध्याय तथा सत्यकर्मों की वृद्धि में आवृत्त हो जाता है । बुद्धि का विकास होता है । स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने सत्यार्थ प्रकाश में स्पष्ट किया है कि योग प्राणायाम से बल, पराक्रम, जितेन्द्रियता समस्त शास्त्रों को समझने की शिक्षा मिलती है । प्राणायाम योग के साथ ही सन्ध्योपासना का विधान है । सन्ध्योपासना से तात्पर्य दोनों संधि वेलाओं में प्रातः सूर्योदय से पूर्व, सायं सूर्यास्त के पश्चात् संध्या का विधान करना है । इसके लिये ईश्वर भक्ति में आस्था, ज्ञान, मन, वचन कर्मों की शुद्धि का प्रावधान है, जो विशेषकर ज्ञानवृत्ति एवं अन्तःकरण की शुद्धता और निर्मलता ब्रह्मचर्य द्वारा सम्भव है ।

२. देव यज्ञ – संध्योपासना के साथ ही जलवायु और कर्म की शुद्धि के लिए यज्ञ **(अग्नि होत्र)** का विधान है, देवों की पूजा, निष्ठा विद्वानों का आदर सत्कार दान वस्त्र से सुसंगति करना प्रमुख है । देवयज्ञ का विधान वेदों में भरा पड़ा है । इससे समस्त दुर्गुणों का नाश होता है । परमात्मा से पवित्र मार्ग के लिए प्रार्थना की जाती है ।

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ।।

(यजु० ३०।३, ऋक्०५।८२।५)

इससे बुद्धि, मन की पवित्रता, रोगों, शोकों का नाश होता है । दीर्घायु, आस्तिकता होती है ।

सेवा परायणता के भाव जागृत होते हैं और मनुष्य अपने लक्ष्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त होकर जीवन को सार्थक बना सकता है ।

३. पितृ यज्ञ – जीवित माता-पिता की यथावत् सेवा करना ही पितृयज्ञ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहलाता है । उनका मान-सम्मान उनकी आज्ञापालन, वृद्धजनों की सेवा, सहायता ही पितृयज्ञ है । पितृयज्ञ की दो प्रक्रियायें हैं ।

(अ) श्राद्ध– सत्य का ग्रहण ही श्राद्ध है । उस प्रक्रिया से जो कार्य सम्पन्न होते हैं, वे ही श्राद्ध होते हैं । विद्वानों, पितरों का आदर सत्कार ही श्राद्ध पूजा है । मृतक के निमित्त जो प्रक्रिया व्याप्त है, वह अनार्ष, अवैदिक मिथ्या है । जीवित माता-पिता की सेवा ही श्राद्ध है ।

(ब) तर्पण– जिस कर्म से देव, विद्वान्, माता-पिता तृप्त होवें, प्रसन्नचित्त हों, सुखी हों और उनके आशीर्वाद से जो भाव निकले वह भावना तर्पण बनकर कल्याण करती है । तर्पण तृप्ति का ही पर्यायवाची है । देवऋण, ऋषिऋण तथा पितृऋण से निवृत्ति इसी यज्ञ से संभव है ।

४. बलिवैश्वदेव यज्ञ– भोजन में से कुछ अंश निकालकर अग्निहोत्र समर्पण तथा अलग-अलग सोलह भाग निकालकर गाय, कुत्ता, चींटी, कीट आदि जीवों को अन्न दिया जाता है । वह बलिवैश्वदेव यज्ञ कहलाता है । इससे समाज में धर्म, दान का अभ्युदय होता है । दुःखी, निर्धनों, निर्बलों तथा अंधे, अनाथों को दिया गया अन्न भी इसी बलिवैश्वदेव यज्ञ के अन्तर्गत आता है ।

५. अतिथि यज्ञ– जो मनुष्य संन्यासी, विद्वान् या परोपकारी होता है तथा किसी अनिश्चित समय गृहस्थी के समीप पहुँचता है तो अतिथियज्ञ कहाता है । उनको यथावत् सम्मान, अन्न, जल देकर संतुष्ट करना प्रमुख ध्येय है । इससे सत्यज्ञान की प्राप्ति होती है ।

हवन, यज्ञ रोग निवारण व पर्यावरण सन्तुलित रखने की एक प्राचीन वैदिक परम्परा है । मनुष्यों के शरीर में अधिकांश रोग प्रदूषित वायु, जल व अन्न के कारण होते हैं । जिस खाद्य पदार्थ का मनुष्य सेवन करता है, वह मिट्टी, हवा, पानी तथा सूर्य के प्रकाश से उत्पन्न होते हैं । वायु और जल के प्रदूषित होने का प्रभाव तथा रासायनिक खाद खेतों में डालने से भूमि के प्रदूषित होने का प्रभाव उत्पन्न होने वाले खाद्य पदार्थों पर भी पड़ता है । वायु, जल, प्रदूषित होने का कारण मनुष्य का शरीर है जो निरन्तर अपने शरीर द्वारा वायु, जल व अन्न को प्रदूषित करता रहता है । प्रत्येक मनुष्य पर देव ऋण होता है और उसका यह धर्म है कि वह इस ऋण से मुक्ति पावे इसका एकमात्र साधन प्रतिदिन अग्निहोत्र है । हमारे समस्त देवताओं में

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वायु, जल, सूर्य मुख्य हैं, जिन पर हमारा जीवन निर्भर है । जब हम अग्निहोत्र सुगंधित पदार्थों जड़ी-बूटी मिश्रित सामग्री तथा गाय के घृत से यज्ञ करते हैं तो वायुमंडल के सुगंधित होने से इन देवताओं को शक्ति मिलती है और हम इनके ऋण से उऋण होते हैं । प्रतिदिन अग्निहोत्र करने से ज्वर, क्षय, कुष्ठ, गर्भ दोष, गर्भ धारण, उन्माद इत्यादि सकल चिकित्सा का वर्णन वेदों में पाया जाता है । यज्ञ में भिन्न-भिन्न औषधियाँ जलाकर रोगों का उपचार किया जाता है । यज्ञ कुंड की अग्नि में जब रोगनाशक, पुष्टिकारक, जड़ी-बूटियों से बनी सामग्री व गाय घृत से आहुतियाँ दी जाती हैं तो जड़ी-बूटियों व गाय घृत के गुण प्रबल हो उठते हैं । यह वैज्ञानिक सत्य है कि अग्नि में डालने से कोई पदार्थ नष्ट नहीं होता, केवल उसका रूप बदलकर हजारों गुणा शक्तिशाली हो जाता है । स्थूल पदार्थ की अपेक्षा उसके चूर्ण में, चूर्ण की अपेक्षा उसके तरल रूप में और तरल रूप की अपेक्षा उसके वाष्प में अधिक शक्ति होती है । इसी कारण आयुर्वेद में जुकाम के इलाज के लिए जोशांदे का प्रयोग किया जाता है । हवन करते समय शरीर के रन्ध्र, रोम खुल जाते हैं, अग्निहोत्र से उठने वाली वाष्प चर्म में प्रविष्ट होकर शरीर को आरोग्यता देती है । हवन कुंड की अग्नि का तापमान लगभग ६००° डिग्री से० होने से हवन सामग्री में पड़ी औषधियाँ सूक्ष्म रूप से हवन के वाष्प द्वारा यजमानों के शरीर में प्रवेश करके उन्हें बलवान् व रोगमुक्त करती हैं । ताँबा धातु से बने हवन कुंड में यज्ञ करने से उसमें रासायनिक क्रिया तेजी से होती है, क्योंकि ताँबा शुद्ध सुचालक है। समिधा आम, पीपल, पलाश, गूलर की होनी चाहिए । जहाँ तक संभव हो गोघृत का प्रयोग करें अग्नि में गोघृत से रोगों के कीटाणु शीघ्र नष्ट होते हैं। गाय के घी का प्रयोग करने से एथिलिन आक्साइड निर्मित होती है जो प्रदूषित वायु को अपनी ओर खींचकर उसे शुद्ध करती है । भिन्न-भिन्न रोगों के उपचार में भिन्न-भिन्न जड़ी बूटियों का प्रयोग होता है, उसी प्रकार से जब हवन किसी रोग उपचार की भावना से किया जाता है तो हवन सामग्री में उन्हीं जड़ी-बूटियों व औषधियों का प्रयोग किया जाता है, जो उस रोग निवारण के लिए उपयोगी होती है । जलती शक्कर में वायु शुद्ध करने की

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी शक्ति है; इससे चेचक, हैजा, क्षय रोग ठीक हो जाते हैं । मुनक्का, किशमिश आदि फलों को जलाने से टायफाइड के कीटाणु नष्ट होते हैं । वर्षा ऋतु में वर्षा न होने पर करीर की लकड़ी, पीले-तिल, गुग्गुल इत्यादि से बनी सामग्री से हवन करने पर वर्षा होती है । यज्ञ में प्रयोग की गई हवन सामग्री की भस्म को पेड़-पौधों में डालने से काफी लाभ होता है । वह भस्म वृक्षों के लिए औषधि का कार्य करती है और शक्ति प्रदान करती हैं । शरीर में सूजन होने पर यह भस्म लगाने पर काफी लाभप्रद है । इस अग्निहोत्र के भस्म से दवाओं का निर्माण हुआ है जिससे पुराने पेट-दर्द, चर्मरोगों पर इसका चमत्कारिक प्रभाव हुआ है । हवन यज्ञ में वह अमोघ शक्ति है जो घर में शुद्ध वायु प्रवेश कराती है । भोपाल में सन् १९८४ में विषैली गैस काण्ड हुआ था जिसमें हजारों मनुष्यों की मृत्यु हुई हजारों इस गैस से प्रभावित हुए थे, बाद में सर्वेक्षण से पता चला कि जिन घरों में प्रतिदिन अग्निहोत्र होता था उन परिवारों में इस विषैली गैस का कोई दुष्प्रभाव नहीं हुआ था ।

बलवान् संतान उत्पत्ति के लिए – अखरोट, बादाम, मूँगफली, महाबत्त, सितबर, कैंच बीज, अश्वगन्धा, पीपल के फल, बड़ के फल, शिवलिंगी बीज ।

हृदय रोग – सूखा आँवला, अर्जुन वृक्ष की छाल, पीपल की छाल ।

जोड़ों के दर्द में – गुग्गुल, अरण्डी, सोंठ, अश्वगंधा, हरड़ ।

श्वास रोग में – काला वासा, पिपलामूल, तुलसी का पत्ता, आक की जड़ की छाल, पीपली, नौशादर, काकड़सिंघी ।

नेत्र रोग – त्रिफला, गुड़, छोटी इलायची, सफेद मिर्च ।

शरीर की सुन्दरता में – सूखा आँवला, कपूर, मुलहठी, चन्दन, तिल ।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भजन

होता है सारे विश्व का कल्याण यज्ञ से,
जल्दी प्रसन्न होते हैं भगवान् यज्ञ से ।
ऋषियों ने ऊँचा माना है स्थान यज्ञ का,
करते हैं दुनिया वाले सम्मान यज्ञ का ।
दर्जा है तीनों लोकों में महान् यज्ञ का,
जाता है देवलोक में इन्सान यज्ञ से ।
जब भी बुलाओ प्रेम से आते हैं अग्निदेव,
जो कुछ भी डालें यज्ञ में खाते हैं अग्निदेव ।
बादल बना के पानी बरसाते हैं अग्निदेव,
सबको प्रसाद यज्ञ का पहुँचाते हैं अग्निदेव ।
पैदा अनाज करते हैं भगवान् यज्ञ से,
पूजा है इसको श्रीकृष्ण भगवान् राम ने ।
होता है कन्यादान भी इसी के सामने,
मिलता है राज्य, कीर्ति, संतान यज्ञ से ।
सुख शान्तिदायक मानते हैं दयानन्द जी इसे,
वशिष्ठ, विश्वामित्र और नारद मुनि इसे ।
इसका पुजारी कोई भी पराजित नहीं होता।
भय यज्ञ कर्त्ता को कभी किंचित् नहीं होता।
होती हैं सारी मुश्किलें आसान यज्ञ से,
चाहे अमीर है कोई चाहे गरीब है ।
जो नित्य यज्ञ करता है वह खुश-नसीब है,
होती हैं पूर्ण कामना-महान् यज्ञ से ।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोलह संस्कार एवं प्रयोजन

१. गर्भाधान– युवा स्त्री-पुरुष उत्तम संतान की प्राप्ति के लिए विशेष तत्परता से प्रसन्नतापूर्वक गर्भाधान करें, नहीं तो संतान कभी उत्तम उत्पन्न न होगी । गर्भाधान का समय रजोदर्शन के दिन से सोलहवीं रात्रि तक है, उनमें भी प्रथम चार रात्रि तथा पर्व-रात्रि वर्जित हैं ।

२. पुंसवन– जब गर्भ की स्थिति का ज्ञान हो जाय, तब दूसरे या तीसरे महीने गर्भ की रक्षा के लिए यह संस्कार किया जाता है । इसमें स्त्री-पुरुष प्रतिज्ञा करते हैं कि वे आज से कोई ऐसा कार्य न करेंगे जिससे गर्भ गिरने का भय हो ।

३. सीमन्तोन्नयन– यह संस्कार गर्भ के चौथे मास में बच्चे की मानसिक शक्तियों की वृद्धि के लिए किया जाता है । इसमें ऐसे साधन प्रस्तुत किए जाते हैं जिनसे स्त्री का मन संतुष्ट हो ।

४. जातकर्म– यह संस्कार बालक के जन्म लेने पर होता है, इसमें पिता या घर के वृद्ध सोने की सलाई द्वारा **'घी, शहद'** से जिह्वा पर **'ओ३म्'** लिखते हैं और कान में **'वेदोऽसि'** कहते हैं ।

५. नामकरण- जन्म से ग्यारहवें दिन या एक सौ एक दिन व दूसरे वर्ष के आरम्भ में यह कार्य कराया जाता है। इसमें बालक का नाम प्रिय व सार्थक रखा जाता है।

६. निष्क्रमण- यह संस्कार जन्म के चौथे महीने में उसी तिथि पर जिसमें बालक का जन्म हुआ हो किया जाता है। उसका उद्देश्य बालक को उद्यान की शुद्ध वायु का सेवन और सृष्टि के अवलोकन का प्रथम शिक्षण है।

७. अन्नप्राशन- छठे व आठवें महीने में जब बालक की शक्ति अन्न पचाने की हो जावे तो यह संस्कार होता है।

८. चूडाकर्म-मुंडन संस्कार- पहले, या तीसरे वर्ष में बालक के बाल काटने के लिए किया जाता है।

९. कर्णवेध- कई रोगों को दूर करने के लिए बालक के कान बींधे जाते हैं। यह तीसरे या पांचवें वर्ष में होता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. उपनयन- जन्म से आठवें वर्ष में इस संस्कार द्वारा लड़के व लड़की को यज्ञोपवीत पहनाया जाता है।

११. वेदारम्भ- उपनयन संस्कार के दिन या एक वर्ष के अंदर ही गुरुकुल में वेदों का आरम्भ गायत्री मंत्र से किया जाता है।

१२. समावर्तन- जब ब्रह्मचारी व्रत की समाप्ति कर वेद-शास्त्रों के पढ़ने के पश्चात् गुरुकुल से घर आता है तब यह संस्कार होता है।

१३. विवाह- विद्या समाप्ति के पश्चात् जब लड़का, लड़की भली भाँति पूर्ण योग्य बनकर घर जाते हैं तब विवाह दोनों का गुण कर्म स्वभाव देखकर किया जाता है।

१४. वानप्रस्थ- इसका समय ५० वर्ष के उपरान्त है। जब घर में पुत्र का पुत्र हो जाए, तब गृहस्थ के धंधे में फंसे रहना अधर्म है। उस समय यह संस्कार होता है।

१५. संन्यास- वानप्रस्थी वन में रहकर जब सब इन्द्रियों को जीत ले, किसी में मोह और शोक न रहे तब केवल परोपकार हेतु संन्यास आश्रम में प्रवेश के लिए यह संस्कार होता है।

१६. अन्त्येष्टि संस्कार- मनुष्य शरीर का यह अंतिम संस्कार है जो मृत्यु के पश्चात् शरीर को जलाकर किया जाता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम हिन्दू नहीं, आर्य हैं [१]

आर्य शब्द के उच्चारण से ही किसी दिव्य आत्मा का बोध होता है, जिस प्रकार से सर्वगुण सम्पन्न को परमात्मा कहा जाता है उसी प्रकार श्रेष्ठ गुणों से सम्पन्न व्यक्ति ही आर्य कहलाता है।

१. **यो अर्यो मर्तभोजनं पराददाति दाशुषे ।**
इन्द्रो अस्मभ्यं शिक्षतु वि भजा भूरि ते वसु भक्षीय तव राधसः।
(ऋक्० १।१८।६)

२. **यवं वृकेणाश्विना वपन्तेषं दुहन्ता मनुषाय दस्रा ।**
अभि दस्युं बकुरेणा धमन्तोरुज्योतिश्चक्रथुरार्याय ।।
(ऋक्० १।११७।२१)

जिस प्रकार एक पिता के अनेक पुत्र होते हुए भी उसकी आज्ञा पर चलने वाले सदाचारी विनम्र पुत्र को ही वास्तविक पुत्र कहा जाता है। वैसे सब मनुष्य ईश्वर के पुत्र हैं किन्तु जो धर्म, कर्म, ज्ञान-विज्ञान, आचार-विचार तथा शील स्वभावों में सर्वश्रेष्ठ हो उसे ही आर्य कहते हैं।

ऋग्वेद में- **आर्या व्रता विसृजन्तो अधि क्षमि** (१०।६५।११)

आर्य वे कहलाते हैं जो इस पृथ्वी पर सत्य, अहिंसा, परोपकार, पवित्रतादि उत्तम व्रतों को विशेष रूप से धारण करते हैं। महाभारत के रचयिता मुनि व्यास ने अपने ग्रन्थ में आर्यों के आठ गुण बताये हैं।

शान्तस्तितिक्षुर्दान्तश्च सत्यवादी जितेन्द्रियः ।
दाता दयालुर्नम्रश्च आर्यः स्यादष्टभिर्गुणैः ।।

अर्थात् जो शान्त हो, सहनशील हो, मन को अपने वश में रखने वाला हो, सत्यवादी हो, इन्द्रियों का विजेता हो, दाता हो, दयालु हो, नम्र हो वह आर्य कहलाने योग्य है। यह आर्य शब्द जातिवाचक नहीं अपितु गुणवाचक है, परंतु अंग्रेजों की कपट नीति के हाथ बिके हुए जर्मन विद्वान् 'मैक्समूलर' ने वेद में आये 'आर्य' शब्द के मूल मन्तव्य को बलात् अन्यथा करते हुए, आर्य को मानव समुदाय की एक शाखा ही नहीं अपितु उसे नृतात्विक, प्रजाति विशेष भी बताया। पुनः सन् १८८१ में उसने क्षोभ पूर्वक कहा कि 'मेरे बार-बार कहने के बाद भी आर्य शब्द केवल भाषा परिवार का ही बोधक माना जा रहा है कोई सुनता ही नहीं है। बीसवीं शताब्दी के चौथे और पाँचवें दशक में 'हिटलर' ने इस शब्द को नृतात्विक

१. प्रस्तुत लेख 'पाणिनि कन्या महाविद्यालय' वाराणसी की सन् १९९८ में 'रजत जयन्ती स्मारिका' से उद्धृत किया है, जिसे वहाँ की अधीत स्नातिका सुश्री हेमवती आचार्या ने लिखा था ।। सम्पा०।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रजाति के रूप में अपनाकर अत्यन्त गर्हित बनाकर प्रचारित किया, जो कि इनकी अहंमन्यता और अज्ञानता के साथ-साथ भारतीयों के प्रति घोर पक्षपातपूर्ण नीति का द्योतक है। इसी प्रकार और भी आर्यों के संबंध में अनेक भ्रान्तिपूर्ण बातों का दुष्प्रचार कि आर्य बाहर से आये थे, युद्ध करते थे, जंगली व असभ्य थे इन पाश्चात्यों की कुटिलनीति का ही एक अंग था। **'आर्य'** जब कोई जातिवाची शब्द ही नहीं तो उसका बाहर से आना, यहाँ के तथाकथित आदिवासियों से युद्ध करना, उन्हें पराजित करना, अपना दास बना लेना आदि मान्यतायें स्वतः खंडित हो जाती हैं। आर्यों का निवासस्थान यहीं है। **आर्याः यत्र वर्तन्ते सैव देशः आर्यावर्तः** और उनकी जो भाषा वह आर्य भाषा हुई, उनको युद्ध करने की आवश्यकता ही क्या थी क्योंकि परमात्मा का तो आदेश है- **'अहं भूमिमददाम् आर्याय'** परमात्मा ने तो सम्पूर्ण भूमि ही आर्यों को प्रदान की थी। इस आर्यावर्त देश की सीमा भी मनुस्मृति में बताई है-

आ समुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात्।
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः ।।
सरस्वती दृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देवनिर्मितं देशमार्यावर्त्तं प्रचक्षते ।।

मनु० २।२२,१७।।

अर्थ- पूर्व समुद्र से लेकर पश्चिम समुद्र पर्यन्त, उत्तर में हिमालय और दक्षिण में स्थित विन्ध्याचल का मध्यवर्ती जो देश है वही आर्यावर्त्त है।

'पतञ्जलि मुनि' ने भी आर्यावर्त्त की सीमा इस प्रकार बताई है कि-

'कः पुनरार्यावर्त्तः? प्रागादर्शात् प्रत्यक्कालकवनात् दक्षिणेन-हिमवन्तम् उत्तरेण पारियात्रम्'

महाभाष्य ६।३।१०९

मनु महाराज पुनः मनुस्मृति में लिखते हैं कि-

कृष्णसारस्तु चरति मृगो यत्र स्वभावतः।
स ज्ञेयो यज्ञियो देशो म्लेच्छदेशस्त्वतः परः ।।

मनु० २।२३।।

कालचक्र, समय की क्रान्ति अविद्यावश, हम अपने यथार्थ का बोध ज्ञान न कर विश्वव्यापी सभ्य और वास्तविक नाम को भूलकर एक गुमनाम कृत्रिम असभ्य अनुचित कलंक युक्त नाम से मोह युक्त हो गये हैं। उस आर्य के स्थान पर अविद्यावश हिन्दू तथा आर्यावर्त्त के स्थान पर हिन्दुस्तान कहने कहलाने में हमें कोई संकोच नहीं, यह नाम तो मुसलमानों के द्वारा हमारे स्वाभिमान को ठेस पहुँचाने के लिए दिया गया था। जब मुसलमान आक्रमणकारियों ने इस देश को पराधीन कर लिया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो उन्होंने यहाँ के निवासियों को इस घृणा-सूचक नाम से सम्बोधित करना आरम्भ किया, क्योंकि हमारा देश विश्व प्रसिद्ध इतिहास में असामान्य और चमत्कारी है कि करोड़ों वर्षों से देदीप्यमान रहा । इस देश के नौनिहालों का जीवन किसी भी सभ्य देश की तुलना में प्रत्येक क्षेत्र में उत्तम रहा । यहाँ पर ऋषि, महर्षि, मुनि, तपस्वी परमयोगी, विविध विद्याओं में निपुण हुए हैं । सामाजिक क्षेत्र में भी यहाँ के यशस्वी राजा, शासक, शूरवीर, राजनीतिज्ञ, साम्राज्य संस्थापक आदि ने अमिट छाप डाली है । हमारे देश की इन विभूतियों की अटूट श्रृंखला ने इस देश को विश्व गुरु की गरिमा प्रदान कराई । परन्तु इस देश की समृद्धि, ऐश्वर्य को विदेशी ललचाई आँखों से देखते रहे और फिर आक्रमण शुरू कर दिया, जिसमें तीसरा आक्रमण मुसलमानों का था जो प्रबल और स्थायी था । अंत में मुस्लिम राज्य होने लगा । वे यहाँ के राजा बने और हम लोगों को अपने आधीन कर यह घृणास्पद नाम दिया ।

यह हिन्दू नाम हमारे किसी शास्त्र में नहीं है, यह तो मुसलमानों के **'गयासुल लुगात'** में प्रथम आया है । जिसका अर्थ फारसी में **'चोर, डाकू, गुलाम, काफिर'** है ।

आर्य मुसाफिर पं० लेखराम जी ने इस हिन्दू शब्द की खोज में २४ प्रमाण भिन्न-भिन्न विदेशी कोषों से अपनी पुस्तक **'कुलियात आर्य मुसाफिर में'** उद्धृत किए हैं ।

उदाहरण हेतु निम्न चार स्थल हैं-

१. **हिन्दू दर महावरा फरसियाँ-बन अमे, फुजहो रहजनी गुलाम में शायद** (गयासनामी कोष)
हिन्दू शब्द फारसी के अनुसार चोर, डाकू, रहजन, गुलाम ।

२. **हिन्दू अकसर गुलाम व बन्दर काफिर व तेग** (कराफनामी कोष)
हिन्दू, गुलाम, कैदी काफिर और तलवार है ।

३. **ये हिन्दू हिन्दुए काफिर चे काफिर रहजन रहजने ईमान** (चमन बेनया)
हिन्दू क्या है ? काफिर, काफिर क्या है ? रहजन । रहजन क्या है ? ईमान पर डाका करने वाला ।

४. **दो हिन्दुए अज पस सगे सखर आलुर्दन्द** (गुलिस्तान)
दो हिन्दू-चोर चट्टान के पीछे से निकले ।

अब आर्य बन्धु गम्भीरता से विचार करें कि क्या हम यही हैं ? जो मुगलों ने अपनी पुस्तक के द्वारा यह उपाधि हमें दी है या मनु महाराज की वह सिंह गर्जना जो मनुस्मृति में है- **एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन:** मनु २।२०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत लोग तो **'गर्व से कहो हम हिन्दू हैं'** इसे स्वाभिमान समझते हैं। पता नहीं अज्ञानतावश या उनका रहन-सहन, आचार-विचार, खान-पान, वेशभूषा मुसलमानी है, इसीलिए जैसा काम वैसा ही नाम पसंद आया हो। हम रामराज्य की बात करते हैं, किन्तु राम का चरित्र क्या था ? क्या आदर्श थे ? यह नहीं समझते। वाल्मीकि रामायण में राम के लिए सर्वत्र 'आर्य' का प्रयोग मिलता है।

सर्वदाभिगतः सद्भिः समुद्र इव सिन्धुभिः।
आर्यः सर्वसमश्चैव सदैव प्रियदर्शनः।।

बाल० १।१५,१६।।

इसी प्रकार सीता द्वारा राम के लिए सर्वत्र आर्यपुत्र का संबोधन है। वनगमन के समय सीता राम से आज्ञा माँगती हुई कहती हैं-

आर्यपुत्र ! पिता माता भ्राता पुत्रस्तथा स्नुषा।
स्वानि पुण्यानि भुञ्जानाः स्वं स्वं भाग्यमुपासते।।

अयो० २७।३।।

कहाँ गया वह वेद का आदेश जिसमें **'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'** सम्पूर्ण विश्व को आर्य बनाने का आदेश है। हमारे देश के महान् युग निर्माता भारतीय संग्राम के प्रथम सेनानी **'स्वामी दयानन्द जी'** ने अपने प्रत्येक पुस्तक में **'आर्य, आर्यावर्त्त, आर्यभाषा'** इन संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग किया। आर्यों के संबंध में अरविन्द घोष ने भी कहा है कि- आर्य शब्द में उदारता, नम्रता, श्रेष्ठता, सरलता, साहस, पवित्रता, दया, निर्बल-संरक्षण, ज्ञान के लिए उत्सुकता, सामाजिक कर्त्तव्यपालन आदि सब उत्तम गुणों का समावेश है। काशी विश्वनाथ मंदिर में आज भी **'आर्यधर्मेतराणां प्रवेशो निषिद्धः'** आर्य धर्म से अलग लोगों का प्रवेश निषिद्ध है लिखा है। महाभारत काल में भी पत्नियाँ अपने पतियों को आर्यपुत्र से संबोधित करती थीं। हमारे यहाँ वेदों से लेकर, उपनिषद्, पुराण यहाँ तक कि सत्यनारायण की कथा जो कुछ समय से ही प्रचलित हुई है वहाँ भी सर्वत्र **'आर्य'** शब्द का ही प्रयोग मिलता है। कहीं भी हिन्दू शब्द का लेशमात्र चिह्न नहीं मिलता है। 'आर्यों' से अलग दूसरे प्रकार के लोग थे जिन्हें **'दस्यु'** कहते थे।

''विजानीह्यार्यान् ये च दस्यवः'' (ऋक्० १।५१।७)

हम आर्यों के साथ-साथ उनसे भिन्न दस्युओं को भी जानें। इस प्रकार मनुष्य श्रेष्ठ, गुण, कर्म के अनुसार **'आर्य'** कहलाते थे, यह जातिवाचक नहीं है। **'हिन्दू'** शब्द मुसलमानों द्वारा अपमानित करने के लिए मुगलकाल में मिला था।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्यों का चक्रवर्ती राज्य

परमात्मा ने जब सृष्टि की रचना की और नर नारियों की युवावस्था में उत्पत्ति हुई तब से लेकर महाभारत काल तक आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य रहा। महाभारत की लड़ाई व आपसी फूट से सब छिन्न-भिन्न हुआ। नौ सौ वर्ष तक मुगलों का शासन और सौ वर्ष तक अंग्रेजों के शासन से जो बची संस्कृति, शिक्षा रही उसका भी रूप बदल गया और धीरे-धीरे पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंग गया। आर्यों का गलत इतिहास बताया जाने लगा जिसका श्रेय लार्ड मैकाले को जाता है, जिसने १८५७ से लेकर १८८८ ई० तक लंदन में विचार-विमर्श के पश्चात् यह भ्रम फैलाया कि आर्य यहाँ के मूल निवासी नहीं बल्कि ईरान से आये हैं, जो आज तक प्रचलित है। वस्तुतः किसी भी देश का पतन करना हो तो उसकी न्याय, शिक्षा, संस्कृति को नष्ट कर दो वह देश हमेशा के लिए नष्ट हो जायेगा। यही कार्य अंग्रेजों ने किया जिससे आज तक पाश्चात्य सभ्यता का बोलबाला है।

सन् १९०७ ई० की सत्य घटना है कि यहाँ से प्रकाण्ड विद्वान् डा० रघुवीर जी रूस में साइबेरिया गये और देहात के जंगली इलाके में घूम रहे थे। उनके साथ वहाँ की भाषा जानने वाला भी था। एक जगह पर गड़ेरिया भेड़ चरा रहा था जब उसे पता लगा कि ये भारतवर्ष से आये हैं, तो उसके पास एक ताम्रपत्र था जो उसे वहाँ जतीन से मिला था उसने डा० रघुवीर को दिखाया। उसमें रशियन भाषा में महर्षि पाणिनि की कृति 'अष्टाध्यायी' का आखिरी सूत्र **अ अ** लिखा था, जिसे डा० रघुवीर ने दुभाषिये द्वारा पढ़वाया तो पता चला। उस ताम्रपत्र को वे अपने साथ ले आये। इससे सिद्ध होता है कि पहले समय में आर्यों की संस्कृति सभ्यता पूरे विश्व में फैली थी। आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य रहा जो आर्यावर्त के मूल निवासी थे।

जब रघुगण राजा थे तब रावण भी यहाँ के अधीन था। श्रीराम के समय में विरुद्ध हो गया तो उसको श्रीराम ने मृत्युदण्ड देकर उसके राज्य को उसके भाई विभीषण को दिया। स्वायंभुव राजा से लेकर पांडव पर्यन्त आर्यों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का चक्रवर्ती राज्य था जो बाद में आपसी फूट से लड़कर छिन्न-भिन्न हुआ। आदि सृष्टि से लेकर पांच हजार वर्ष से पूर्व समय आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य इस भूमंडल पर था, जो छोटे राज्य थे वे सब इनके आधीन थे। सृष्टि के आदि में मनुस्मृति इसका प्रमाण है। पाँच हजार वर्षों के पूर्व वेदमत से भिन्न दूसरा कोई मत नहीं था। महाभारत युद्ध के पश्चात् विद्वान्, राजा, ऋषि आदि मारे गये और नाना पन्थों का प्रचलन शुरू हुआ जो आज चरम सीमा पर है।

महाभारत युद्ध के पूर्व श्रीकृष्ण तथा अर्जुन अग्नियान नौका पर बैठ के पाताल (अमेरिका) गये वहाँ से उद्दालक ऋषि को राजा युधिष्ठर के यज्ञ में उपस्थिति हेतु लाये थे। धृतराष्ट्र का विवाह गांधार जिसको आज कंधार कहते हैं वहाँ की राजपुत्री गांधारी से हुआ था। पाण्डु की धर्मपत्नी माद्री ईरान के राजा की पुत्री थीं। अर्जुन का विवाह पाताल (अमेरिका) वहाँ के राजा की पुत्री उलोपी से हुआ था। चीन का राजा भगदत्त, अमेरिका का बभ्रुवाहन, योरोप देश का विडालाक्ष, यवन जिसको यूनान कहते हैं। ईरान का शल्य आदि सब राजसूय यज्ञ और महाभारत युद्ध में आये थे।

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ।।
(मनु० २।२०)

इसी आर्यावर्त देश में उत्पन्न हुए अग्रजन्मा विद्वानों के चरणों में बैठकर भूगोल के सभी मुनष्य विद्या का अध्ययन करें। ।।सम्पा०।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्रता आन्दोलन में आर्यसमाज का योगदान[1]

हम जब भी पराधीन हुए या दुःख सागर में डूबे हैं तो उसके मूल में आपसी फूट निष्क्रियता, अकर्मण्यता, विवेकहीनता स्वार्थपरता वेद के पठन-पाठन-मनन-चिन्तन का अभाव ही कारण रहा है। पराधीनता की बेड़ियाँ तथा कष्ट तभी दूर हुए जब इस धरा पर पुण्यात्मा या वीर पुरुषों का पदार्पण हुआ है।

पुण्यात्मा ऋषि दयानन्द जी के आगमन का काल भी इन परिस्थितियों से अछूता न था। भारतमाता कई सौ सालों की गुलामी की पीड़ा से कराह रही थी, ऐसे संकट काल में भारत को स्वतंत्र कराने तथा समाजोत्थान के लिए दयानन्द और गुरु विरजानन्द जी ने वह कार्य किया जो कि **'न भूतो न भविष्यति'** हुआ। उनसे पूर्व जितने भी विचारक, समाज-सुधारक, दार्शनिक हुए सबने मनुष्य जीवन के एकाङ्गी विकास पर ध्यान दिया, चाहे वे **शंकराचार्य, कबीर, तुलसी, रामानुजाचार्य, नानक, परमानन्ददेव, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द** हों, ये सभी केवल ईश्वर-सिद्धि द्वैताद्वैत में लगे रहे। समाज का कोई एक अंग पकड़कर उसी के चिंतन में लगे रहे, जिससे एक अपंग समाज का निर्माण ही संभव था। ऐसे समय में **'आर्यसमाज'** ही एक ऐसी संस्था सामने आई थी जो सार्वभौम, सर्वहितकारी सर्वाङ्गपूर्ण, मानव समाज के निर्माण का डंका बजाने में सक्षम रही, जिसने व्यष्टि से समष्टि तक एक झोपड़ी से लेकर देश ही नहीं विश्व तक आत्मा से परमात्मा तक का उत्कृष्ट पथ समाज को प्रदान किया था। **'राजा राममोहन राय'** ने समाज-सुधार की दिशा में ब्राह्मसमाज की स्थापना की किंतु यह तत्कालीन ब्रिटिश शासन की विचारधारा से अछूता न रहा और इसी आधार पर इन्होंने अपने गौरवमय इतिहास को हीन दृष्टि से देखने में भी संकोच न किया।

इन विषम परिस्थितियों में तो **'ऋषि दयानन्द जी'** ने ही हुंकारा था कि- **'कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है।'** मत-मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा, न्याय, दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं- **'ग्यारहवें समुल्लास'** में महर्षि दयानन्द स्वदेश की प्रशंसा करते हुए लिखते हैं कि- **आर्यावर्त्त देश ही वह सच्चा पारसमणि है, जिसको लोहे रूपी दरिद्र विदेशी छूते ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।**

---

१. प्रस्तुत आलेख 'पाणिनि कन्या महाविद्यालय' वाराणसी की सन् १९९८ में छपी 'रजत जयन्ती स्मारिका' से उद्धृत किया है जिसे वहाँ की अधीत स्नातिका 'सुश्री मधु आचार्या' ने लिखा था।। सम्पा०।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव समाज उन्नति के पथ पर तभी अग्रसर होता है जब मनुष्य अंधविश्वासों को त्यागकर अपने मौलिक स्वतन्त्र चिंतन के आधार पर सत्यासत्य का निर्णय करने में स्वयं प्रवृत्त हो। भारत में सर्वप्रथम अंग्रेजों का सूत्रपात सन् १७५७ के प्लासी युद्ध से हुआ। सन् १७५७ से १८४७ तक अंग्रेजों को भारत में अपना प्रभुत्व स्थापित करने में लगा था। उसके बाद अपना शासन स्थापित कर अंग्रेजों ने भारतीयों पर नाना प्रकार के अत्याचार तथा अमानवीय जुल्म ढाने शुरू कर दिये जो सन् १८५७ तक निर्बाध रूप से चलता रहा।

भारत के प्रथम स्वतन्त्रता आन्दोलन ३० मई सन् १८५७ के प्रमुख प्रेरक थे **'पूज्य गुरु विरजानन्द तथा उनके प्रखर शिष्य स्वामी दयानन्द'**। इन्हीं से प्रेरणा लेकर **तात्याटोपे, नानासाहब, लक्ष्मीबाई, वीरकुँवर सिंह, अजीमुल्ला खाँ स्वतन्त्रता संग्राम में कूदे थे**। सन् १८५७ के विद्रोह की चिनगारी को अग्नि बनने से कोई शक्ति रोक नहीं सकती थी, परिणामस्वरूप निश्चित समय से पूर्व ही सैनिक **'मंगलपांडे'** के फौलादी रक्त ने २९ मार्च १८५७ को सार्जेन्ट ह्यूसन और लेफ्टिनेन्ट बॉव्ह को बन्दूक की गोलियों से भून डाला। ऐसा साहस ऋषि के शिष्यों में ही हो सकता था। मंगल पांडे ने सार्जेन्ट को मारने के पूर्व **'ऋषि दयानन्द'** से अपनी सफलता के लिए आशीर्वाद लिया था। इस प्रकार स्वतन्त्रता संग्राम के इस यज्ञकुंड में सर्वप्रथम आहुति आर्यों की ओर से ही दी गई। इस स्वाधीनता संग्राम में यद्यपि उत्साहजनक सफलता प्राप्त हुई पर आपसी वैमनस्य के कारण सफलता-असफलता में परिणत हो गयी, फिर भी स्वतन्त्रता की लड़ाई रुकी नहीं और वह अंदर ही अंदर सुलगती रही।

'दयानन्द जी' ने पराधीनता के कारणों के परिप्रेक्ष्य में, समाज में व्याप्त कुरीतियाँ, अशिक्षा, एकता का अभाव, फूट, धर्म के नाम पर पाखंड, बाल विवाह आदि को माना है। समाज के इन दोषों को दूर करने के उद्देश्य से महर्षि ने ग्रन्थ चतुष्टय **'सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका, आर्याभिविनय, संस्कार विधि** तथा अन्यान्य ग्रन्थों' की रचना की। **'आर्याभिविनय'** में पराधीन देश की वेदना को ऋषि ने निम्न शब्दों में लिखा है।

'हे महाराजाधिराज प्रभो! अखंड चक्रवर्ती राज्य के लिए शौर्य, धैर्य, नीति, विनय, पराक्रम और बलादि उत्तम गुणयुक्त कृपा से हम लोगों को यथावत् पुष्ट करिये, जिससे अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी न हों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा हम लोग कभी पराधीन न हों इन दोनों के लिए हमें समर्थ करो। आगे पुनः सब स्वदेश भक्त हमारे उत्तम राज्य में हों, हमारा अखंड ऐश्वर्य सदा आपकी महान् कृपा से बना रहे।

इन विचारों का प्रचार उस समय किया गया जब इण्डियन नेशनल कांग्रेस के नेता भी अंग्रेजी शासन को भारत के लिए वरदान समझते थे। क्योंकि इसके संस्थापक मि० **ह्यूम** थे- जिसने १८५७ के गदर में अनगिनत लोगों को फाँसी तथा काले पानी की सजा दी थी। ऐसे लोगों द्वारा स्थापित कांग्रेस का उद्देश्य क्या राष्ट्रहित में हो सकता था। कांग्रेस का प्रारम्भिक कार्य बस सरकार की जी हुजूरी करना ही था। बाद में इसकी बागडोर जब आर्यों के हाथों में आई तब इसका उद्देश्य देशहित में कार्य करने का हुआ।

आर्यसमाज ने असंख्य ऐसे क्रान्तिकारियों को जन्म दिया जिन्होंने स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर अपने को न्योछावर कर दिया। आर्यसमाज के संस्थापक **'स्वामी दयानन्द'** ने ही **श्याम जी कृष्ण वर्मा** को आधुनिक उद्योग धन्धों की शिक्षा तथा सामरिक ज्ञान प्राप्त करने और **अप्रवासी** भारतीयों में शस्त्रशक्ति द्वारा देश के प्रति मर-मिटने की भावना को उद्दीप्त करने के उद्देश्य से इंग्लैंड भेजा था। श्याम जी अपनी कुशाग्र बुद्धि के कारण शीघ्र ही बैरिस्टर बन भारत वापिस आये। अंग्रेजों की चाटुकारिता पसंद न होने के कारण वे सन् १८९७ को इंग्लैण्ड के प्रवासी बन गये। इंग्लैण्ड प्रवास में आपने सन् १९०५ में इंडिया-होमरूल सोसायटी तथा इंडिया हाउस की स्थापना की, साथ ही अपने विचारों को प्रकट करने के लिए इण्डियन सोश्योलोजिस्ट नामक मासिक पत्रिका भी निकाली। इंग्लैण्ड में कर्नल वायली की हत्या करने वाले **'मदनलाल धींगरा'** ने श्याम जी कृष्ण वर्मा से ही क्रांतिकारी प्रेरणा प्राप्त की थी। **'चाफेकर बंधुओं'** को सन् १८९७ में पूना में **मि० रैण्ड** की हत्या का मार्गदर्शन **श्याम जी कृष्ण वर्मा** ने ही किया। **'वीर सावरकर'** ने **'श्याम जी कृष्ण वर्मा'** को स्वतन्त्रता संग्राम का प्रथम योद्धा कहा है। **'वीर सावरकर'** भी अण्डमान जेल में क्रान्तिकारियों को **'सत्यार्थ प्रकाश'** पढ़ाया करते थे। जिसे देखकर एक अंग्रेज अफसर ने इसे ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ें खोखली करने वाला बताया।

स्वदेशी कपड़े अपनाने और विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार का कार्य सामूहिक रूप से प्रथम आर्य समाज लाहौर ने किया। इस आंदोलन का

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेतृत्व प्रसिद्ध आर्य नेता **'लाला साईंदास तथा लाला मूलराज'** ने किया था। इसके अलावा आर्यसमाज ने देश की उन्नति के लिए स्वदेशी उद्योग धंधों और लघु अध्यवसायों की तरफ ध्यान दिया। जन-जन में राष्ट्रीय चेतना जगाने के लिए अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन किया। जिनमें **ट्रीब्यून, आर्मी-न्यूज, आर्य पत्रिका, पंजाबी** आदि का प्रमुख स्थान था। इसी क्रम में शिक्षण के लिए **डी०ए०वी० कालेज की स्थापना तथा गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना सन्** १८९१ में पंजाब मैटीरियल इम्प्रूवमेंट-सोसायटी तथा १८९३ में पंजाब बैंकिंग कारपोरेशन और १८९५ में पंजाब नेशनल बैंक की स्थापना की गई जिससे भारतीय स्वयं निर्भर हो सकें। इन कार्यों को मूर्तरूप देने में प्रसिद्ध **आर्य नेता लाला मूलराज, जैशीराम, गणपतराय-गोकुलचन्द नारंग ईश्वरदास, आमोलक राम, हँसराज जी तथा लाला लाजपतराय थे।** सन् १९०८ में मिर्जापुर-बुन्देलखण्ड, गोण्डा आदि में भीषण दुर्भिक्ष पड़ा जिसमें पीड़ितों की सहायता लाला लाजपतराय जैसे आर्यवीरों ने की, जो देशभक्ति की तीव्र भावना से ओतप्रोत थे। इन्हीं लाजपत राय ने महर्षि व आर्यसमाज की कृतज्ञता का ज्ञापन करते हुए कहा कि- **'आर्यसमाज मेरी माता तथा दयानन्द मेरे पिता समान हैं।'** ३० नवम्बर, १९०५ को इंग्लैण्ड से लौटने पर **लाला लाजपतराय जी** ने अपने अपूर्व स्वागत को देख गद्गद कण्ठ से कहा था कि मेरे अंदर जितने भी गुण हैं, वे सब आर्यसमाज की देन हैं। इन्होंने अमेरिका में इण्डियन होमरूल लीग की स्थापना की तथा कुछ पत्रिकाओं- दि पिपुल यंग इंडिया, वन्देमातरम् और कुछ पुस्तकों का भी प्रकाशन किया जिनमें प्रमुख हैं- तरुण भारत, इंग्लैंड पर भारत का ऋण, भारत का राजनैतिक भविष्य आदि।

स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास में सर्वप्रथम लाला लाजपतराय को सशस्त्र क्रान्ति के आरोप में देश निकालने का दण्ड दिया गया। ऐसे महापुरुष की मृत्यु लाहौर में साइमन कमीशन का बहिष्कार करते समय साण्डर्स के घातक दण्ड प्रहार से १७ नवम्बर सन् १९२८ को हुई। मरते-मरते भी पंजाब केशरी दहाड़ उठा कि- **'मेरे शरीर पर पड़ी एक-एक लाठी ब्रिटिश साम्राज्य के ताबूत की कील साबित होगी।'** इस आदर्श पुरुष की मृत्यु का बदला **'चन्द्रशेखर आजाद भगत सिंह'** आदि ने अन्ततः साण्डर्स की हत्या करके ही लिया। स्वाधीनता संग्राम में जिन वीरवरों ने स्वार्थ को

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्यागकर अपना खून बहाकर भारतमाता की परतन्त्रता की बेड़ियाँ काटी हैं उनमें ९० प्रतिशत वीर आर्य समाज ने ही पैदा किए हैं। इस तथ्य को सभी ने स्वीकार किया है। अंग्रेज सरकार आर्यसमाजियों से बहुत भयभीत रहा करती थी। सोते-सोते अंग्रेज अफसर आर्य शब्द सुनते ही मानो हड़बड़ा कर उठ बैठते थे। यदि कोई आर्य सेना में होता तो उसे आर्यसमाज छोड़ने के लिये बाध्य किया जाता अथवा उसकी नौकरी छीन ली जाती थी। झाँसी में दौलतराम नाम के एक आर्य सैनिक छावनी में **सत्यार्थ प्रकाश के ११वें समुल्लास पर व्याख्यान** दिया करते थे, फलस्वरूप उन्हें पकड़कर जेल में ही सड़ा दिया गया था। आर्यसमाज द्वारा संचालित गुरुकुलों पर भी कड़ी निगरानी रखी जाती थी। एक भयभीत गवर्नर ने गुरुकुल कांगड़ी का फर्श तक तुड़वाकर देखा कि इसके तहखाने में कहीं बम बनाने का कारखाना तो नहीं है। इस गुरुकुल के पीछे अंग्रेज सरकार ने कई जासूस लगा रक्खे थे, जो गुरुकुल की गतिविधियों की सूचना सरकार को देते रहते थे। इसी गुरुकुल में चित्रकला के आचार्य के रूप में नियुक्त वेदों के प्रसिद्ध विद्वान् श्रीपाद दामोदर सातवलेकर को सन् १९०८ में एक जासूसी डाकिया द्वारा सरकार को सूचना देने के आधार पर गिरफ्तार कर लिया गया।

निःस्वार्थ भाव से चलने वाले गुरुकुल के विद्यार्थी देश, धर्म पर मिट जाने की शपथ खाकर गुरुकुल भूमि से बिदा होते थे। जिनमें प्रमुख **'यशपाल, सुखदेव, राजगुरु, धर्मदेव विद्यालंकार, पंडित अमरनाथ** तथा **हरिश्चन्द्र विद्यालंकार** आदि थे। सन् १९३९ में हैदराबाद सत्याग्रह में भी इसी गुरुकुल के वीरों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया था। एक सरकारी रिपोर्ट में गुरुकुल के लिए यहाँ तक कहा गया कि यह ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ें खोखली करने वाला अत्यन्त भयंकर तथा रहस्यमय खतरे का केन्द्र है। उनका सोचना स्वाभाविक था, क्योंकि इसके संस्थापक **अमर हुतात्मा-स्वामी श्रद्धानन्द जी थे,** जिन्होंने रौलट एक्ट के विरोध में जुलूस का नेतृत्व किया और छाती खोलकर गोरखा रेजीमेन्ट के सामने खड़े हो गये जिससे जवानों की संगीन नीची हो गई। दिल्ली की प्रसिद्ध जामा मस्जिद जिसमें आज तक के इतिहास में मुसलानों के अलावा ऐसा कोई नरवीर नहीं हुआ कि जिसने मस्जिद की मीनार पर खड़े होकर व्याख्यान दिया हो। अकेले स्वामी जी ने ३० मार्च सन् १९१९ को हिन्दू मुस्लिम एकता पर ऋग्वेद का यह मंत्र **'त्वं**

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हि नः पिता वसो, त्वं माता शतक्रतो बभूविथ। अधा ते सुम्नमीमहे।। (ऋक्० ८।९८।११ तथा अथर्व० २०।१०८।२) इस वेदमंत्र से प्रारम्भ कर अंत में ओ३म् शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः द्वारा अपना वह ऐतिहासिक व्याख्यान समाप्त किया था। अपनी अज्ञानता या विवशता द्वारा अधर्मी बने हिंदुओं को शुद्धि-आन्दोलन द्वारा पुनः सर्वमान्य वैदिक धर्म में दीक्षित कर सम्पूर्ण राष्ट्र में एक धर्म, एक संस्कृति का प्रचार-प्रसार किया जो उस समय में नितान्त आवश्यक था।

स्वराज्य के जन्मदाता स्वतन्त्रतान्दोलन के लिए प्रेरणास्रोत महर्षि स्वामी दयानन्द और आर्यसमाज का राष्ट्र के प्रति प्रत्येक क्षेत्र में योगदान है। सत्यार्थ प्रकाश में सर्वप्रथम स्वामी दयानन्द जी ने १८७५ में स्वराज्य की घोषणा की, जबकि १९०६ में कांग्रेस के मंच से दादाभाई नौरोजी ने स्वराज्य की घोषणा की थी। बाल गंगाधर तिलक ने १९१६ में **'स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है'** यह घोषणा की थी। दादा भाई नौरोजी ने इस बात को स्वीकार करते हुए कहा था कि **'स्वराज्य'** शब्द मैंने दयानन्द जी के ग्रन्थों से सीखा था। इसी प्रकार देश स्वतन्त्र होने पर कांग्रेस अध्यक्ष पट्टाभिसीतारमैया ने कहा कि **'आज हम जिस स्वतन्त्रता के वृक्ष के फलों का रसास्वादन कर रहे हैं उसे महर्षि दयानन्द जी ने ही लगाया था।'**

१८७२ में लार्ड नार्थब्रुक से वार्ता के दौरान लार्ड ने महर्षि दयानन्द जी से कहा कि आप अपनी प्रार्थना में ईश्वर से अंग्रेजी राज्य की स्थिरता, समृद्धि की कामना किया करें, तो महर्षि ने बड़े स्पष्ट शब्दों में उत्तर दिया था **मैं तो प्रतिदिन ईश्वर से यही प्रार्थना करता हूँ कि यह अंग्रेजी राज्य शीघ्र ही नष्ट हो जावे।** इस उत्तर को सुन लार्ड ने चकित होकर आज्ञा दिया कि इस फकीर पर कड़ी नज़र रक्खी जावे। ब्रिटिश शासन की **'किसी देश को सदियों पराधीनता की गुलामी में जकड़ना हो तो उस देश के इतिहास को ही नष्ट कर दिया जाय'** इस कूटनीतिक चाल को **स्वामी दयानन्द** जी भलीभाँति जानते थे, इसी से वैदिक सभ्यता वेद के मार्ग पर चलने के लिए वे प्रेरित करते थे।

सभी आन्दोलनों का सूत्रपात आर्यसमाज ही करता था तभी 'पट्टाभिसीतारमैया' ने कहा कि आर्यसमाज में राष्ट्रभक्ति के भाव प्रबल हैं। एक अंग्रेज **सर वेलिंगटाइन** ने आर्यसमाज पर टिप्पणी करते हुए **'अनरेस्ट इन इंडिया'** में लिखा कि कुछ वर्षों से आर्यसमाज ब्रिटिश विरोधी आन्दोलन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में प्रमुख रूप से उभरा है। दिनकर ने भी **'संस्कृति के चार अध्याय'** में लिखा कि भारत का आत्माभिमान **'दयानन्द'** में निखरा था। फ्रांस के प्रसिद्ध विद्वान् **'रोम्या'** के शब्दों में दयानन्द की प्रौढ शिक्षायें उनके देशवासियों की विचारधारा के अनुकूल थीं, उनकी शिक्षाओं से राष्ट्रीयता का सर्वप्रथम नवजागरण हुआ। **'सुभाषचन्द्र बोस'** ने कहा कि **पंजाब का प्रत्येक क्रान्तिकारी आर्यसमाजी है** तथा आधुनिक भारत का निर्माण **'दयानन्द'** ने ही किया। 'बैब्ले' ने भी कहा कि वर्तमान स्वतन्त्र भारत की आधारशिला दयानन्द जी ने रखी थी। वीर सावरकर कहते थे- **जिस स्वाधीनता का मैं चिंतन करता हूँ उसमें दयानन्द का सत्यार्थप्रकाश अत्यन्त सहायक है, मैं तो दयानन्द का पक्का चेला हूँ।**

पराधीनता काल में अनेक क्रान्तिकारियों के लिए **'सत्यार्थप्रकाश'** ग्रन्थ प्रेरणास्रोत था। इसे पढ़कर एक आर्य क्रान्तिकारी **'परमानन्द'** के बलिदान को देखकर **रामप्रसाद बिस्मिल** ने क्रान्तिकारी बनने की प्रेरणा ली थी। **'बिस्मिल'** अपनी आत्मकथा जिसे उन्होंने अपने फांसी से तीन दिन पूर्व लिखकर पूर्ण किया था। उसमें लिखते हैं कि सन् १९१६ में जब लाहौर षड्यन्त्र में **'परमानन्द'** जी को फांसी की सजा हुई तो मेरे शरीर में आग लग गई, मैंने प्रतिज्ञा की कि अंग्रेजों से इस अत्याचार का बदला अवश्य लूँगा, आजीवन अंग्रेजों का नाश करता रहूँगा। उसी दिन से मेरे क्रान्तिकारी जीवन का आरम्भ हुआ। काकोरी काण्ड के प्रमुख नेता इनके सहयोगी **मुकुन्दलाल, रोशन सिंह, गेंदालाल दीक्षित, अशफाक उल्ला खाँ** आदि थे। **अशफाक उल्ला खाँ** मुसलमान होते हुए भी **बिस्मिल** के साथ रहने से विचारों से आर्यसमाजी था तभी तो १०-१२ व्यक्तियों के सहयोग से इस काण्ड को अंजाम दिया। इसमें से गिरफ्तार **रोशन सिंह** ने **'ओ३म्'** का जाप करते हुए तथा **बिस्मिल** ने **'विश्वानि देव'** आदि प्रार्थना के आठो-मंत्रों का जाप तथा **'ब्रिटिश साम्राज्य'** का नाश हो कहकर फांसी के फन्दे को स्वयं गले में डालकर मृत्यु का वरण किया था। **'बिस्मिल'** ने देश के प्रति अपनी आत्म-वेदना को बड़े मार्मिक शब्दों में व्यक्त किया है।

'यदि देशहित मरना पड़े मुझको सहस्रों बार भी,
तो भी न मैं इस कष्ट को निज ध्यान में लाऊँ कभी।
हे ईश! भारतवर्ष में शतबार मेरा जन्म हो,
कारण सदा ही मृत्यु का देशोपकारी कर्म हो।।'

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंडित गेंदालाल दीक्षित भी प्रसिद्ध आर्यसमाजी थे। क्रान्तिकारी गतिविधियों में भाग लेने के बाद कई दिनों तक वे अपनी वर्दी तथा बूट नहीं उतारते थे। आर्यसमाज उस समय क्रान्तिकारी शक्ति का केन्द्र कहा जाता था।

राजस्थान के **कुँवर प्रताप सिंह, पिता केशरी सिंह, दादा कृष्ण सिंह को ऋषि दयानन्द** का शिष्य होने का गौरव प्राप्त था। देशभक्ति के कारण इस परिवार की तीनों पीढ़ियों को गोरी सरकार ने अमानुषिक यातनायें देकर बरबाद कर दिया। इसी प्रकार दादा **अर्जुन सिंह के तीनों पुत्र सरदार किशन सिंह, स्वर्ण सिंह, अजीत सिंह थे। सरदार किशन सिंह के पुत्र भगत सिंह** जो पंजाब के लायलपुर शहर में सन् १९०७ को देशभक्त परिवार में जन्मे थे, जब इनका जन्म हुआ उसी समय इनके चाचा **स्वर्ण सिंह, अजीत सिंह** देशभक्ति के आरोप में बंद थे जो जेल से छूटकर आये थे। इनके **दादा अर्जुन सिंह** को दयानन्द जी ने स्वयं वैदिक धर्म की दीक्षा दी थी। **भगत सिंह** की शिक्षा लाहौर के डी० ए० वी० कालेज में हुई। इनके अध्यापक **लाला लाजपतराय, परमानन्द** जैसे आर्य विद्वान् रहे, यहीं इनका परिचय **सुखदेव, यशपाल, भगवती चरण** आदि से हुआ। ये भारतवासी समाजवादी प्रजातन्त्र सेना तथा नौजवान भारत सभा के सदस्य थे। **सुखदेव** भी इसी सेना के कार्यकर्त्ता थे। ९ अप्रैल १९२९ को दिल्ली में सार्वजनिक सुरक्षा विधेयक के विरुद्ध केन्द्रीय असेम्बली में अंग्रेज सरकार के कान खोलने के लिए बम फेंका गया उसमें **भगत सिंह** के साथ **सुखदेव** भी थे। जिन्होंने अपने विद्यार्थी काल में आर्य युवक समाज के मंत्री के रूप में कार्य किया था। बम फेंकने के बाद चाहते तो वे भगदड़ में भाग सकते थे परन्तु क्रान्ति की अग्नि को प्रज्वलित करने हेतु उन्होंने स्वयं अपनी गिरफ्तारी दी। अन्त में २३ मार्च, १९३१ को भयभीत सरकार ने **शहीदे आजम भगत सिंह, राजगुरु, सुखदेव** को लाहौर के सेन्ट्रल जेल में फाँसी देकर गुप्त रूप से सतलुज के किनारे मिट्टी के तेल से शव जलाकर नदी में बहा दिया। इस प्रकार भारत का यह सपूत भारत के लिए बलिदान हो गया।

सन् १८५७ में **दयानन्द जी** ने सत्यार्थ प्रकाश में **नून व पौन रोटी** पर लगे कर की निन्दा की। महर्षि के इस कथन से प्रेरित होकर ५५ वर्ष बाद गाँधी जी ने १९३० में प्रसिद्ध दाण्डी मार्च द्वारा नमक आन्दोलन किया। इस विषय में डा० राजेन्द्र प्रसाद का यह कथन कि- **महात्मा गाँधी जी ने**

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो भी कुछ अच्छा किया वह सब महर्षि दयानन्द के सूत्रों का भाष्य बिल्कुल सही है।

अब केन्द्र सरकार ने (१९९१-१९९६) अपने पूर्वजों के त्या बलिदान को ताख पर रखकर विदेशी कम्पनी को भारत में नमक बनाने अनुमति दी और इसी प्रकार प्रतिदिन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का भारत आगमन हो रहा है। अभी जल्दी ही केन्द्र के एक मंत्री ने विदेश जाकर भारत में आने तथा उद्योग धंधा लगाने का निमंत्रण दिया।

सचमुच आज हम कितने पतित हो गये हैं कि अभी आजादी प्राप्ति के वर्ष भी पूरे नहीं हुए और स्वार्थ में डूब कर सोने की चिड़िया कहलाने व भारत को घोटालों का देश बना दिया। आज दुनियाँ के भ्रष्टतम देशों में भा का आठवाँ स्थान है और वह दिन दूर नहीं जब यह शीर्ष स्थान पर होगा, शर्म की बात है, हमारे पूर्वजों ने क्या यही दिन देखने के लिए स्वतन्त्र दिलायी थी ? हमने अपने वीर क्रान्तिकारियों के सपनों को रौंद डाला जो फाँसी पर हँसते हुए चढ़ते थे और कहा करते थे-

इलाही वह भी दिन होगा, जब अपना राज देखेंगे।
जब अपनी ही जमीं होगी, जब अपना आसमां होगा।।

मेरा अनुरोध है देश के उच्चपदासीन लोगों से कि **वे केवल नरम द के गाँधी, नेहरू का ही नाम न लें अपितु सर्वस्व त्यागी गर्म दल चन्द्रशेखर आजाद, सुभाषचन्द्र बोस, लाला लाजपतराय, भगतसिं राजगुरु** आदि क्रान्तिकारियों को भी स्मरण रक्खें जिन्होंने देश पर मर मिट की कसम खाई थी।

११ नवम्बर, १९५४ को ऋषि दयानन्द निर्वाणोत्सव पर **लौह पुरु सरदार वल्लभ भाई पटेल** ने कहा था कि **'दयानन्द जी'** ने देश किंकर्त्तव्यविमूढ़ता के गहरे खड्डे में गिरने से बचाया था तथा भारती स्वाधीनता की नींव डाली थी। **ऋषि दयानन्द जी** जाज्वल्यमान नक्षत्र समान थे जो भारतीय आकाश पटल पर छा गये, उन्होंने निद्रा में सो भारतीयों को जगाया। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के **प्रोफेसर टाम्स** ने कहा कि यदि **'दयानन्द जी'** को अधिक समय तक जीने का अवसर मिलता तो वे अपने अनुयायियों के लिए एक शक्तिशाली साम्राज्य की स्थापना कर जाते।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षि गाथा एवं कर्म मीमांसा

नाम- दयाराम मूलशंकर जी

पिता- श्री करसन जी तिवारी

माता- श्रीमती अमृता बाई जी

जन्मस्थान- फाल्गुन कृष्ण पक्ष दशमी सम्वत् १८८१ (सन् १८२४) में टंकारा (गुजरात)

यज्ञोपवीत संस्कार- सन् १८३४ में।

बोध- सन् १८३६ में डेमी नदी किनारे बड़े शिवमंदिर, शिवरात्रि वाले दिन हुआ था एवं प्रभु प्राप्ति का संकल्प भी उसी दिन लिया था तथा सम्पूर्ण **यजुर्वेद कंठस्थ** हुआ था सन् १८३८ में।

गृहत्याग- सन् १८४५ में और **ब्रह्मचर्य की दीक्षा** ली थी सन् १८४६ में।

संन्यास दीक्षा- स्वामी पूर्णानन्द जी से सन् १८४८ में। नाम पड़ा **दयानन्द सरस्वती।**

हरिद्वार कुम्भ में आये थे- सन् १८५५ में।

बनारस कुम्भ में आये थे- सन् १८५६ में।

कन्याकुमारी में **नाना साहिब को संन्यास की दीक्षा** दी थी सन् १८५९ में।

मथुरा में श्री **स्वामी विरजानन्द जी दण्डी को गुरु धारण** किया था सन् १८६० में १४ नवम्बर को।

शिक्षा समाप्त हुई गुरु आश्रम में ता०-७।४।१८६३ को।

हरिद्वार कुम्भ पर मोहन आश्रम में **कैम्प** और **पाखंड खंडिनी पताका** लहराई थी ता० १२।३।१८६७ में।

महर्षि दयानन्द सरस्वती प्रयाग में तीन बार क्रमशः सन् १८६८, १८६९, १८७४ में आये थे।

कलकत्ता में **योगी का आत्मचरित्र** पुस्तक लिखी ता०२२।३।१८७३में।

अलीगढ़ में **हाथी पर बैठकर जुलूस में गये** ता० २६।१२।१८७३ को।

सत्यार्थ प्रकाश लिखा ता० ७।६।१८७४ को।

मुम्बई में **आर्यसमाज की स्थापना** ता० ७।४।१८७५ को।

संस्कार विधि लिखी बड़ौदा में सन् १८७६ में।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सन् १८७७ में।

जीवन चरित्र प्रकाशित किया ता० १५।१२।१८७९ में।

देहत्याग एवं **मोक्ष प्राप्ति** अजमेर में दीपावली की रात्रि ता० ३०।१०।१८८३ में **सम्पूर्ण जीवन आयु** ५९ वर्ष।

मुस्लिम जागृति के सूत्रधार सर सैय्यद ने उनसे बनारस, अलीगढ़ में विस्तार से विचार-विमर्श किया था। वे स्वामी जी के सुधार कार्यों के प्रशंसक थे तथा उन्हें ईश्वर एक है इसका प्रबल समर्थक मानते थे। स्वामी जी के निधन के पश्चात् सर सैय्यद साहब ने ऐंग्लो मोहमडन कालेज अलीगढ़ के मुख्य पत्र में दयानन्द जी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उन्हें महान् देशभक्त बताया था। लाहौर के एक उदार मुस्लिम डा० रहीम खाँ ने तो स्वामी दयानन्द जी के आतिथ्य तथा उनके प्रवचनों की व्यवस्था स्वयं ली थी, जब उन्हें पता लगा कि पंजाब में स्वामी जी को आमंत्रित करने वाले ब्राह्म लोगों ने सैद्धान्तिक मतभेद के कारण उनके भोजन, निवास तथा प्रचार की व्यवस्था से हाथ खींच लिया है तो उस मानवतावादी मुस्लिम ने स्वामी जी को अपनी कोठी पर आमंत्रित किया उनके भाषण की भी व्यवस्था किया। लाहौर की प्रसिद्ध आर्यसमाज की स्थापना २२ जून सन् १८७७ को डा० रहीम खाँ की कोठी पर हुई थी और आर्यसमाज के दस नियम भी वहीं पर निर्धारित किए गये जो मानवता के लिए एकता के स्वर्णिम सूत्र हैं।

जब सन् १८८३ के अक्टूबर मास में स्वामी जी जोधपुर में एक घातक षड्यंत्र के शिकार होकर मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे थे उस समय समस्त देश को इस बात की सूचना एक मुसलमान पत्रकार मौलवी मु० मुराद अली ने अपने उर्दू पत्र **"राजपूताना गजट"** द्वारा दिया था। मुराद अली स्वामी जी के देशभक्ति पूर्ण विचारों के प्रशंसक थे और उनके चलाये गये गोरक्षा आन्दोलन के प्रबल समर्थक थे। स्वामी दयानन्द को अनेक ईसाई पादरियों से सौहार्द भाव रहा। पादरी पार्कर, पादरी नोबेल ने 'शाहजहाँपुर' के ग्राम चांदापुर में स्वामी जी से धार्मिक, दार्शनिक बातों पर शास्त्रार्थ किया था, किंतु वे लोग स्वामी जी की विद्वत्ता, देशभक्ति तथा सत्यनिष्ठा के परम प्रशंसक थे। ऐसा ही शास्त्रार्थ स्वामी जी ने पादरियों से 'अजमेर, फर्रुखाबाद, लुधियाना, बरेली' में किया था, परन्तु कहीं कटुता न रही। बरेली के पादरी डा० टी० जे० स्काट तो स्वामी जी की मानवता, चारित्रिक गरिमा के प्रशंसक थे।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने शिष्यों के साथ स्वामी जी के भाषण सुनने के नियमित श्रोता थे। एक दिन रविवार को बरेली चर्च में उपासना के बीच स्वामी जी अपने चार सौ भक्तों के साथ गये और वहाँ पर अपना भाषण दिया और अद्वितीय परमात्मा की पूजा का उपदेश दिया था। पंजाब प्रवास के समय स्वामी जी को सिख अनुयायियों के सम्पर्क में आने का अवसर मिला था, अनेक सिख भक्त अनुयायी बने उनमें भाई जवाहिर सिंह, ज्ञानी दित्त सिंह, बाबा अर्जुन सिंह, बाबा छज्जू सिंह जी, जिसमें भाई जवाहिर सिंह जी तो आर्यसमाज लाहौर के मंत्री रहे। ट्रिब्यून के संस्थापक सरदार दयालसिंह जी मजीठिया ने स्वामी जी के अमृतसर आने पर उनके निवास की व्यवस्था की तथा अनेक धार्मिक विषयों पर विचार-विमर्श किया। स्वामी जी के निधन पर ट्रिब्यून ने उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए ३ नवम्बर सन् १८८३ के अंक में लिखा था। **'स्वामी दयानन्द जी उच्च कोटि के प्रतिभावान् पुरुष थे।'** विभिन्न धार्मिक, सामाजिक सुधारों के प्रवर्तक होने के कारण उन्हें मानवता के शुभचिंतक, महापुरुष के रूप में स्मरण किया जावेगा। उनके द्वारा उपदिष्ट सिद्धांत सर्वत्र प्रसारित हुए हैं और उनसे लोगों के मन-मस्तिष्क में वैचारिक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ है।

महर्षि दयानन्द जी की विशेषतायें

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती अपने युग के ऐसे धुरन्धर वेदवेत्ता एवं समाज-सुधारक थे कि उन्होंने उस समय प्रचलित किसी भी भ्रान्ति, किसी भी वेद विरुद्ध मान्यता और किसी भी सामाजिक कुरीति के साथ समझौता न करके उसके समूलोन्मूलन के लिए उस पर प्रबल प्रहार किया। उनके लिखे सब ग्रन्थ विशेषतः सत्यार्थप्रकाश और ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका इसके परम साक्षी हैं। महर्षि ने अनेक देवी-देवों का खंडन करके वैदिक एकेश्वरवाद की स्थापना की। उन्होंने स्त्री-पुरुषों की अशिक्षा को दूर करने का बीड़ा उठाया। उन्होंने भूत-प्रेत, मन्त्र-तन्त्र, ग्रह पूजा आदि का खंडन किया। उन्होंने जन्ममूलक वर्णव्यवस्था पर कुठाराघात किया। उन्होंने सच्चे ब्रह्मचर्य, धर्म, सच्चे गृहस्थ धर्म, सच्चे वानप्रस्थ धर्म और सच्चे संन्यास धर्म का प्रचार किया। उन्होंने बाल-विवाह को तिलांजलि दिलवाने का कार्य किया। उन्होंने नारियों की दशा सुधारने का प्रयास किया। उन्होंने सबको वेद पढ़ने का अधिकार दिलवाया। उन्होंने भूमि बैल के सींग पर या शेषनाग के फन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पर टिकी है आदि धारणाओं का सही वेद सम्मत अर्थ बतलाया। उन्होंने ईश्वर, जीव और प्रकृति की विशुद्ध मीमांसा की। उन्होंने मुक्ति का वास्तविक स्वरूप बतलाया। उन्होंने छुआछूत के रोग को रफूचक्कर किया। उन्होंने भक्ष्याभक्ष्य, आचार, अनाचार, धर्माधर्म आदि को स्पष्ट किया। उन्होंने भारत के उज्ज्वल भूत और प्राचीन आर्यों के चक्रवर्ती राज्य का चित्र खींचा। उन्होंने वाममार्ग के पञ्च मकारों का खंडन किया, उन्होंने यज्ञों में की जाने वाली गाय आदि पशुओं की बलि का विरोध किया। उन्होंने गोमेध, अश्वमेध, नरमेध, अजमेध, अविमेध का सत्य अर्थ प्रचारित किया। उन्होंने जीव-ब्रह्म के ऐक्य का निरास किया। उन्होंने "ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या" के सिद्धान्त को चुनौती दी। उन्होंने लिंगपूजा एवं मूर्तिपूजा को वेद विरुद्ध बताया। उन्होंने मिथ्या चमत्कारों के विरोध में अपनी लेखनी और वाणी को प्रवृत्त किया। उन्होंने तथाकथित तीर्थ और नाम स्मरण का खंडन करके वास्तविक तीर्थ और नाम स्मरण को उजागर किया। उन्होंने चक्रांकित, लिंगांकित एवं अन्य विभिन्न झूठे मतमतान्तरों के विरोध में दुन्दुभिनाद किया। उन्होंने मृतकों के श्राद्ध और तर्पण का खंडन करके जीवितों के श्राद्ध एवं तर्पण को वेदानुकूल सही बतलाया। उन्होंने वेदभाष्य कर सच्चे वेदार्थ का उद्घोष किया। उन्होंने विभिन्न एतद्देशीय, पौराणिक, चार्वाक, बौद्ध, जैन आदि तथा विदेशी क्रिश्चियन, यवन आदि मतों को कसौटी पर कसकर उनका मिथ्या तत्व सिद्ध करके सबको सत्य वैदिक धर्म ग्रहण करने के लिए प्रेरित किया।

इसी प्रसंग में पंचदेव पूजा या पंचायतन-पूजा की बात आती है जिस पर महर्षि दयानन्द ने 'सत्यार्थ प्रकाश' के एकादश समुल्लास में चर्चा की है। उस समय '**शिव, विष्णु, अम्बिका, गणेश और सूर्य की मूर्तियाँ** बनाकर पूजने को ही पंचदेव-पूजा या पंचायतन-पूजा समझा जाता था किन्तु महर्षि ने इन जड़ मूर्तियों के पूजन का विरोध किया और यह बतलाया कि 'एक माता, दूसरे पिता, तीसरे आचार्य, चौथे अतिथि और पाँचवें स्त्री के लिए पति तथा पुरुष के लिए पत्नी इन मूर्तिमान् पांच देवों की पूजा करना ही सच्ची पंचदेव-पूजा या पंचायतन-पूजा है'।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धार्मिक सुधार

१. वे वेद को सत्य विद्याओं का ग्रन्थ मानते थे। उनकी दृष्टि में वेद के सभी शब्द यौगिक, मानवी इतिहास शून्य और उनकी सभी शिक्षायें नित्योपयोगी हैं। इसी दृष्टिकोण से उनकी प्रचारित वेदार्थ-शैली ने उन्हें **सायण** आदि वेद भाष्यकारों की कोटि से पृथक् कर **यास्काचार्य** आदि नैरुक्तों की श्रेणी में पहुँचा दिया था।

२. उन्होंने शंकर, रामानुज आदि प्रायः सभी मध्यकालीन आचार्यों के संकोच की अवहेलना करते हुए वेद का द्वार मनुष्य मात्र के लिए खोल दिया।

'यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः (यजु० २।६।२) की घोषणा करते हुए स्त्रियों, शूद्रों और अतिशूद्रों को भी वेद पढ़ने का अधिकारी बताया।

३. उन्होंने वेदमन्त्रों को स्वतः प्रमाण और वेदेतर सभी ग्रन्थों को परतः प्रमाण बतलाया तथा मूर्तिपूजा, मृतक श्राद्धादि पौराणिक प्रथाओं को अवैदिक कर्म बताया और घोषणा की कि वेद केवल निराकार ईश्वर की पूजा करना बतलाता है।

४. स्वामी दयानन्द के प्रादुर्भाव के समय देशवासी वेद के नाममात्र से परिचित थे, उन्हें यह नहीं मालूम था कि वेद की शिक्षा क्या है, इसी कारण यह संभव हो सका कि एक **पोर्तगीज पादरी ने एक संस्कृत पुस्तक वेद के नाम से बनवाकर उसमें ईसाई मत की शिक्षा अंकित की** और उसके द्वारा मद्रास प्रान्त में अनेक लोगों को ईसाई बनाया, परन्तु स्वामी जी ने इतने बल से वेद प्रतिपादित धर्म का प्रचार किया और उनकी शिक्षा को प्रकट करने के लिए ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका तथा सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों की रचना की जिससे भविष्य में धोखे से आर्य जाति को विधर्मी बनाना सुगम न हो सके।

५. जो लोग उपर्युक्त भाँति या अन्य प्रकार से धर्मभ्रष्ट हुए थे उनके लिए शुद्धि का द्वार खोलकर पुनः आर्यों में शामिल होने की स्वामी जी ने शिक्षा प्रदान की और एक जन्म से मुसलमान को देहरादून में स्वयं शुद्धि करके शुद्धि का क्रियात्मक रूप भी जनता के सामने रक्खा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. देश में हिन्दू धर्म के विरुद्ध साहित्य से वैदिक सभ्यता का मान घट रहा था और उसका स्थान अनेक उत्पातों की मूल पश्चिमी सभ्यता ले रही थी, प्राचीन संस्कृत साहित्य निकम्मा और वेद गड़रियों के गीत कहे जाने लगे थे और देशवासी, विशेषकर अंग्रेजी शिक्षित नर-नारी आँखें बन्दकर अंग्रेजी साहित्य और पश्चिमी रीति-रिवाज पर मोहित होकर उन्हीं लोगों के पीछे चलने में गौरव मानने लगे थे। इस परिस्थिति और देश में उपस्थित ऐसे वातावरण को बदलकर प्राचीन सभ्यता का मान उत्पन्न करके **'वेदों की ओर लौटो'** की ध्वनि को प्रतिध्वनित कर देना स्वामी दयानन्द के महान् व्यक्तित्व, उनके अखंड ब्रह्मचर्य, उनके त्याग और तपस्या, उनके अपूर्व पांडित्य एवं निर्भीकतापूर्ण सत्य उपदेशों का ही परिणाम था।

हिन्दी प्रचार

देश के नवयुवक हिन्दी मातृभाषा को अंग्रेजी की वेदी पर बलिदान कर चुके थे और हिन्दी गन्दी कहलाने लगी थी, हिन्दी पुस्तक, अखबार पढ़ना फैशन के विरुद्ध समझा जाने लगा था परन्तु स्वामी दयानन्द ने अपने जगत् प्रसिद्ध ग्रन्थों को हिन्दी में लिखकर, जबकि उनकी मातृभाषा गुजराती थी, इस बेढंगी चाल को भी बदल दिया। अब वर्तमान समय में हिन्दी भाषा का प्रचार उन्नति की ओर अग्रसर है, विश्वविद्यालयों में भी उसका मान बढ़ रहा है।

सामाजिक सुधार

१. सामाजिक सुधार के संबंध में भी ऋषि दयानन्द जी का हृदय बड़ा विशाल था। उन्होंने कुरीतियों को समाज से निकाल देने का प्रशंसनीय यत्न किया। उदाहरणार्थ मुख्य सुधारों का उल्लेख किया जाता है।

२. बाल विवाह का प्रचार और ब्रह्मचर्य का लोप हो जाने से शारीरिक बल का ह्रास हो रहा था, इसीलिए दूसरों की अपेक्षा आर्य जाति निर्बल समझी जाती, इसी कारण उसे समय-समय पर अपमानित भी होना पड़ता था। स्वामी जी ने इसके विरुद्ध प्रबल आवाज उठाई और ब्रह्मचर्य की महिमा अपने उपदेशों और अपने क्रियात्मक जीवन से प्रकट कर ब्रह्मचर्य का सिक्का लोगों के हृदय में जमा दिया। उसी का फल है कि देश में जगह-जगह पर ब्रह्मचर्याश्रम खुले, सरकारी विश्वविद्यालयों ने भी अनेक जगह नियम बनाये कि हाईस्कूल में विवाहित विद्यार्थी का प्रवेश न हो और शारदा ऐक्ट भी बनाया।

३. इसी बाल-विवाह में वृद्ध-विवाह ने भी योग दे रक्खा था और दोनों

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का दुष्परिणाम यह था कि जाति में करोड़ों विधवायें हो गयी थीं, जिनमें लाखों बाल-विधवायें भी थीं और उनमें हजारों ऐसी भी विधवायें थी जिनकी आयु एक-एक, दो-दो वर्ष थी। भ्रूण-हत्या, गर्भपात, नवजात-बाल वधू आदि अनेक पातक कार्य आर्य जाति के लिए कलंक का टीका बन रहे थे। इन दुखित विधवाओं का दुःख ऋषि दयानन्द का दयालु हृदय किस प्रकार सह सकता था, इसीलिए विधवा-विवाह को प्रचलित करके इनके दुःखों को दूर करने का प्रयत्न किया।

४. मातृशक्ति होते हुए भी स्त्रियों का हिन्दू जाति में अपमान था, वे शिक्षा से वंचित रहकर परदे में रखी जाती थीं उनके लिए वेद का द्वार बन्द था उनको यदि **श्रीमत् शंकराचार्य ने नरक का द्वार बताया तो दूसरी तरफ गोस्वामी तुलसीदास ने 'ढोल, गँवार, शूद्र, पशु, नारी ये सब ताड़न के अधिकारी' का ढोल पीटा।** परन्तु ऋषि दयानन्द जी ने नारी जाति के लिए भी वेद का द्वार खोला, इन्हें शिक्षा की अधिकारिणी बताया तथा पर्दे से निकाला, इन्हें मातृशक्ति के रूप में देखा और उनका इतना अधिक मान किया कि हम ऋषि दयानन्द को एक छोटी बालिका के आगे उदयपुर में नतमस्तक देखते हैं। उसी का परिणाम आज कन्याओं की उच्च शिक्षा का प्रबंध है और सभी क्षेत्र में अग्रसर हैं तथा विश्व में अपना मान बढ़ा रही हैं।

५. जन्म की जाति प्रचलित हो जाने से चार वर्णों की जगह हिन्दू जाति हजारों कल्पित जातियों और उपजातियों में विभक्त हो रही है, प्रत्येक का खान-पान, रहन-सहन, रस्मों-रिवाज़ अलग है। इन मामलों में जाति, उपजाति का पारस्परिक संबंध न होने से हिन्दू जाति एक नहीं थी और न उनका कोई सम्मिलित उद्देश्य बाकी रहा था, न उस उद्देश्य की पूर्ति के सम्मिलित साधन उसके अधिकार में थे। ऋषि दयानन्द ने इस जन्म जाति को समूल नष्ट करने की शिक्षा दी थी। क्योंकि यह सर्वथा वेद विरुद्ध था। उसी के फलस्वरूप अब हिन्दुओं में अन्तर्जातीय सहभोज व विवाह होने लगे इनके प्रचारार्थ अनेक संस्थायें बनी।

६. दलित जातियों के साथ उच्च जातियों का व्यवहार अत्यन्त आक्षेप के योग्य और उनके लिए असह्य भी था। उसी के दुष्परिणाम स्वरूप बहुसंख्या में दलित ईसाई, मुसलमान बने। ऋषि दयानन्द ने इसके विरुद्ध आवाज़ उठाई और उन्हें खान-पान आदि सहित उन सभी अधिकारों के देने का निर्देश दिया जो उच्च

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जाति को प्राप्त है। देश में ऋषि के आवाहन पर उथल-पुथल हुआ और हिन्दुओं के मध्य से छूत, अछूत का भेद तथा छुआछूत का विचार ढीला पड़ा।

७. दान की व्यवस्था की तरफ भी स्वामी जी ने ध्यान दिया, मनुष्य को आलसी बनाने के लिए दान देने की कुप्रथा प्रचलित थी उसका बलपूर्वक खंडन किया और उसके स्थान पर देश काल तथा पात्र को देखकर सात्विक दान देने की प्रथा प्रचलित की।

राजनैतिक सुधार

राजनैतिक सुधार की तरफ भी ऋषि दयानन्द ने देशवासियों का ध्यान खींचा और उस समय जब देश में किसी राजनीतिक संस्था का अस्तित्व तक नहीं था। तब ऋषि का इस सम्बन्ध में दृष्टिकोण क्या था इसके लिए **'सत्यार्थप्रकाश'** में वर्णित कुछ वाक्य यहाँ लिखे जाते हैं।

१. अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी, किन्तु आर्यावर्त्त में भी आर्यों का अखंड, स्वतन्त्र, स्वाधीन, निर्भर राज्य इस समय नहीं है जो कुछ है सो विदेशियों से पादाक्रान्त हो रहा है। (सत्यार्थ प्रकाश अष्टम समुल्लास)

२. हिन्दुओं में प्रचलित छूतछात का खंडन करते हुए ऋषि ने लिखा है कि इसी मूढ़ता से इन लोगों ने चौका लगाते-लगाते विरोध करते-कराते सब स्वातन्त्र्य, आनन्द, धन, राज्य, विद्या और पुरुषार्थ पर चौका लगाकर हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं। **(सत्यार्थ प्रकाश-दशम समुल्लास)**

३. उसी दुष्ट दुर्योधन गोत्रहत्यारे, स्वदेश विनाशक, नीच के दुष्ट मार्ग में आर्य लोग अब तक भी चलकर दुःख बढ़ा रहे हैं। परमेश्वर कृपा करे कि यह राज रोग हम आर्यों में से नष्ट हो जावे। **(सत्यार्थ प्रकाश-दशम समुल्लास)**

४. सृष्टि से लेकर महाभारत पर्यन्त चक्रवर्ती सार्वभौम राजा आर्य कुल में ही पैदा हुए थे, अब इनके संतानों का अभाग्योदय होने से राजभ्रष्ट होकर विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहे हैं। **(सत्यार्थ प्रकाश एकादश समुल्लास)**

५. कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। पक्षपात शून्य प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है। **(सत्यार्थ प्रकाश-अष्टम समुल्लास)**

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वदेशी वस्तु-प्रेम

८. स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग की भी ऋषि दयानन्द ने अपने ग्रंथों में जगह-जगह शिक्षा दी है। उसी का फल यह है कि वर्तमान आंदोलन के बहुत पहले से आर्यसमाज के अनेक सदस्य नियम से देशी वस्त्रादि का प्रयोग करते हैं।

सहिष्णुता

९. ऋषि दयानन्द में सहिष्णुता कमाल की थी, उन्हें जब अनूप शहर में एक व्यक्ति ने पान में रखकर विष दिया और सैय्यद मुहम्मद मजिस्ट्रेट ने उस अपराध में विष देने वाले को पकड़वाकर हवालात में बंद करा दिया तो स्वामी दयानन्द जी ने उसे छुड़वा दिया और कहा 'मैं दुनिया को कैद कराने नहीं, अपितु कैद से छुड़ाने आया हूँ।

ब्रह्मचर्य

ऋषि दयानन्द ब्रह्मचर्य की मर्यादा का कितना ध्यान रखते थे, उसका प्रमाण यह है कि एक दिन जब वे मथुरा में यमुना तट के विश्रांत घाट पर समाधि में लीन थे उसी समय एक देवी ने श्रद्धा से अपना सिर स्वामी जी के पाँव पर रख दिया तब उन्होंने प्रायश्चित्त रूप में तीन दिन तक उपवास रखा था।

वीरता

कर्णवास में स्वामी दयानन्द एक दिन गंगातट पर उपदेश दे रहे थे। बरेली के राव कर्णसिंह कुछ हथियारबन्द साथियों के साथ वहाँ आये और कुछ बातचीत करते-करते वह इतने क्रोध में आ गये कि उन्होंने तलवार खींच कर स्वामी जी पर आक्रमण कर दिया, स्वामी जी ने तलवार छीनकर दो टुकड़े कर दिए और राव साहब को पकड़कर कहा मैं तुम्हारे साथ इस समय वह व्यवहार कर सकता हूँ, जो किसी आतताई के साथ किया जाता है, परन्तु मैं संन्यासी हूँ इसलिए छोड़ देता हूँ, जाओ परमात्मा तुम्हें सद्बुद्धि प्रदान करे।

निर्भीकता

एक दिन स्वामी जी को व्याख्यान देना था, उससे पहले दिन वे ईसाईमत का खंडन कर चुके थे। उनसे कहा गया कि आज ईसाईमत का खंडन न करें, क्योंकि इससे वहाँ के उच्च राज्य कर्मचारी अप्रसन्न होंगे। व्याख्यान में

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमिश्नर आदि उपस्थित थे। स्वामी जी ने गरजकर कहा कि लोग कहते हैं कि असत्य का खंडन न करें इससे कमिश्नर, कलेक्टर नाराज़ होंगे, परंतु चाहे चक्रवर्ती राजा भी अप्रसन्न क्यों न हो, हम तो सत्य ही कहेंगे।

योग की विभूति

प्रयाग में एक दिन स्वामी जी सभा में विराजमान थे। पंडित सुन्दरलाल जी आदि अनेक प्रतिष्ठित सज्जन भी उपस्थित थे। स्वामी जी अचानक हँस पड़े, कारण पूछने पर प्रकट किया कि एक पुरुष मेरे पास आ रहा है, उसके आने पर एक कौतुक दिखाई देगा। थोड़ी देर के बाद ही एक आदमी स्वामी जी के लिए मिठाई लाया और कहा कि महाराज इसमें से कुछ भोग लगावें। स्वामी जी थोड़ी सी मिठाई लाने वाले को देने लगे, परन्तु उसने लेने और खाने से इन्कार कर दिया। इस पर स्वामी जी पुनः हंस पड़े। थोड़ी मिठाई एक कुत्ते को खिलाई गयी वह फौरन मर गया, क्योंकि मिठाई में ज़हर मिला हुआ था, जब उस मिठाई लाने वाले को पुलिस के हवाले उपस्थित लोगों ने किया, तो स्वामी जी ने यह कहकर छुड़वा दिया कि वह स्वयं अपने पाप के कारण लज्जित है और काँप रहा है।

अपूर्व विद्वत्ता

कर्णवास में अनूपशहर के पंडित हीरावल्लभ जी एक धुरंधर संस्कृत के विद्वान् थे। अपने साथियों के साथ स्वामी जी के पास आये और शास्त्रार्थ के लिए सभा एकत्र हुई। पंडित हीरावल्लभ ने बीच में ठाकुर जी का सिंहासन रख दिया, जिस पर शालिग्राम आदि की मूर्तियाँ थी और प्रतिज्ञा की कि स्वामी जी को शास्त्रार्थ में हरा दूँगा और उन से मूर्तियों पर भोग चढ़वाऊँगा, तब जाऊँगा। छः दिन तक बराबर धारा प्रवाह संस्कृत में शास्त्रार्थ होता रहा। सातवें दिन हीरावल्लभ जी ने प्रकट कर दिया कि जो कुछ स्वामी दयानन्द जी कहते हैं वही ठीक है और सिंहासन से मूर्तियों को उठाकर गंगा में प्रवाहित कर दिया तथा सिंहासन पर वेद की पुस्तक रखी गई।

विश्व-प्रेम

ऋषि दयानन्द का दृष्टिकोण वेदानुकूल होने से जातीयता-पूर्ण नहीं था किन्तु विश्व-प्रेम पूर्ण था, इसलिए उनके ग्रंथों में जगह-जगह यही भावना

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदर्श रूप में मिलती है। वास्तव में वर्तमान संकुचित जातीयता का विचार संसार में शांति स्थापित नहीं कर सकता।

आत्मनिरीक्षण

आत्मनिरीक्षण ऋषि दयानन्द के दैनिक कार्यक्रम में सम्मिलित था। हरिद्वार कुम्भ के मेले के अवसर पर जब उन्होंने **'पाखंड खंडिनी पताका'** लगाकर धर्म प्रचार किया तो उन्हें ज्ञात हुआ कि प्रचार का जितना प्रभाव होना चाहिए था उतना नहीं हुआ। उन्हें इसका कारण अपनी न्यूनता जान पड़ी, तभी से उन्होंने सर्वमेध यज्ञ करके केवल एक लंगोटी पहनकर गंगा के तट पर विचरना शुरू किया और अनेक वर्ष इसी प्रकार व्यतीत कर अपने को सम्पूर्ण करके विश्व को संदेश दिया था।

अन्त समय में मृत्यु का अद्भुत दृश्य

अजमेर में स्वामी जी का अंत समय आया, उनके पास अनेक लोग दर्शनार्थ पहुँचने लगे। उनमें लाहौर के प्रसिद्ध विद्वान् पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी भी थे। गुरुदत्त जी को ईश्वर की सत्ता में विश्वास नहीं था। परन्तु स्वामी जी के प्रति अगाध श्रद्धा थी। स्वामी जी ने सबसे बातचीत करके बिदा किया। अब वे जिस शय्या पर थे उठकर बैठ गये, उन्होंने कुछ प्राणायाम किया और वेद मंत्रों का उच्च स्वर से उच्चारण किया, मंत्र पाठ करते-करते उनके मुखमंडल पर तेज़ मुस्कराहट आई। गुरुदत्त सोचने लगा कि मौत का नाम सुनकर लोग कांपते हैं परन्तु मृत्यु का स्वामी जी पर कोई प्रभाव नहीं, वे दुःखी होने की जगह मुस्करा रहे हैं। स्वामी दयानन्द की इस मुस्कराहट ने एक विद्युत् का कार्य किया गुरुदत्त के हृदय पर। उनके अंदर नास्तिक रूपी कूड़ा-करकट जो था उसे भस्म करके आस्तिक बना दिया। स्वामी दयानन्द मुस्कराते हुए बोले **'प्रभो आपने अच्छी लीला की, आपकी इच्छा पूर्ण हो।'** इन शब्दों के साथ उन्होंने अंतिम श्वास खींचा और नश्वर शरीर त्याग दिया। मृत्यु के इस अद्भुत दृश्य ने प्रकट किया कि जो महान् पुरुष होते हैं उनका ईश्वर में अटूट विश्वास, उनके हृदय में परोपकार की भावना, प्राणीमात्र से ईर्ष्या द्वेष नहीं, वे प्रसन्न होकर ईश्वर स्मरण करते हुए संसार से बिदा लेते हैं।

वेद ज्ञान दीप बुझा, जग को रुलाने के लिए

ऐ! निष्ठुर कार्तिक की अमावस्या की रात्रि, तूने उस महान् योगी, तपस्वी, ब्रह्मचारी, परोपकारी, देशभक्त, चरित्रवान् व महान् वेदज्ञ विद्वान् को

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने काले आंचल में ढक लेने का कैसे दु:साहस किया ? उस महान् आत्मा को संसार से ओझल करते हुए क्या तेरी आत्मा तनिक भी नहीं काँपी ? क्या तेरा पत्थर हृदय लेशमात्र भी नहीं पसीजा ? तुम कितनी पापिन हो, अधम हो तुम्हें धिक्कार है। तेरी तुलना में तो वह जगन्नाथ अच्छा जिसने अपने लोभ व लालच में तो यह दुष्कर्म किया। करने के बाद उसने प्रायश्चित्त किया और माफी भी माँगी थी। लेकिन ए! निष्ठुर रात्रि! तुझे तो कोई लोभ लालच भी नहीं था, तुझे यह दुष्कर्म करने का कैसे दुस्साहस हुआ ? तुम्हारे इस दुष्कर्म को करने से उन लाखों करोड़ों विधवाओं का सिन्दूर छिन गया, जिनको यह ऋषि सुहागिन बनाने आया था। क्या उन अबोध छोटी बच्चियों का क्रन्दन व विलाप तुमको नहीं सतायेगा? जो बूढ़ों के संग ब्याह दी जाती हैं और उनका सारा जीवन दु:खों और कष्टों में बीतता है। क्या उन नारियों की हृदय विदारक पीड़ा तुमको नहीं तड़पायेगी, जो विद्या के बंधुआ मज़दूर की भाँति ही नहीं, बल्कि पशुओं की भाँति जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य हैं। इन माताओं, बहिनों को वह ब्रह्मचारी वेदों तक पढ़ने का अधिकार उचित सम्मान दिलाने आया था। क्या उन बिचारे हरिजनों की आह तुमको नहीं तड़पायेगी, जो ऊँचे वर्ग के लोगों द्वारा अपमानित होते रहे हैं। जिनको समानता का अधिकार दिलाने वह योगी आया था। हे दयाहीन रात्रि! क्या तुझे उन निर्दोष व मूक गौओं व पशुओं का क्रन्दन विलाप नहीं धिक्कारेगा ? जो हजारों लाखों की संख्या में प्रतिदिन काटे जा रहे हैं। जिनको बचाने के लिए वह त्यागी, तपस्वी इस धरती पर आया था। निश्चय ही तू उन सभी की अपराधिनी है। जिनके कल्याण व उद्धार के लिए वह महर्षि इस धरा धाम पर अवतरित हुआ था। तेरे से तो वह घृणित वेश्या ही अच्छी जिसकी आत्मा ने उस तपस्वी बाल ब्रह्मचारी को बदनाम करने से इन्कार किया तुझे तो महाकलंकिनी भी कहा जाये तब भी थोड़ा है। कुछ विचारने के बाद तेरे को दोष देते समय मेरी निष्पक्ष आत्मा यह कहती है कि हम जघन्य अपराध के लिए सन् १८८३ की अभागिन कार्तिक अमावस्या का क्या दोष दें वह तो हर साल की ही भाँति खुशियाँ बिखेरने आई थी। उस महान् ऋषि को तो उन जालिम लोगों ने उसी दिन मार दिया था, जब वे उसके प्राणों के भूखे भेड़िये उस महर्षि के विरुद्ध षड्यन्त्र रचने लगे थे। उन्हें वैदिक धर्म का प्रकाश संसार में फैलता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ अच्छा नहीं लग रहा था, कारण **'वेद-ज्ञान'** के प्रकाश से अवैदिक मत व सम्प्रदायों का अस्तित्व क्षीण होता जा रहा था और वैदिक धर्म का प्रभाव बढ़ता जा रहा था। वे नहीं चाहते थे कि वैदिक धर्म के आगे हमें झुकना पड़े। बल्कि वह चाहते थे कि हम जो अपने सम्प्रदाय की डींग हांकते रहते हैं उसका मौका हमें सदा मिलता रहे। साथ ही उनको यह भी सहन नहीं था कि भारत एक सूत्र में बंधकर **'वेद-ज्ञान'** के द्वारा कहीं फिर विश्व गुरु न बन जावे। इस डाह में वे विधर्मी जल-भुन रहे थे और उन्हीं षड्यन्त्रों ने उस महान् आत्मा को जगन्नाथ द्वारा दूध में कालकूट विष मिलवा कर पिलवा दिया और सदा के लिए इस संसार से बिदा कर दिया। इसमें बेचारी कार्तिक अमावस्या का क्या दोष। वह तो अपना वही परम्परागत कार्य प्रेम के दीप जलाने आई थी। परन्तु इन धर्मान्ध, दुष्ट स्वार्थी षड्यन्त्रकारियों ने इस रात्रि को खुशी की जगह दुःख में नहीं महादुःख में परिणत करके इसे कलंकित कर दिया। उस कालरात्रि का पार्ट ऐसा ही था जैसा रामायण में कैकेयी का। राम को गद्दी छोड़कर वनवास तो उसी दिन हो गया था जिस दिन ऋषि मुनियों ने तपस्वियों की रक्षा हेतु राक्षसों को मारने के लिए **राम और लक्ष्मण** को योग्य पात्र समझकर उनको वन में भेजने की योजना बना ली थी। कैकेयी ने तो उस योजना (नाटक) का खलनायिका का पार्ट मात्र ही किया था। जिस प्रकार से कैकेयी को राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने क्षमा कर दिया उसी भाँति हे काली पापिन अमावास्या की रात्रि! तुझे भी क्षमा मिल जाती लेकिन उस कैकेयी ने तो जनकल्याण की भावना से वह निष्ठुर कार्य किया था। परन्तु तेरे पीछे तो उन स्वार्थी मनुष्यों के क्रूर पंजे थे जिनके चंगुल में आकर जगन्नाथ ने तेरे को पापिनी कहलवाया और उसने ऋषिराज दयानन्द को दूध में विष मिलाकर पिलाने का घृणित कार्य करके सिर्फ एक दयानन्द को ही संसार से बिदा क्या किया, बल्कि सारे विश्व को तेरे ही रूप अज्ञान रूपी अंधकार में धकेल दिया और विश्व को वैदिक-ज्ञान रूपी सूर्य के प्रकाश से वंचित कर दिया। इसीलिए जैसी तू काली है उसी कालिमा में जगन्नाथ द्वारा कुकृत्य होने से तू भी वैसी ही काली करतूत वाली कहलाई गई। यदि यह कुकृत्य तेरी कालिमा में न हुआ होता तो आज सारा विश्व **ईश्वरीय वेद-ज्ञान** से आलोकित होकर सत्पथ पर अग्रसर हुआ होता, तथा सभी लोग

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुख व शान्ति से जीवन व्यतीत करते हुए 'खुशहाल' बने होते और भारत पुनः विश्व गुरु के नाम से सम्बोधित किया जाता तथा वेदों का उद्घोष...... **'कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम्'** साकार होता हुआ दिखाई देता।

वैसे तो हर रात्रि आती है,
विश्व को निद्रा की गोद में सुलाने के लिए
पर एक सुखद फाल्गुन की 'शिवरात्रि' आई थी
सम्पूर्ण विश्व को जगाने के लिए।
वैसे ही कार्तिक की अमावास्या,
हर साल आती है खुशियों के दीप जलाने के लिए।
पर सन् १८८३ की यही काली रात्रि आई वेद-ज्ञान दीप बुझा,
जग को रुलाने के लिए।
"सौ बार जन्म लेंगे सौ बार फना होंगे।
अहसान दयानन्द के फिर भी न अदा होंगे।"

❖❖❖

'दयानन्द' इति ख्यातः दयालुः निस्पृह एव च
योगी वक्ता महान् त्यागी मन्त्रद्रष्टा बभूव सः ।।
दयानन्दो महान् त्यागी दयानन्दो महामुनिः ।
दयानन्देन निर्दिष्टः मार्गः सर्वैश्च सेव्यताम् ।।

॥ सम्पा० ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व को भारत की देन

जर्मनी में विश्व इतिहास से सम्बन्धित एक पत्रिका में 'भारत का योगदान' शीर्षक से नीचे लिखे हुए कुछ तथ्य प्रकाशित हुए थे। हमने कुछ सुसंगत तथ्य जोड़कर इसे लेखनी का रूप दिया। सभी इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि विद्वान् लोग एक-एक पर निबन्ध ही नहीं पूरा ग्रन्थ लिख सकते हैं।

१८. विश्व के ज्ञात इतिहास के पिछले दस हजार वर्ष की अवधि में भारत ने कभी किसी देश पर आक्रमण नहीं किया। प्रेम और सद्भावना से ही अपने विचार और विश्वास संसार में फैलाये हैं।

२. संसार का प्रथम विश्वविद्यालय तक्षशिला में ईसा से ७०० वर्ष पूर्व स्थापित हुआ था, जिसमें संसार भर के साढ़े दस हजार से अधिक विद्यार्थी साठ से अधिक विषयों का अध्ययन करते थे। ईसा पूर्व चौथी शती में स्थापित नालंदा विश्वविद्यालय शिक्षा के क्षेत्र में प्राचीन भारत की महानतम उपलब्धि थी।

३. पाँच हजार वर्ष से भी पूर्व जब बहुत सी संस्कृतियाँ, खानाबदोशों और प्रांगलियों की ही थीं भारतीयों ने सिन्धु घाटी में हड़प्पा संस्कृति, सिन्धु घाटी सभ्यता विकसित की हुई थी, जो कि वैदिक सभ्यता से मिलती थी।

४. सभ्यता का प्रारम्भ ईसा के भी कई हज़ार वर्ष पहले भारत में ही हुआ था। उस समय के जो भी अवशेष मिलते हैं उनसे सिद्ध होता है कि जो कुछ था, विलक्षण प्रतिभा और उत्कृष्ट वास्तु कौशल से आद्योपांत परिपूर्ण था। ज्ञात इतिहास काल की ही कृतियाँ, अजन्ता, एलोरा की गुफायें, देश भर में फैले विशाल मंदिर, विजय स्तम्भ, चैव्य, स्तूप, स्मारक विश्व में बेजोड़ हैं।

५. आरम्भ से ही भारतीय जनजीवन नितांत आडम्बरहीन, किन्तु अत्यन्त समृद्ध, उन्नतिशील था। श्रेष्ठता का उत्कृष्ट नमूना था।

६. संस्कृत सभी योरोपीय भाषाओं की जननी है (सन् १९८७ में फोर्ब्स पत्रिका के जुलाई अंक) इसके अनुसार कम्प्यूटर, साफ्टवेयर के लिए संस्कृत सबसे अधिक उपयुक्त भाषा है।

७. संस्कृत ज्ञान-विज्ञान तथा विद्वानों की भाषा है। संस्कृत से ही जन सामान्य के लिए 'हिन्दी भाषा' का वैज्ञानिक विधि से विकास किया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया है। अतः यह भारत की राष्ट्रभाषा है और विश्व भाषा बनने की ओर बढ़ रही है। डा० आयन्ती प्रसाद नौटियाल के अनुसार हिन्दी जानने वालों की संख्या विश्व में सबसे अधिक है। भाषा जानने वालों की दृष्टि से हिन्दी का विश्व में पहला स्थान है।

(गृह मंत्रालय, भारत सरकार की पत्रिका राजभाषा भारती अक्टूबर-दिसम्बर १९९७ अंक, पृ० ४० में गजट है)

संस्कृत की भाँति यह भी कम्प्यूटर के लिए सबसे अधिक उपयुक्त सिद्ध होगी।

. मनुष्य को ज्ञात चिकित्सा का सर्वप्रथम विज्ञान 'आयुर्वेद' है। आयुर्वेद के पितामह 'चरक' ने ढाई हज़ार वर्ष पूर्व इस ज्ञान का संकलन किया था। आजकल 'आयुर्वेद' सभ्य संसार में तेजी से अपना न्यायसंगत स्थान प्राप्त कर रहा है।

. 'सुश्रुत' शल्य क्रिया के पितामह थे। छब्बीस सौ वर्ष पूर्व वे और उनके समय के चिकित्सक जटिल शल्य क्रियायें तथा प्रसूतज (सीजैरियन) मोतियाबिंद, कृत्रिमांग, अस्थिभंग, पथरी और प्लास्टिक शल्य तथा मस्तिष्क की शल्य क्रियायें सम्पन्न करते थे। सुनकारियों (अनीस्थीसिया) के प्रयोग से वे भलीभाँति परिचित थे। शल्य क्रिया के सवा सौ से अधिक उपकरणों का प्रयोग करते थे। शरीर रचना विज्ञान, शरीर क्रिया विज्ञान, निदान शास्त्र, भ्रूण विज्ञान, पाचन क्रिया, चयापचय, आनुवंशिकी और असंक्रमिता सम्बन्धी गहरी जानकारी थी जो बहुत सी पुस्तकों में मिलती है।

. भारत का चित्र आजकल गरीब और अविकसित देश के रूप में भले ही बताया जाता है परन्तु १७ वीं शताब्दी के शुरू में अंग्रेजों के आक्रमण से पहले तक यह संसार का सबसे धनी देश था। कोलम्बस भारत की ओर इसके धन के कारण ही आकर्षित हुआ था।

. नौचालन की कला का जन्म छः हजार वर्ष पूर्व सिन्धु नदी में हुआ था। संस्कृत शब्द **नौगतिः** से ही **'नैविगेशन'** और **नौ** से **'नेवी'** बने हैं।

. मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाईयों से मिले अवशेषों से भारतीय नगर नियोजन की उत्कृष्टता प्रकट होती है। पुरानी से पुरानी सभ्यता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का दम भरने वाले देशों के पास भी ऐसा कुछ नहीं था जिसकी तुलना उन भारतीय नगरों से की जा सके।

१३. मिहिरावली (दिल्ली) का प्रसिद्ध लौह स्तम्भ न केवल आकार तौल की दृष्टि से बल्कि रचना की दृष्टि से भी अद्वितीय है कि एक हज़ार साल की सर्दी, गर्मी, वर्षा का प्रकोप सही न करने पर भी उसमें अभी तक जंग भी नहीं लगा।

१४. वायुयानों का प्रयोग रामायण, महाभारतकाल तक भलीभाँति होता था। दिव्य अस्त्र, शस्त्र और ब्रह्मास्त्र तक न केवल ज्ञात थे अपितु प्रयोग किए जाते थे। ब्रह्मास्त्र (सम्भवतः अणु अस्त्र) का प्रयोग सामान्यतया वर्जित था।

१५. पृथ्वी को सूर्य की परिक्रमा करने में लगने वाले समय की गणना **खगोल विज्ञानी स्मार्ट** से सैकड़ों साल पहले **भास्कराचार्य** ने कर ली थी। ५वीं शताब्दी में उन्होंने यह समय ३६५२५८७५६४८४ दिन निकाला था।

१६. **भारत में बीजगणित,** अंकगणित का आविष्कार हुआ था, **'आर्यभट्ट'** ने शून्य का आविष्कार किया था।

१७. पाई (वृत्त की परिधि और व्यास के सम्बन्ध) का मान योरोपीय गणितज्ञों से बहुत पहले छठी शताब्दी में **'बोधायन'** ने निकाल लिया था और पाइथागोरस की साध्य नाम से प्रसिद्ध संकल्पना की भी **'बोधायन'** ने व्याख्या कर दी थी।

१८. बीजगणित, त्रिकोणमिति और कलन गणित (कैलकुलस) भारत की ही देन है। द्विघाती समीकरण को भी **'श्रीधराचार्य'** ने ११ वीं शताब्दी में हल किया था। ईसा से पाँच हज़ार पूर्व वैदिक युग में आर्य लोग $१०^{५३}$ तक की बड़ी संख्याओं का प्रयोग करते थे और उन्होंने उनके अलग-अलग नाम भी दे रखे थे। जबकि यूनानी और रोमन लोगों द्वारा बड़ी से बड़ी $१०^{६}$ तक की संख्याओं का प्रयोग करते थे और आज भी बड़ी से बड़ी १० घात १२ ($१०^{१२}$) तक की ही संख्याओं का प्रयोग होता है।

१९. स्थानीय मान और दशमिक प्रणाली ईसा से सौ वर्ष पूर्व भारत में विकसित की गई थी।

२०. शतरंज या अष्टपाद का आविष्कार भारत में हुआ था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१. अमेरिका के रत्न विज्ञान-संस्थान के अनुसार १८९६ ई० तक हीरा भारत से ही संसार भर में जाता था।

२२. अमेरिकी संस्था आई० ई० ई० ने सिद्ध कर दिया है कि रेडियो संचार की खोज **'प्रोफेसर जगदीशचन्द्र बोस'** ने किया था न कि **'मारकोनी'** ने, ऐसी भ्रान्त धारणा एक शताब्दी तक वैज्ञानिकों में फैली रही।

२३. सिंचाई के लिए बाँधों और जलाशयों का निर्माण सबसे पहले भारत **सौराष्ट्र** (गुजरात) में हुआ था।

२४. १५० ई० के **'राजा रुद्रदमन'** के अनुसार रैवतक पर्वत पर **'सुदर्शन'** नाम क़ी सुन्दर झील **'चन्द्रगुप्त मौर्य'** के समय में बनाई गई थी।

२५. समय और काल की गणना करने वाला विश्व का पहला कैलेण्डर भारत में **लादा देव** ने ५०५ ई० पू० सूर्य सिद्धान्त नामक अपनी पुस्तक में वर्णित किया था।

२६. गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त भारत में **भास्कराचार्य** ने न्यूटन से पूर्व प्रतिपादित किया था।

२७. **लोहे के प्रयोग** के प्रमाण वेदों में वर्णित हैं, **अशोक स्तम्भ** भारतीयों के धातु ज्ञान का स्पष्ट प्रमाण है।

२८. **वनस्पति शास्त्र** की उत्पत्ति सर्वप्रथम भारत में हुई जिसका प्रमाण वेदों में सुनियोजित रूप से वर्गीकृत विभिन्न वनस्पतियों से मिलता है।

२९. सिन्धु घाटी सभ्यता से मिले प्रमाण सिद्ध करते हैं कि भारतीयों को २५०० ई० पू० **ताँबे तथा जस्ता** की जानकारी थी।

३०. विभिन्न रासायनिक प्रक्रियाओं एवं रासायनिक रंगों का प्रयोग पाँचवीं शताब्दी में भारत द्वारा किया गया था।

३१. राइट ब्रदर्स से भी अनेक वर्ष पूर्व **महर्षि दयानन्द जी** के योग्य शिष्य **श्री बापू शिवकर जी तलपदे महाराष्ट्र** निवासी ने मुम्बई के चौपाटी स्थान पर वैदिक विधि से बना वर्तमान युग का प्रथम विमान बनाकर उड़ाया था।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुराणखण्डनम्

पुराण शब्द से पुरातनता का बोध होता है, किन्तु आधुनिक अष्टादश पुराणों की अष्टादशता में कोई प्रमाण नहीं है। दुःख है कि वर्तमान सनातनी पौराणिक हिन्दू समाज इनको धर्मग्रन्थ मानकर हिन्दू धर्म का ढिढोंरा पीटता है जबकि पुराणों में शराब-जुआ, व्यभिचार तथा अप्राकृतिक व्यभिचार का भी स्पष्ट वर्णन है। इसके कर्त्ता महर्षि वेदान्त रचयिता व्यास नहीं हो सकते हैं। इसके कर्त्ता व्यभिचारी हो सकते हैं।

'सुभाषित रत्नभाण्डागारम्' में लिखा है कि

१. *'पुराणकर्त्ता व्यभिचारजातः तस्यापि पुत्रो व्यभिचारजातः'* (पौराणिक निन्दा ४४।१।।) जैसे कि महादेव शंकर का दारुवन में ऋषि पत्नियों के साथ व्यभिचार करने के लिए प्रवृत्त होना और उनका लिंग कटकर गिर जाना तथा उसको पौराणिकों की देवी पार्वती, दुर्गा की योनि में स्थापित कर बम-बम बोल की आवाज़ लगाना। (शिव पुराण कोटि रूद्र संहिता)

२. महानन्दा वेश्या को पाँच मुद्रा देकर वैश्य रूप धर उसके साथ वेश्यावृत्ति कर महादेव द्वारा हर-हर जयघोष करना-क्या यह वैदिक कर्म है ?

पौराणिक देवों को देवियों की ओर से चैलेंज है कि

वयं तु स्वैरचारिण्यः वयं तु न पतिव्रताः ।
अस्मत्कुलोचितो धर्मः व्यभिचारो न संशयः । (भागवत पुराण)

अर्थात् हम लोग स्वच्छन्द होकर स्वैराचरण करती हैं, यह हमारा कुलोचित धर्म है। बताइये क्या यह वैदिक कर्म है?

३. सोलह हजार स्त्रियों का साथ जो व्रजांगना के नाम से प्रसिद्ध थीं उनके साथ श्री कृष्ण का व्यभिचारार्थ रासलीला (मीना बाज़ार लगवाना) और राधा, मालती, कुब्जा आदि के साथ व्यभिचार करना तथा नहाती हुई स्त्रियों के वस्त्र लेकर कदम्ब पर चढ़कर यह कहना कि तुम नग्न होकर बाहर निकलो तब वस्त्र दूँगा क्या यह वैदिक कर्म है ? जबकि महाभारत में श्रीकृष्ण की एक पत्नी रुक्मिणी तथा एक पुत्र प्रद्युम्न हैं।

४. क्या यही हिन्दू सनातन धर्म है कि तीनों 'ब्रह्मा, विष्णु, शिव के द्वारा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सती अनुसूया' के सतीत्व को नष्ट करके अत्रि के आश्रम पर सत्याग्रह करना और उनके श्राप से शिव के लिंग का कटकर गिरना और दशनामों की स्थापना कर महादेव द्वारा हर-हर का जय घोष करना क्या वैदिक है ?

५. ब्रह्मा का केतकी से झूठ बोलना और शंकर के विवाह में पार्वती का मुँह देखकर वीर्य का यज्ञशाला में गिरना और पौराणिक देवों का महादेव को हर-हर करना क्या वैदिक कर्म है ?

६. राधा का कृष्ण के साथ **'ब्रह्मवैवर्त पुराण'** के अनुसार मामी को रखैल बनाना क्या वैदिक कर्म है ?

७. ईसा मुहम्मद का अवतार मानकर हिन्दुओं का नाश करना क्या वैदिक कर्म है ? (भविष्य पुराण)

८. गोमांस, गो-हत्या, यज्ञों में पशुवध (ब्रह्मवैवर्त पुराण के प्रकृति खंड में) और बलराम का शराब पीना, जुआ खेलना क्या वैदिक कर्म है ? (भागवत पुराण)

श्रीमद्भागवत में भी मूर्तिपूजा का निषेध है-

यस्यात्मबुद्धिः कुणपे त्रिधातुके स्वधीः कलत्रादिषु भौम इज्यधीः।
यत्तीर्थबुद्धिः सलिले न कर्हिचिज्जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः ।।

श्रीमद्भागवत १०।८४।१३

हे महात्माओ और सभासदो ! जो मनुष्य वात, पित्त और कफ इन तीनों धातुओं से बने हुए शवतुल्य शरीर को ही अपना आत्मा, मैं, स्त्री-पुरुष, पुत्र आदि को ही अपना, और मिट्टी, पत्थर, काठ आदि पार्थिव विकारों को ही इष्टदेव मानता है तथा केवल जल को ही तीर्थ समझता है-ज्ञानी महापुरुषों को नहीं वह मनुष्य होकर भी पशु और पशु ही नहीं पशुओं में भी नीच गोखर = गधा ही है ।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैदिक अर्थशास्त्र

अथर्ववेद के तीसरे काण्ड के १४वें सूक्त में धन के संदर्भ में वेद में परमात्मा ने कहा है कि-

येन धनेन प्रपणं चरामि, धनेन देवा धनमिच्छमानः ।
तन्मे भूयो भवतु मा कनीयोऽग्ने सातघ्नो देवान् हविषा नि षेध ।।

(अथर्व० ३।१५।५)

जिस धन से और धन कमाने की अभिलाषा से मैं व्यापार करता हूँ, वह मेरा धन लगातार बढ़ता जाए, कभी कम न हो । मुझे लाभ उठाने से रोकने वाली या घाटा डालने वाली शक्तियों को हे प्रभो ! तुम मुझसे दूर करो आप इन्हें रोकिए । स्पष्ट है कि वेद ने धन की निन्दा नहीं की, विरोध भी नहीं किया। इसमें धन से और अधिक धन कमाने का उपदेश है । धन कैसे कमाया जाता है चाहे व्यापार, कला, शिल्प, व्यवसाय, यंत्र आदि से लेन-देन, खेती-बाड़ी आदि प्रकार से, सब कुछ यहाँ बताया है । ईश्वर से प्रार्थना की है कि मेरा धन कम न हो बढ़ता जावे ।

येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः ।
तस्मिन् म इन्द्रो रुचिमा दधातु, प्रजापतिः सविता सोमो अग्निः ।।

(अथर्व० ३।१५।६)

मैं धन से व्यापार करके जिस धन को बढ़ाने का प्रयत्न करता हूँ उसमें वह ईश्वर जो सबका पिता, स्वामी और सबको उन्नति मार्ग पर ले जाने वाला है, मेरी रुचि को मेरे उत्साह को लगातार बढ़ाता रहे । इस मंत्र में पाँच शब्द आते हैं। **इन्द्र, प्रजापति, सविता, सोम और अग्नि** । ये पाँच शब्द ईश्वर के नाम भी हैं और पाँच गुणों का संकेत भी देते हैं । जिस व्यापारी में ये पाँच गुण हों उसके पास धन स्वयं आवेगा बढ़ता जावेगा कभी हानि नहीं होगी।

१. इन्द्र – ऐसा शक्तिशाली बना कि दूसरों पर विजय प्राप्त कर सकूँ । इन्द्र विजयशील को कहते हैं जो सबको जीत ले वह इन्द्र है । धनी मनुष्य में यदि अपने शत्रुओं से धन को बचाने की, शत्रुओं को जीत लेने की क्षमता है तो उसका धन लगातार बढ़ता जावेगा ।

२. प्रजापति – प्रजा का पालन करने वाला अर्थात् उन मनुष्यों के साथ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो अधीन कर्मचारीगण हैं उन्हें सेवक न समझ अपनी प्रजा या अपने बच्चों के समान समझकर उनके सुख-दुःख में शामिल होकर प्रतिदिन उनके परिवार संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति में तत्पर रहे वह प्रजापति है । ऐसे मनुष्यों का व्यापार उन्नति के शिखर पर पहुँचता है । जिस व्यापारी में यह गुण नहीं वह अपने कर्मचारी को छोटा या बड़ा अपनी प्रजा या संतान के समान नहीं समझता । उसके यहाँ दंगा, हड़ताल, घृणा, क्रोध की आग भड़कती है । उसके व्यापार में हानि होती है ।

३. सविता – किसी छोटे व्यापारी ने धन लिया या सामान लिया उसको घाटा हो गया तो उसको निराश मत होने दो, उसे प्रेरणा दो वह दुबारा कार्य करे इस प्रकार सहायता करो । सविता सूर्य को भी कहते हैं। सूर्य जिस प्रकार प्रत्येक मनुष्य को प्रकाश देता है, प्रत्येक के लिए नई आशा बनकर आता है उसी प्रकार तुम भी अपने से छोटे कर्मचारी के प्रति उत्साहप्रद बनो, प्रकाश देने वाले बनो ।

४. सोम – तुम मीठा वचन बोलो, जिह्वा पर कड़वाहट न आवे, व्यवहार में कटुता न हो, मन में लेशमात्र कटुता न रहे ऐसे व्यापारी का व्यापार प्रतिदिन उन्नति के शिखर पर जावेगा । जो मनुष्य कड़वा बोलता है, उसका व्यापार ढंग से उन्नति नहीं कर सकता । लोग ऐसे मनुष्य के पास न जाकर उस व्यापारी के पास जाते हैं जो वाणी से मीठा बोले, भले ही अधिक मूल्य ले वह स्वीकार होता है ।

५. अग्नि – इसका अर्थ है आगे बढ़ना या ऊपर उठने वाला । आग की लपटें सदा ऊपर उठती हैं कभी नीचे नहीं जाती हैं । जो मनुष्य आग के समान आगे बढ़ता या ऊपर उठता है नैतिक दृष्टि से, आत्मिक दृष्टि से, दूसरों से व्यवहार करने के विषय में लगातार आगे बढ़ता और ऊपर उठता है उसके धन में लगातार वृद्धि होती है । एक ही मंत्र में वेद ने कहा, धन कैसे कमाओ, धन कैसे बढ़ता है । अच्छे व्यापारी तथा गृहस्थ-आश्रम में प्रविष्ट होने का अधिकार उस नर-नारी को है जिसमें चार ये गुण पाये जायें।

(क) शक्ति – नर-नारी के शरीर में शक्ति हो । शक्तिहीन, रोगी, निर्बल, वृद्ध को विवाह करने का अधिकार नहीं, अगर उसने गृहस्थ में प्रवेश किया तो संतान, रोगी, निर्बल तथा हर प्रकार से उन्नति में बाधक होगी ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2126

(ख) आत्मविश्वास – ईश्वर पर पूर्ण आस्था, विश्वास, संकल्प का पक्का, नेक कर्मों पर भरोसा तथा हृदय में पूर्ण विश्वास ।

(ग) नम्रता – सहनशीलता हो, अभिमान, अहंकार न हो ।

(घ) प्रसन्नता – वह प्रत्येक अवस्था में प्रसन्न रहे जो भी सुख-दुःख आवे उसमें समान रहे ।

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।।

(ऋक्० १०।१२१।१०)

हे सारे संसार के रचयिता, सबके स्वामी ! इस संसार में, इन अरबों, खरबों, ब्रह्माण्डों के भीतर कोई भी चर अथवा अचर तुमसे बड़ा नहीं है । तुम ही सबसे बड़े हो, सबसे अधिक शक्ति के धनी, सबको जीवन देने वाले सबको शक्ति देने वाले, सबका पालन करने वाले हो । अब तुम्हीं कृपा करो भगवन् ! कि जिस इच्छा अथवा कामना को लेकर हम तुम्हें स्मरण करते हैं, वह हमारी कामना पूर्ण होवे, जो कुछ हम प्राप्त करना चाहते हैं वह हमें प्राप्त हो जावे । धन, वैभव, सम्पत्ति सबके हम स्वामी हो जावें । इस मंत्र में कहीं धन की निन्दा नहीं परन्तु धन के लिए प्रार्थना है प्रभु से । वेद धन की निन्दा नहीं करता है, परंतु वह इसके साथ यह कहता है कि सब वैभव, सम्पत्ति, यश, कीर्ति मिलने के बाद भी यह सब किसका है ? **'कस्य स्विद्धनम्'** अर्थात् यह सब कुछ उस परमपिता परमात्मा का है ।

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ।।

(यजु० ४०।१)

भावार्थ – जो मनुष्य परमात्मा से डरते हैं कि यह हमको सदा सब ओर से देख रहे हैं । यह जगत् परमात्मा से व्याप्त और सर्वत्र परमात्मा विद्यमान है । इस प्रकार जो व्यापक अन्तर्यामी परमात्मा का निश्चय करके भी अन्याय के आचरण से किसी का कुछ भी द्रव्य ग्रहण नहीं करना चाहते वे धर्मात्मा होकर इस लोक के सुख और परलोक में मुक्ति रूप सुख को प्राप्त करके सदा आनन्द में रहते हैं ।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगेश्वर श्रीकृष्ण का वंश परिचय

विविध पुराणों तथा महाभारत के मंथन से कृष्ण जी का वंश इस प्रकार से मिलता है। प्रारम्भ में महर्षि अत्रि से चन्द्र या सोम हुए। चन्द्र महाराज ने बुध को जन्म दिया। महाराज बुध के साथ मनु-कन्या इला ब्याही गई। बुध और इला से ऐल अथवा चन्द्रवंशी सम्राट् पुरूरवा ने जन्म लिया। पुरूरवा से आयु, आयु से नहुष और सम्राट् नहुष से ययाति ने जन्म लिया। महाराज ययाति की दो रानियाँ थीं। दानव वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा तथा प्रसिद्ध नीतिकार शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी। शर्मिष्ठा से द्रुह्य, अनु, पुरु तीन पुत्र हुए। देवयानी से महाराज यदु और तुर्वस ने जन्म लिया। इस प्रकार महाभारत के दोनों प्रसिद्ध वंश कौरव और यदुवंशियों के आदि महाराज पुरु और यदु एक ही पिता ययाति की संतान हैं। महाराज पुरु की ३३वीं पीढ़ी में तेजस्वी सम्राट् कुरु ने जन्म लिया। जिससे कुरु वंशी कौरव कहलाये। उधर यदु की ३५वीं पीढ़ी में राजा सतत्व हुए उनके पुत्र सातत्व (भीम) ने अपने दो पुत्रों महाभोज अन्धक तथा वृष्णि को जन्म दिया। इन दोनों पुत्रों के कारण प्रसिद्ध यदुवंश दो धाराओं में परिवर्तित हो गया, जिसे क्रमशः अन्धक और वृष्णि वंश कहा जाने लगा। अन्धक की नवीं पीढ़ी में महाराज अहुक हुए। अहुक से राजा उग्रसेन और देवक ने जन्म लिया। उग्रसेन का पुत्र विख्यात महाराज कंस और देवक की पुत्री महात्मा कृष्ण की माता देवकी हुई। साथ ही दूसरी धारा वृष्णि की आठवीं पीढ़ी में शूर ने जन्म लिया। इन्हीं के नाम पर मथुरा के आस-पास का सारा व्रजमंडल शूरसेन कहलाया। शूर ने कृष्ण के पिता वसुदेव तथा पृथा, श्रुतदेवा, श्रुतकीर्ति, श्रुतश्रवा और राजाधि देवी नाम की पाँच पुत्रियों को जन्म दिया जो आगे चलकर भारतीय इतिहास में वीर माताओं के नाम से विख्यात हुईं। इस प्रकार लोकनायक कृष्ण महाराज यदु की ४५वीं पीढ़ी में वृष्णि धारा के यदुवंशी क्षत्रिय थे। कृष्ण के पिता वसुदेव की दो पत्नियाँ थीं। कंस के चाचा देवक की पुत्री में वृष्णि धारा के यदुवंश क्षत्रिय थे। कृष्ण के पिता वसुदेव की दो पत्नियाँ थीं, कंस के चाचा देवक की पुत्री देवकी तथा महाराज पुरु की ३८वीं पीढ़ी में उत्पन्न महाराज प्रतीप की पुत्री तथा प्रसिद्ध राजा शान्तनु की बहिन रोहिणी। देवकी ने कृष्ण और रोहिणी ने बलराम को जन्म दिया। यही कृष्ण और बलराम की जोड़ी आगे चलकर सभी प्रकार की विचारधारा वालों के लिए एक आदर्श बनी जो आज तक प्रचलित है। कंस जैसे शक्तिशाली राजा को परास्त कर उसका जब वध किया उस समय कृष्ण पूर्ण युवक थे। साथ-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ **चाणूर, मुष्टिक** जैसे पहलवानों को मल्ल में परास्त किया तथा **कुवलयापीड़ हाथी** को भी पछाड़ने में समर्थ हो सके।

वसुदेव जी के कुल पुरोहित श्री आचार्य गर्ग ने कृष्ण, बलराम का विधिपूर्वक उपनयन संस्कार कराया था। इस संस्कार के पश्चात् गायत्री मंत्र द्वारा सन्ध्या और उपासना अग्निहोत्र का उपक्रम प्रारम्भ कर दिया था। इस क्रिया के पश्चात् ही उन्होंने उज्जैन निवासी कश्यप गोत्रिय सान्दीपनी जी के आश्रम में प्रविष्ट होकर **षडंग-वेद, उपवेद, धर्मशास्त्र, दर्शन आदि के साथ-साथ सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैत और आश्रय इन छः भेदों से युक्त राजनीति की भी दक्षतापूर्ण शिक्षा पाई थी।**

पुराण, महाभारत और उपनिषद् के अनुसार कृष्ण जी के चार गुरु थे। चारों ने इस प्रकार शिक्षा दी थी। **आचार्य गर्ग** ने संस्कार द्वारा द्विजत्व में दीक्षित कर ईशोपासना की अभिरुचि उत्पन्न की थी। **गुरु सान्दीपनी** ने वेद-शास्त्रों की शिक्षा देकर उनका जीवन संसारोपयोगी बनाया था। छान्दोग्योपनिषद् के अनुसार **घोर आंगिरस** ने कृष्ण को ब्रह्म विद्या की शिक्षा देकर ब्रह्म साक्षात्कार करने की प्रेरणा प्रदान की थी। महाभारत के अनुसार **महर्षि उपमन्यु** ने कृष्ण को प्रभु दर्शन की प्रायोगिक शिक्षा देकर उन्हें समाधिस्थ योगी बना, आत्म-साक्षात्कार कराया था। इसी से कृष्ण को योगिराज कहा जाता है।

कृष्ण अपनी वंश परम्परा के कारण नारायण कहे जाते थे और जितने यदुवंशी थे सभी नारायण कहलाते थे। इसी से कृष्ण की सेना को नारायणी सेना कहा जाता था, जिसे महाभारत युद्ध के पहले माँगने पर दुर्योधन को दिया था जो अति बलशाली सेना उस समय में थी।

प्रभु-दर्शन

कृष्ण जी ने युधिष्ठिर से कहा कि जब मैं आचार्य उपमन्यु की सेवा में उपस्थित हुआ, तब उन्होंने आठवें दिन मुझे विधिपूर्वक दीक्षित किया, मुझे दण्ड धारण कराया, बाल बनवा दिया, कुशासन और वल्कल वस्त्र प्रदान किया। घृत की भाँति चिकनी मेखला दी। एक मास तक केवल फलाहार किया, दूसरे मास में केवल जलाहार किया। तीसरे, चौथे, पाँचवे मास तक केवल वायु पीकर रहा। एक पैर पर खड़ा होकर हाथ ऊपर किए हुए आलस्य-रहित होकर तप में लगा रहा। ऐसी स्थिति में एक दिन हजारों सूर्य के समान दिव्य तेज मुझे दिखाई पड़ा। उस महातेज को ज्यादा देखने की शक्ति मुझमें नहीं थी। उस महातेज का वर्णन नहीं किया जा सकता है[१]।

❖❖❖

१. प्रभु दर्शन का यह वर्णन भागवत आदि के अनुसार होगा जो अतिशयोक्तिपूर्ण प्रतीत होता है। सम्पा०॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगेश्वर श्री कृष्ण

श्रीकृष्ण के गुणवाचक नाम

१. हृषीकेश – कृष्ण सम्पूर्ण इन्द्रियों के स्वामी हैं। कुरुक्षेत्र युद्ध में अर्जुन को दिव्य इन्द्रियों का निर्देशन करते हैं इसी से कृष्ण को हृषीकेश कहा गया।

२. मधुसूदन – मधु नामक दुर्दान्त राक्षस का वध किया था।

३. गोविन्द – गौओं व इन्द्रियों के आनन्द देने वाले थे इसी से गोविन्द कहलाये।

४. वासुदेव – वसुदेव के पुत्र होने से वासुदेव कहलाये।

५. देवकीनन्दन – देवकी के गर्भ से उत्पन्न हुए थे अतः देवकीनन्दन कहलाये।

६. यशोदानन्दन – वृन्दावन में यशोदा के यहाँ लालन-पालन हुआ। वहाँ पर बाल-क्रीड़ा करने के कारण ये यशोदानन्दन कहलाये।

७. पार्थ सारथी – अर्जुन के रथ का संचालन युद्ध में किया इसी से पार्थ सारथी कहलाये।

पाँच हजार दो सौ छब्बीस वर्ष हुआ आज की ही तरह विश्व के क्षितिज पर भाद्रपद की अँधेरी रात्रि अपनी निगूढ़ कालिमा के साथ छाई हुई थी, तब भी भारतवर्ष में जन, धन, शक्ति, साहस था पर एक अकर्मण्यता भी थी जिससे सब कुछ अभिभूत, मोहाच्छन्न तथा तमसावृत हो रहा था। इस धरती पर महापुरुष तो अनेक हुए हैं किन्तु लोक-नीति, समाज तथा अध्यात्म के समन्वय के सूत्र में गूँथकर समग्र राष्ट्र में क्रान्ति का शंखनाद करने वाले योगेश्वर श्रीकृष्ण ही थे। श्रीकृष्ण योगेश्वर की उपाधि से विभूषित हैं। महाभारत के युद्ध में सक्रिय भूमिका निभाने वाला एक व्यक्ति जो पारिवारिक गृहस्थ जीवन की सीमाओं में भी बँधा हुआ है योगेश्वर या योगिराज़ कैसे हो सकता है ? हम श्री रामचन्द्र जी को तो योगेश्वर नहीं कहते किन्तु श्रीकृष्ण को योगेश्वर कहते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता के अंतिम श्लोक में संजय धृतराष्ट्र को यह स्पष्ट रूप से बताते हैं कि **कृष्ण योगेश्वर हैं** और पांडवों के साथ हैं, इसीलिए उनकी विजय निश्चित होगी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ।।

गी० १८।७८।।

श्री कृष्ण को योगेश्वर क्यों कहा गया है, इसके लिए हमें 'योगेश्वर' अथवा 'योग' शब्द पर विचार करना होगा । महाभारत के वनपर्व में यक्ष द्वारा युधिष्ठिर से अंतिम प्रश्न पूछा गया था जो निम्न है । **पुरुषं त्विदानीं व्याख्याहि यक्ष सर्वधनी नरः।** वन० ३१३।१९।। अर्थात् आप उस पुरुष को बतायें जो संसार का सबसे बड़ा धनी है ? धर्मराज युधिष्ठिर का उत्तर था-

तुल्ये प्रियाप्रिये यस्य, सुखदुःखे तथैव च ।
अतीतानागते चोभे स वै सर्वधनी नरः ।।

वन० ३१३।२१।।

जिसको प्रिय और अप्रिय, सुख-दुःख, अतीत-अनागत समान प्रतीत हो, वही संसार में सबसे बड़ा धनी है । प्रिय और अप्रिय सिद्धि और असिद्धि को समान देखना ही तो योग है और जिसने इस स्थिति को प्राप्त कर लिया है वही योगेश्वर है । गीता में यह श्लोक निम्न भाव दर्शाता है-

योगस्थः कुरु कर्माणि संगं त्यक्त्वा धनंजय ।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ।।

गी० २।४८।।

इसी को अन्यत्र भी **'सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ'** (गी० २।३८) ऐसा कहा है । परवर्ती काल के लोगों ने चाहे कृष्ण के उदात्त चरित्र तथा बहु आयामी कार्यों को समझने में कितनी ही भूलें क्यों न की हों, उनके समकालीन तथा अत्यन्त आत्मीयजनों ने श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व का सही मूल्यांकन किया था । उनसे आयु तथा अनुभव में बड़े युधिष्ठिर उनका सम्मान करते थे तथा उनकी सलाह को सर्वाधिक महत्व देते थे । पितामह भीष्म, आचार्य द्रोण, कृपाचार्य तथा विदुर जैसे नीतिज्ञ प्रतिपक्ष के लोग भी उनको पूर्ण आदर देते थे । महाभारत के प्रणेता कृष्ण द्वैपायन व्यास ने तो उन्हें धर्म का रूप बताया और लिखा-

यतः कृष्णस्ततो धर्मो यतो धर्मस्ततो जयः।

भीष्म० ६६।३५।।

आर्य जीवनचर्या का सम्पूर्ण विकास हमें कृष्ण के चरित्र में सर्वत्र

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलता है। जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जिसे उन्होंने अपनी प्रतिभा तथा श्रम के द्वारा प्रभावित न किया हो। सर्वत्र उनकी अद्‌भुत मेधा तथा प्रतिभा के दर्शन होते हैं। एक ओर वे महान् राजनीतिज्ञ, क्रान्तिविधाता, धर्म पर आधारित नवीन साम्राज्य के स्रष्टा, राष्ट्रनायक के रूप में दिखाई पड़ते हैं तो दूसरी ओर धर्म, अध्यात्म, दर्शन तथा नीति के सूक्ष्म चिंतक, विवेचक तथा प्रचारक के रूप में भी उनकी भूमिका कम महत्व की नहीं है। उनके समय में 'भारतवर्ष' सुदूर उत्तर में गान्धार **(आज का अफगानिस्तान)** से लेकर दक्षिण की सह्याद्रि पर्वतमाला तक क्षत्रियों के छोटे-छोटे स्वतन्त्र, किन्तु निरंकुश राज्यों में विभक्त हो चुका था। उन्हें एक सूत्र में पिरोकर समग्र भारतखण्ड को एक सुदृढ़ राजनीतिक इकाई के रूप में पिरोने वाला कोई नहीं था। एक चक्रवर्ती प्रजापालक सम्राट् के न होने से माण्डलिक राजा नितान्त स्वेच्छाचारी, प्रजापीड़क तथा अन्यायी हो गये थे। मथुरा का कंस, मगध का जरासन्ध, चेदिनरेश शिशुपाल तथा हस्तिनापुर के कौरव सभी दुष्ट विलासी दुराचारी तथा ऐश्वर्य मदिरा में प्रमत्त हो रहे थे। कृष्ण ने अपनी नीतिमत्ता, कूटनीतिक चातुरी तथा सूझबूझ से इन सभी अनाचारियों का मूलोच्छेद किया तथा धर्मराज की उपाधि धारण करने वाले अजातशत्रु युधिष्ठिर को आर्यावर्त के सिंहासन पर प्रतिष्ठित कर, इस देश में चक्रवर्ती धर्मराज स्थापित किया था।

जिस प्रकार वे नवीन साम्राज्य निर्माता तथा स्वराज्यस्रष्टा युगपुरुष के रूप में प्रतिष्ठित हुए, उसी प्रकार अध्यात्म तथा तत्व-चिन्तन के क्षेत्र में भी उनकी प्रवृत्तियाँ चरमोत्कर्ष पर पहुँच चुकी थीं। सुख और दुःख को समान समझने वाले लाभ तथा हानि, जय और पराजय जैसे द्वन्द्वों को एक-सा मानने वाले अनुद्विग्न वीतराग तथा जल में रहने वाले कमल-पत्र के समान वे सर्वथा निर्लेप तथा स्थितप्रज्ञ रहे। प्रवृत्ति और निवृत्ति, प्रेय व श्रेय, ज्ञान और कर्म, ऐहिक और पारलौकिक जैसी प्रत्यक्ष में विरोधी दीखने वाली प्रवृत्तियों में अपूर्व सामञ्जस्य स्थापित कर, उन्हें स्वजीवन में क्रियान्वित करना श्रीकृष्ण जैसे महामानव के लिए ही सम्भव था। उन्होंने धर्म के दोनों लक्ष्यों-अभ्युदय और निःश्रेयस को सार्थक किया। अतः यह निरपवाद रूप में कहा जा सकता है कि कृष्ण का जीवन आर्य आदर्शों की परिणति है। समकालीन सामाजिक दुरवस्था, विषमता तथा नष्ट हुए नैतिक मूल्यों के प्रति

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे पूर्ण जागरूक थे। पतनोन्मुख, पीड़ितों तथा शोषितों के प्रति उनमें अशेष संवेदना तथा सहानुभूति थी। गान्धारी, कुन्ती, द्रौपदी, सुभद्रा, उत्तरा आदि आर्यकुल ललनाओं को समुचित सम्मान देकर उन्होंने नारीवर्ग की गरिमा बढ़ाई। महाभारत के युग में सामाजिक पतन के लक्षण दिखाई पड़ने लगे थे। गुण-कर्म और स्वभाव पर आधारित वर्णव्यवस्था जन्मना जातियों के रूप में बदल चुकी थी। ब्राह्मण वर्ग अपनी स्वभावगत शुचिता, लोकोपकार-भावना, त्यागसहिष्णुता तथा सम्मान के प्रति तटस्थता-जैसे सद्गुणों को भुलाकर संग्रहशील, अहंकारी तथा असहिष्णु बन चुके थे। आचार्य द्रोण जैसे शस्त्र तथा शास्त्र में निष्णात ब्राह्मण अपनी अस्मिता भूलकर और अपने अपमान को सहकर भी कुरुवंशी राजकुमारों को उनके महलों में ही शिक्षा देकर उदरपूर्ति करते थे। कहाँ तो गुरुकुलों का वह स्वर्णयुग जिसमें महामहिम सम्राटों के पुत्र भी शिक्षा ग्रहण के लिए महलों को छोड़कर आचार्यकुलों में रहते थे और त्याग अनुशासन एवं संयम का जीवन व्यतीत करते थे, इसके विपरीत महाभारत युग में तो कुरुवृद्ध भीष्म के आदेश से द्रोणाचार्य ने राजमहल को ही विद्यालय का रूप दे दिया। आज के विश्वविद्यालय का शायद यही पुराना रूप था, जहाँ शिक्षक को शिष्य द्वारा शुल्क लेकर उसे पढ़ाना था। इस कुरुवंशीय विश्वविद्यालय का प्रथम ग्रेजुएट दुर्योधन ही था, जिसके अनिष्ट कार्यों ने देश के भविष्य को दीर्घकाल के लिए अन्धकारपूर्ण बना दिया था। सामाजिक समता के अभाव में क्षत्रिय राजकुमारों में अपने उच्च कुलोत्पन्न होने का मिथ्या गर्व पनपता रहा। उधर तथाकथित हीन कुल में उत्पन्न होने का भ्रम पालने वाले कर्ण को अपने पौरुष की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए जन्मना जाति को धिक्कारना पड़ा। कुरुकुल के राजकुमारों की अस्त्र सञ्चालन प्रतियोगिता में कर्ण को केवल इसीलिए भाग नहीं लेने दिया गया था क्योंकि कुन्ती का कानीन पुत्र होने पर भी अधीरथ सूत (सारथी) ने उसका पालन किया था।

सूतो वा सूतपुत्रो वा यो वा को वा भवाम्यहम्।
दैवायत्तं कुले जन्म मदायत्तं तु पौरुषम्॥

वेणीसंहार, ३।३७॥

मैं सूत हूँ या सूतपुत्र हूँ या अन्य कोई, किन्तु यह ध्यान रहे कि किसी कुल में जन्म लेना दैव के आधीन है। जबकि मेरा पौरुष और पराक्रम तो

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा अपना ही है। क्षत्रिय कुलाभिमानी राजकुमारों के मिथ्या गर्व को सन्तुष्ट करने के लिए आचार्य द्रोण ने वनवासी बालक एकलव्य को अपना शिष्य बनाने से इन्कार कर दिया था। उस युग में धर्माधर्म, कर्त्तव्याकर्त्तव्य, नीति-अनीति का अंतर लुप्त हो चुका था। समाज में अर्थ की प्रधानता थी और लोग पेट भरने के लिए किसी भी अनीतिपूर्ण कार्य को करने में संकोच नहीं करते थे। यह जानते हुए भी कि कौरवों का पक्ष अधर्म, अन्याय तथा असत्य पर आश्रित है, भीष्म जैसे प्रज्ञापुरुष को यह कहने में संकोच नहीं हुआ था-

अर्थस्य पुरुषो दासः दासस्त्वर्थो न कस्यचित्।
इति सत्यं महाराज! बद्धोऽस्म्यर्थेन कौरवैः ।।

भीष्म० ४३।८२।।

हे महाराज! पुरुष तो अर्थ का दास होता है, अर्थ किसी का दास नहीं होता यही जानकर मैं कौरवों के साथ बंधा हूँ। इन्हीं विषम तथा पीड़ाजनक परिस्थितियों को कृष्ण ने निकट से देखा था। इन दुखद स्थितियों से जनता को उबारने के लिए ही उनके सभी प्रयास थे। शोषित, पीड़ित तथा दलित वर्ग के अभ्युत्थान के लिए उन्होंने सर्वतोमुखी प्रयास किये। ताप-श्राप-प्रपीड़ित, त्रस्त जनों के प्रति उनकी संवेदना नाना रूपों में प्रकट हुई थी, तभी तो कौरव सभा में तिरस्कृत तथा अपमानित द्रौपदी की लाज बचाई तथा उसके मुक्त केशों को बाँधने से पहले कौरवों के सर्वनाश की घोषणा की। श्रीकृष्ण जी को राजसी ठाठ-बाट तथा वैभव के झूठे प्रदर्शन से घृणा थी। अपनी शान्ति-यात्रा के दौरान दुर्योधन के राजकीय आतिथ्य को ठुकराकर उन्होंने महामति महात्मा विदुर का सादा भोजन स्वीकार किया। उस समय के लोकनीति ज्ञाता कृष्ण ने अपने इस आचरण के औचित्य का प्रतिपादन करते हुए कहा था-

सम्प्रीतिभोज्यान्यन्नानि, आपद्भोज्यानि वा पुनः।
न च सम्प्रीयसे राजन् न चैवापद्गता वयम् ।।

(उद्योगपर्व ९१।२५)

हे राजन्! भोजन करने में दो हेतु होते हैं, जिससे प्रीति हो उसके यहाँ भोजन करना चाहिए अथवा जो विपत्तिग्रस्त होता है, उसे मजबूरी में दूसरों का दिया अन्न स्वीकार करना पड़ता है, किन्तु यहाँ तो स्थिति कुछ दूसरी है। आपको मुझसे प्रेम का रिश्ता तो है ही नहीं, और न मैं आपदा का मारा हूँ जो आपका अन्न ग्रहण करूँ। श्री कृष्ण के इस उदात्त आदर्श रूप को शताब्दियों से हमने भुला दिया था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय उस महापुरुष ने गुरुजनों के चरण प्रक्षालन करने का विनम्र कार्य स्वत: करने का निर्णय लिया, इसी से उस यज्ञ की प्रथम पूजा के अधिकारी भी वे ही बने। उस समय श्रीकृष्ण की अग्रपूजा का प्रस्ताव करते समय भीष्म ने उन्हें अपने युग का वेद-वेदांगों का उत्कृष्ट ज्ञाता, अतीव बलशाली तथा मनुष्यलोक में अति विशिष्ट बताया था। भीष्म के शब्दों में वे दानशीलता, शिष्टता, शास्त्रज्ञान, वीरता, कीर्तिमत्ता तथा बुद्धिशीलता में सर्वश्रेष्ठ हैं। वे ऋत्विक् आचार्य, स्नातक तथा प्रिय राजा के सदृश प्रिय हैं। इन्हीं कारणों से हृषीकेश केशव हमारे सम्मान के पात्र हैं। कृष्ण के इस निष्पाप, निष्कलुष तथा आदर्श चरित्र की ओर पुन: लोगों का ध्यान आकृष्ट करने का श्रेय महर्षि दयानन्द सरस्वती को है, जो भारतीय नवजागरण के पुरोधा महापुरुष थे। उन्होंने अपने अमर ग्रन्थ **'सत्यार्थप्रकाश'** के ग्यारहवें समुल्लास में लिखा...........

'श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण-कर्म-स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है, जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्ण जी ने जन्म से मृत्यु पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा।' स्वामी दयानन्द के समकालीन बंगला में कृष्ण चरित्र के मार्मिक समालोचक बंकिमचन्द्र चटर्जी ने १८८६ में श्रीकृष्ण चरित शीर्षक ग्रन्थ लिखकर महाभारत आधारित उनके चरित्र की समीक्षा की। कृष्णचरित के समग्र अनुशीलन तथा उनके जीवन में घटित घटनाओं के पौर्वापर्य का समुचित अध्ययन करने के पश्चात् बंकिमचन्द्र चटर्जी ने लिखा-श्रीकृष्ण सर्वगुण सम्पन्न हैं। इनकी सब वृत्तियों का सर्वांगपूर्ण विकास हुआ है। वे सिंहासनासीन होकर भी उदासीन हैं, धनुर्धारी होकर भी धर्मवेत्ता हैं। राजा होकर भी पंडित हैं शक्तिमान् होकर भी प्रेममय हैं, यही वह आदर्श है जिससे युधिष्ठिर ने धर्म सीखा और अर्जुन उनका प्रिय शिष्य बना। जिसके चरित्र के समान महामहिममण्डित चरित्र मनुष्य भाषा में कभी वर्णित नहीं हुआ। भागवत, विष्णु तथा ब्रह्मवैवर्त पुराणों में वर्णित कृष्ण के चरित्र की तुलना में बंकिम चन्द्र चटर्जी जी ने महाभारत कृष्ण के मानवीय और सहज चरित्र को ही प्रामाणिक माना। उन्होंने इस बात पर दु:ख प्रकट किया कि मुरलीधर श्रीकृष्ण को तो पौराणिकों ने अपना उपास्य बनाया, किन्तु सुदर्शन चक्रधारी वासुदेव को उन्होंने विस्मृत कर दिया। इस बात पर भी घोर आश्चर्य प्रकट किया कि कालान्तर में कल्पित राधा को तो कृष्ण के वाम भाग में आसीन किया गया किन्तु वेदमन्त्रों की साक्षी से अग्नि की परिक्रमापूर्वक सप्तपदी पूर्ण कर जिस विदर्भ राजकन्या रुक्मिणी को उन्होंने अपनी अर्द्धांगिनी बनाया उसके साथ प्रतिष्ठित-पूजास्थलों की संख्या तो भारत में नगण्य ही है।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री कृष्ण गाथा

श्री कृष्ण का जन्म आज से ५२२७ वर्ष पूर्व कंस के कारागार में देवकी के गर्भ से आठवीं सन्तान के रूप में हुआ था। इनका जन्म अर्धरात्रि में भाद्रप्रद अष्टमी बुधवार रोहिणी नक्षत्र में हुआ था। जन्म के पश्चात् इनको गुप्त रूप से पालन-पोषण हेतु गोकुल निवासी गोपाधिपति नन्द के यहाँ पहुँचाया गया और यशोदा ने इनका लालन-पालन किया, और जिस प्रकार से कृष्ण ने बाल्यावस्था में ही अपूर्व तेजस्विता, वीरता का परिचय दिया वैसे गो वंश की वृद्धि और वहाँ के नर-नारियों को संगठित कर उस समय के महाराज कंस जो अधर्म के मार्ग पर थे उनको मृत्युदंड दिया। गुरुकुल में गुरु सान्दीपनी ऋषि के आश्रम में 'वेद, वेदांग, शास्त्रों में प्रवीण होकर कर्मक्षेत्र में उतरे। बाल्यावस्था ही नहीं, कृष्ण का सम्पूर्ण जीवन ही अन्याय के विरोध और न्याय धर्म की रक्षा करने में ही व्यतीत हुआ। श्रीकृष्ण ने राजनीतिक, सामाजिक धार्मिक कला संबंधी सभी क्षेत्रों में कार्य किया और लोगों को असत्य के मार्ग से हटाकर सन्मार्ग पर चलाया। आर्यावर्त्त का इतिहास साक्षी है कि जब अन्याय, अत्याचार, अधर्म की वृद्धि होती है तो परमात्मा इस धरा धाम पर किसी दिव्य पुरुष को भेज देते हैं।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥ (गीता ४।७)

श्री कृष्ण जी ने गीता में इसी बात का उल्लेख किया है। गीता में श्रीकृष्ण ने यह भी लिखा कि इसको पढ़ने से प्राणी को ज्ञान, कर्म, उपासना की प्राप्ति होती है। चारों वेदों से ज्ञान प्राप्त कर कृष्ण ने ज्ञान, कर्म, उपासना वेदत्रयी का गीता द्वारा बोध कराया। गुरु सान्दीपनी ऋषि ने कृष्ण को तीन बातों को बताया था।

१. ओ३म् का वाचन करना।
२. किए गये कर्मों का स्मरण करना।
३. पुरुषार्थ का स्मरण रखना।

कर्म योग के तीन प्रमुख तत्त्व बताये गये हैं-तपः, स्वाध्याय, ईश्वर-प्रणिधान।

सुख-दुःख या हानि-लाभ के द्वंद्व को सहन करने का नाम तप है, एवं ईश्वर ने हमें अपनी पात्रता के अनुसार जो कुछ दिया है वही शिरोधार्य होना चाहिए,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही तप का मूल है । ओ३म् का स्मरण, वेदों का स्वाध्याय ही स्वाध्याय कहलाता है। मनुष्य के पास जो भी अच्छा या बुरा है अपने कर्मानुसार ईश्वर का दिया हुआ है। अत: सब कुछ अर्पित करते हुए अपना कर्म करते जाना मनुष्य के लिए उत्तम है। स्वाध्याय मनुष्य को जग की वासनाओं से दूर रखता है । निष्काम कर्म करने वाला ही इस भवसागर को शांतिपूर्वक पार कर सकता है । श्रीकृष्ण इतने महान् योगी थे कि उन्हें योगेश्वर कृष्ण की संज्ञा मिली । महाभारत में श्रीकृष्ण जी के दिव्य गुणों का वर्णन करते हुए भीष्म पितामह ने कहा है कि इस समय मनुष्य लोक में श्रीकृष्ण जी से उत्तम दिव्य पुरुष कोई नहीं है। दान, दक्षता, वेदादि शास्त्रों का ज्ञान, शूरवीर, बुराई के प्रति लज्जावान्, कीर्ति, उत्तम बुद्धि, नम्रता, शोभा, ऐश्वर्य, धैर्य, सन्तोष सब प्रकार की मानसिक, शारीरिक, आत्मिक, पुष्टि आदि ये सब गुण, अच्युत अर्थात् कर्त्तव्य मार्ग से कभी न विचलित होने वाले सभी गुण श्रीकृष्ण जी में नियत रूप में विद्यमान हैं । श्री कृष्ण का योगेश्वर नाम तो महाभारत के लेखक महर्षि व्यास को अत्यन्त प्रिय था । उनके जीवन के क्षण-क्षण से और शरीर के कण-कण से तथा अणु-अणु से उनका योगेश्वरत्व प्रकट होता था । उनके प्रशंसक तो उनमें सोलह कलाओं का समावेश मानते हैं । उनके बाद द्वापर से कलियुग के वर्तमान समय तक कोई ऐसा दिव्य योगेश्वर पुरुष नहीं हुआ । श्रीकृष्ण जी ने अपने जीवन में जो अंतिम महत्वपूर्ण कार्य किया है वह उनकी दूरदर्शिता, चरित्र निर्माण का ज्वलंत प्रमाण है । उन्होंने जब अपने जाति-भाइयों अर्थात् यदुवंशियों को मद्यपान, मिथ्यावादी, अधर्म का प्रचलन और निर्बुद्धि होते देखा, तो उन्होंने यही उचित समझा कि इस विष वृक्ष को समूल नष्ट करना ही उचित होगा और अपने सुदर्शन चक्र का अंतिम बार प्रयोग करके यह कार्य भी सम्पन्न कर दिया। आर्य साम्राज्य की संस्थापना में कृष्ण ने अपने वंश का भी समूल नष्ट करने में संकोच न किया, अविलम्ब पूर्ण किया । **'रणछोड़ जी'** के प्रसंग में महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा-'जो श्रीकृष्ण जी के सदृश कोई होता तो इनके धुर्रे उड़ा देता और ये भागते फिरते।' महर्षि दयानन्द ने भागवत पुराण में वर्णित कृष्ण की लीलाओं के संदर्भ में लिखा है कि-इन पुराण कर्त्ताओं ने मनमाने अनुचित दोष लगाये हैं । इसको पढ़, पढ़ा, सुन, सुना के अन्य मत वाले श्रीकृष्ण की बहुत निन्दा करते हैं । जो यह भागवत पुराण न होता तो श्रीकृष्ण जी के सदृश महात्माओं की झूठी निन्दा क्यों होती ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैसे **भागवत** में भक्ति का जो गूढ़ तत्व है वह **'जयदेव गोस्वामी'** के हाथों में आकर **मदन धर्मोत्सव** बन गया है, तबसे हमारी मातृभूमि मदनोत्सव के बोझ से लदी और दबी चली आ रही है। **ब्रह्म वै० पुराण** में एक स्थान पर इस राधा-कृष्ण के प्रेम की निराधार कल्पना ने देश के चरित्र को इतना विकृत कर दिया है कि इसका लेखा-जोखा नहीं है। यहीं से सखी सम्प्रदाय का भी प्रचलन शुरू हुआ है, जो कि नितान्त घृणास्पद है। कृष्ण के जीवन का यह रासलीला और राधा-कृष्ण प्रेम प्रसंग असमान समाज का लक्षण है जो वास्तविकता के सर्वथा विपरीत है। राधा कोई पात्र नहीं है। महाभारत जैसे विशाल ग्रन्थ में ही नहीं अपितु अन्य किसी ग्रन्थ में वह उपलब्ध नहीं है। यह भागवत पुराणकारों की कपोल कल्पना मात्र है। केवल एक **'ब्रह्मवैवर्त पुराण'** को छोड़कर अन्य किसी भी पुराण में **राधा-कृष्ण** की लीला का वर्णन नहीं है, जबकि इसी पुराण में **राधा कृष्ण की मामी** लगती है-

वृषभानोश्च वैश्यस्य सा च कन्या बभूव ह।
सार्धं रायाणवैश्येन तत्सम्बन्धं चकार सः॥
कृष्णमातायशोदायाः रायाणस्तत्सहोदरः।
गोलोके गोपकृष्णांशः सम्बन्धात् कृष्णमातुलः॥

(ब्रह्म वै०-प्रकृति खंड अध्याय ४०।३२,३५,३७,३८॥)

अंध कृष्ण भक्तों को चाहिए कि इस कपोल कल्पित राधा के प्रसंग का बहिष्कार कर योगेश्वर, सुदर्शन चक्रधारी श्रीकृष्ण के उज्ज्वल चरित्र को याद कर, अपने जीवन में धारणकर जीवन को सफल बनावें। राधा की कपोल कल्पना की तरह कृष्ण की सोलह हजार रानियों का प्रसंग भी बिल्कुल निराधार लगता है किंतु जो लोग मानव जीव विज्ञान को जानते हैं कि किसी मनुष्य के लिए यह असम्भव है कि वह सोलह हजार रानियों के साथ जीवन-यापन कर सके। यह भी कपोल कल्पना भागवत पुराण की देन है। वास्तव में जब श्रीकृष्ण जी ने आसाम में राजा नरकासुर को पराजित कर उसका वध किया तथा जो उसके कारागार में बन्द असंख्य छोटे-छोटे राजा, रानियाँ, प्रियजन, दासियाँ आदि बन्दी थीं उनमें राजकुमारियाँ भी थीं तब सबको छुड़वाकर अपने-अपने स्थानों पर भिजवा दिया था। इसी बात का पुराणकर्त्ताओं ने विकृत वर्णन श्रीकृष्ण जी की सोलह हजार रानियों के रूप में किया है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाभारत में पुनः भीष्म पितामह ने जब युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ कर रहे थे, तब अर्घ्य प्रदान की चर्चा आई तो युधिष्ठिर ने भीष्म पितामह से परामर्श किया। भीष्म पितामह ने कहा-मुझे यहाँ उपस्थित जनों में तो श्रीकृष्ण ही एकमात्र ऐसे दिखाई देते हैं। ये उपस्थित जनों में ही नहीं, अपितु समस्त पृथ्वी भर में अर्घ्य दिये जाने के लिए सर्वोत्तम हैं। वहाँ चेदिनरेश शिशुपाल भी था, वह बाल्यकाल से ही श्रीकृष्ण से शत्रुता का विचार रखता था, उसे यह बात सहन नहीं हुई तो उसका समाधान करने के लिए पुनः भीष्म ने कहा- मैंने बहुत ज्ञानवृद्ध राजाओं का सत्संग किया है। वे सब राजा कृष्ण के जन्म से लेकर अब तक के महत्त्वपूर्ण कर्मों का वर्णन प्रशंसापूर्वक करते हैं। हम कृष्ण के यश और शौर्य पर मुग्ध हैं। ब्राह्मणों में ज्ञान की पूजा होती है, क्षत्रियों में वीरता की, वैश्यों में धन की और शूद्रों में आयु की। यहाँ मैं किसी ऐसे राजा को नहीं देखता जिसे कृष्ण जी ने अपने अतुल तेज से न जीता हो। वेद वेदांग का ज्ञान और बल पृथ्वी के तल पर इनके समान किसी और में नहीं। इनका दान, कौशल, शिक्षा, ज्ञान, शक्ति-शालीनता, नम्रता, धैर्य संतोष अतुलनीय है। ये ऋत्विज हैं, गुरु हैं, जामाता होने के योग्य हैं. स्नातक हैं और लोकप्रिय राजा हैं। यह सब गुण इस एक पुरुष में मानो मूर्त हो गये हों। इसीलिए इन्हें ही अर्घ्य के योग्य समझा गया है। इन सब बातों को सुनकर शिशुपाल को हार्दिक कष्ट हुआ। शिशुपाल के सिर पर तो मृत्यु का ताण्डव हो रहा था वह नहीं माना। उसने कृष्ण जी को काफी अपशब्द भी कहे, अंत में कृष्ण ने उसका वध किया, उसके पुत्र को सिंहासन पर आरूढ़ किया। तदनन्तर यज्ञ का कार्य सम्पन्न हुआ। श्रीकृष्ण जी जब पांडव की तरफ से शान्ति दूत बनकर कौरव सभा में गये थे उस समय भी भीष्म पितामह ने महाराज धृतराष्ट्र को समझाते हुए कृष्ण जी के संदर्भ में कहा था "राजन्! श्रीकृष्ण का आप सत्कार करें अथवा न करें इससे उनको कोई अंतर नहीं पड़ता है उनकी अवहेलना नहीं होनी चाहिए। श्रीकृष्ण जिस कार्य को करना चाहेंगे वह निश्चित रूप से होगा। अच्छा यही है कि आप श्रीकृष्ण को मध्यस्थ बनाकर पांडवों के साथ सन्धि कर लीजिए।" दुष्ट दुर्योधन के दुराग्रह से यह सन्धि नहीं हुई अंत में युद्ध का निश्चय हुआ। श्रीकृष्ण अर्जुन के सारथी बने, उस समय मोहवश अर्जुन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को युद्ध में प्रवृत्त करने के लिए श्रीकृष्ण जी ने जो उपदेश किया वह 'गीता' नाम से विख्यात हुआ । वास्तव में 'श्रीमद्भगवद् गीता' श्रीकृष्ण रचित कोई पृथक् ग्रन्थ नहीं अपितु यह 'महाभारत' के भीष्म पर्व का एक अंग है । वर्तमान में प्रचलित 'गीता' या महाभारत में बहुत प्रक्षेप है । श्रीकृष्ण आजीवन धर्म की रक्षा में तत्पर रहे, ये अपने कर्त्तव्य के पालन से कभी च्युत नहीं हुए । श्रीकृष्ण सदा पक्षपात रहित रहे ।

श्रीकृष्ण जी ने इस आर्यावर्त को पश्चिमी छोर से लेकर पूर्वी छोर तक अर्थात् समुद्र-तटवर्ती द्वारिका से लेकर वर्मा की सीमा से लगे मणिपुर तक इस देश को एक सूत्र में आबद्ध किया था ।

नोट – महाभारत में राधा, गोपियों का अभाव है ही, १८ पुराणों में से १७ पुराण को छोड़कर सिर्फ ब्रह्म-वैवर्त पुराण में राधा का वर्णन इस प्रकार से ब्रह्म खंड में आया है कि कृष्ण ने पसली (वाम पार्श्व) से एक कन्या को उत्पन्न किया जिसका विद्वान् द्विजों ने राधा नाम रक्खा । यह सृष्टि नियम के प्रतिकूल एक ओर तो कृष्ण के वाम पार्श्व से उत्पन्न कर राधा को उनकी पुत्री बनाया और दूसरी ओर स्वयं ब्रह्मा के आचार्यत्व में उसी पुत्री के साथ पिता का विवाह भी करा डाला । जिस प्रकार से बाइबिल के खुदा ने आदम की पसली से हौवा को उत्पन्न किया था ।

आविर्बभूव कन्यैका कृष्णस्य वामपार्श्वतः ।
तेन राधा समाख्याता पुराविद्भिःद्विजोत्तमैः ।।

(ब्रह्मवैवर्त ब्रह्म खंड ५।२५, २६)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीता संदेश एक वैदिक दृष्टिकोण

गीता संसार की इतनी लोकप्रिय पुस्तक है जिसका संसार के प्रत्येक सभ्य देश व समाज में थोड़ा बहुत प्रचार है। विश्व की शायद ही कोई ऐसी सभ्य भाषा हो जिसमें गीता का अनुवाद न हुआ हो। इसमें योगिराज कृष्ण जी द्वारा सभी उपनिषद् रूपी गौओं का दुहा हुआ गीता रूपी दुग्ध ज्ञानामृत है। गीता की पुस्तक एवं विद्वानों, मनीषियों, महात्माओं सन्तों द्वारा किया गया गीता-भाष्य प्रत्येक मानव को अपने जीवन में एक बार अवश्य पढ़ना चाहिए। गीता की पुस्तक को गीता के भाष्य को शुद्ध-श्वेत निर्मल अन्त:करण से पढ़ने से मानव के अपने जीवन की जटिल से जटिल समस्याओं का समाधान इसमें मिलता है। गीता संसार की समस्त समस्याओं का निदान है। गीता का संदेश, गीता का उपदेश केवल अर्जुन के लिए ही नहीं था, यह तो प्रत्येक उस भारत-पुत्र के लिए है जो अपने आपको देश का सिपाही समझता है। एक भारत-पुत्र जब गीता को उठाकर पढ़ता है वह कहता है "हे भारत! जब भी देश और धर्म की ग्लानि होती है, पाप बढ़ जाता है, अत्याचारों का अन्याय व शोषण का सर्वत्र साम्राज्य होता है, अयोग्य व्यक्ति सत्ता पर हावी होते हैं और योग्य गुणवानों, बुद्धिमानों को अपमानित किया जाता है। गौ-ब्राह्मण का जीवन संकटमय होता है। राष्ट्र की वर्णाश्रम व्यवस्था जब बिगड़ जाती है, तब ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अपने-अपने कर्त्तव्य को भूल जाते हैं। जब कोई राष्ट्र कर्म पर आधारित इस व्यवस्था को नष्ट कर जन्म पर आधारित जाति-पांति को तथा सम्प्रदायों में विभक्त होकर मानव जाति के नैतिक मूल्यों को तिलांजलि देने लगता है, उस समय परमपिता परमात्मा जगतीतल के कल्याण के लिये किन्हीं महान् आत्मा को भेज देते हैं, सुधार कराते हैं। श्रीकृष्ण जी गीता के १८ वें अध्याय में कहते हैं कि-

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया।। गीता १८।६१

हे अर्जुन! ईश्वर सबके हृदय में विराजमान है, तू उसकी शरण में जा। वही अन्तर्यामी परमेश्वर कर्मों के अनुसार सबको भ्रमण करा रहा है। श्रीकृष्ण जी का सम्पूर्ण गीता उपदेश एक योगिराज, योग शक्ति सम्पन्न जीवात्मा के

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप में है । भगवान् श्रीकृष्ण जगद्गुरु हैं । वे न केवल द्वापर युग के हैं, वस्तुतः वे तो युग-युगान्तर के महापुरुष माने ही जायेंगे, बिना जातीय भेदभाव के समस्त संसार ने एक स्वर से जितना मान भगवान् कृष्ण को दिया है, उतना सम्मान आज तक किसी समय में किसी भी देश में किसी भी अन्य महापुरुष को प्राप्त नहीं हुआ । भगवान् श्री कृष्ण जी इस सर्वोच्च स्थान के योग्य थे । श्री कृष्ण जी के श्री मुख से निकला हुआ गीता रूपी ज्ञानामृत देशकाल भेद, जाति भेद, धर्म भेद, सम्प्रदाय भेद, वर्ण भेद, लिंग भेद, कर्म भेद आदि किसी भी प्रकार के भेदभाव बिना मनुष्यमात्र ने पान किया है तो फिर भला संसार उनके नाम की माला क्यूँ न जपता । पं० बुद्धदेव विद्यालंकार (स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती) ने गीता-भाष्य में लिखा है- शतपथ ब्राह्मण (काल) में विदेह कौशल तथा कुरुक्षेत्र का तो वर्णन है, पंजाब की बस्तियों का नहीं, साथ ही कुरुक्षेत्र को बड़ी पवित्र भावना से याद किया गया है ।

"कुरुक्षेत्रं वै देवानां देवयजनमिति शत०ब्रा० १४।१।१।२" इस कुरुक्षेत्र में एक दिन न्याय और अन्याय की सेना आमने-सामने युद्ध के लिए एकत्र हुई । विचित्र बात यह कि न्याय का योद्धा मोह के पंजे में फंसकर- **आचार्याः पितरः पुत्राः श्यालाः सम्बन्धिनः तथा** गी० १।३४।। की दुहाई देने लगा । उस समय सच्चे मार्गदर्शक ने चिल्लाकर कहा-यह जीवन धर्मक्षेत्र है और यह पवित्र भूमि भी धर्मक्षेत्र है । धर्म का अर्थ पूजा, पाठ, गाना, बजाना, भजन करना आदि नहीं है । धर्म करने की (धारणा करना) वस्तु है गाने की नहीं । यह मानव जीवन भी इस पवित्र भूमि की तरह धर्मक्षेत्र है अर्थात् कुरुक्षेत्र है भजन, गायन, नृत्य का क्षेत्र नहीं और तू यहाँ अवसाद की मुद्रा का अभिनय कर रहा है । बस गीता का आरम्भ **'धर्मक्षेत्रे-कुरुक्षेत्रे'** शब्दों से करने का यही गूढ़ भाव है । हर प्राणी का शरीर उसका धर्मक्षेत्र अर्थात् कुरुक्षेत्र है । उसमें दैव तथा आसुर संकल्प इसी प्रकार प्रतिक्षण युद्धार्थी होकर आमने-सामने खड़े रहते हैं । महाभारत का युद्ध भारत के इतिहास की सच्ची घटना है कपोल कल्पना नहीं । उस घटना का प्रयोग **महाकवि-महर्षि वेदव्यास** जी ने मनुष्य को धर्म का सच्चा स्वरूप दिखाने के लिए अपने काव्य में किया है और दैवी सम्पत्ति की सेना के संचालक का स्वरूप योगिराज कृष्ण को दिया है । **भाव कृष्ण वार्ष्णेय के, शब्द कृष्ण द्वैपायन**

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के, घटना इतिहास की ! अहो लोकोत्तरः संगमः ! मनुष्य के शरीर में श्रद्धा का वही स्थान है जो इंजन में भाप का अथवा मोटरकार में पेट्रोल का । श्रद्धा के बिना मनुष्य कुछ नहीं, परन्तु गीता अन्ध श्रद्धा का प्रचार कदापि नहीं करती । विवेक सहित श्रद्धा ही गीतोक्त भक्ति का सार है । यह बात बतलाने की कोई आवश्यकता नहीं कि समाज के पोषण के लिए कोमल भावनाओं की कितनी अनिवार्य आवश्यकता होती है । जिस प्रकार केवल सूर्य की धूप से ही कृषि का पोषण नहीं हो सकता, उसके पोषण के लिए शीतल जल की आवश्यकता के लिए वर्षा भी आवश्यक है, उसी प्रकार समाज की जीवन रक्षा भी केवल बुद्धि के तेजोमय प्रकाश से नहीं हो सकती । इसके लिए श्रद्धा और विश्वास की आवश्यकता है । यह सब गीता संदेश उपदेश से मिल सकता है ।

सर्वोऽपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधी भोक्ता ज्ञानं दुग्धामृतं महत् ।।

विष्णुसह० गीतामा० श्लोक ६।।

उपनिषदों का संदेश भी तो वही है जो गीता का संदेश है । ईशोपनिषद् में प्राचीन भारत की शानदार वैदिक अर्थव्यवस्था का वर्णन अति संक्षिप्त रूप में दिया है । भारत, रूस और अन्य राष्ट्र उसे अपनाकर अपनी लड़खड़ाती अर्थव्यवस्था को ठीक करने के लिए दिशा ग्रहण कर सकते हैं ।

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ।। (यजु० ४०।१)

यही संदेश हमें गीता देती है । जो राष्ट्र अपने नागरिकों को राष्ट्रवादी विचारधारा देना चाहता है उसे गीता को विश्वविद्यालय स्तर के पाठ्यक्रम में अनिवार्य करना होगा । जो राष्ट्र अपने देश के बच्चों को त्यागी, तपस्वी, कर्मयोगी, उद्यमी, ईश्वरभक्त, ईमानदार, सदाचारी, देशभक्त, दृढ़ संकल्पव्रती, सत्यवादी, दीक्षा से दीक्षित, साहसी, श्रद्धालु, वीर बहादुर, निडर आदि गुण सम्पन्न देखना चाहता है उसे **'गीता'** की शिक्षा को अपनी शिक्षा पद्धति में बहुत ऊँचा स्थान देना होगा । **'गीता'** कहती है-भारतवर्ष में एक ऐसा युग था जब इस राष्ट्र की अर्थव्यवस्था त्याग पर आधारित थी । ब्राह्मण वर्ण के लोग अज्ञान को दूर करते थे, क्षत्रिय वर्ण के लोग अन्याय से होने वाले दुःखों को समूल नष्ट करके न्याय की स्थापना करते थे और वैश्य वर्ण के लोग अभाव से उत्पन्न होने वाले दुःखों का खात्मा करते थे । आज त्याग

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं रहा, त्रेता युग में राम ने अपने पिता के वचन मात्र से भरत के लिए राज्य का त्याग किया था तथा भरत ने राम के लिए राज्य का त्याग करके नन्दीग्राम में राम की भाँति तपस्वी जीवन व्यतीत किया, केवल मात्र धरोहर के रूप में राज्य को स्वीकार किया और सिंहासन पर राम की चरणपादुका रखकर १४ वर्ष तक राम आगमन की प्रतीक्षा की। वह त्याग से युक्त राज्य सच्चा लोकतन्त्र था, जिसके लिए आज हम लोग तड़पते हैं। भारतमाता ने भगवान् कृष्ण के बाद जिन नर रत्नों को पैदा किया, सभी ने गीता से प्रेरणा-प्रकाश व ज्ञानामृत का पान कर कर्मयोग व राष्ट्रवादी विचारधारा को अपनाकर कायाकल्प किया। बौद्धों ने अपने ग्रन्थों में कृष्ण नाम की महिमा गाई। जगद्गुरु शंकराचार्य और महर्षि दयानन्द ने योगिराज श्रीकृष्ण का सही मूल्यांकन किया था। भगवान् कृष्ण की बांसुरी से विमोहित हुए रामचरितमानस के अमर गायक गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज भी अयोध्या से वृन्दावन की ओर भागे। संत तुकाराम ने भी कृष्ण के गीत गाये। सन्त ज्ञानेश्वर ने भी अपनी ज्ञानेश्वरी में कृष्ण की ही बांसुरी बजाई। महाभारत युद्ध के पश्चात् महाराज युधिष्ठिर से यशपाल पर्यन्त लगभग साढ़े चार हजार वर्ष तक चक्रवर्ती भारतीय सम्राटों ने श्रीकृष्ण भगवान् की भाँति गाय को भारत की अर्थव्यवस्था का मापदण्ड निर्धारित कर रखा था वे लाखों हजारों गौवों को गोशालाओं में रखते थे तथा गरीब से गरीब व्यक्ति भी ५० से १०० गाय अवश्य रखता था। गो दूध कभी बेचा नहीं गया, यहाँ दूध, दही, मक्खन, घी के भंडार भरे रहते थे। यह सब श्रीकृष्ण और गीता का ही चमत्कार था। समर्थ गुरु रामदास ने भी शिवाजी को सच्ची कृष्ण भक्ति का पाठ पढ़ाया था। मीरा ने कृष्ण के गीत गाकर अपना नाम अमर कियां। गुरु गोविंद सिंह तथा वीर बन्दावैरागी ने भी संसार को कृष्ण नीति का चमत्कार दिखाया। महाराष्ट्र केशरी छत्रपति शिवाजी ने भी अपने जीवन में कृष्ण गाथा को सार्थक किया। स्वामी दयानन्द के सैकड़ों शिष्यों स्वामी श्रद्धानन्द, पं० लेखराम, गुरुदत्त विद्यार्थी, लाला लाजपतराय, महात्मा हंसराज, स्वामी आत्मानन्द, स्वामी दर्शनानन्द आदि ने भी श्रीकृष्ण के चरणों में अपनी श्रद्धा के फूल भेंट किए। गौरांग, चैतन्य, रामकृष्ण परमहंस ने भी कृष्ण को ही अपना आराध्यदेव बनाया। विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ ने भी कृष्ण बांसुरी की तान पर ही पाताल (अमेरिका) देश को अध्यात्म रूपी अमृत रस पिलाया। गीता का आश्रय पाकर ही रवि बाबू ने विश्व कवि की उपाधि प्राप्त की। मांडले जेल के तपस्वी बाल गंगाधर-तिलक ने अपने जीवन में गीता को क्रियात्मक रूप देकर अमूल्य गीता भाष्य क्या किया,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानो कृष्ण मंदिर में बैठकर गीता और कृष्ण के रहस्यों की ऐसी खोज की, कि जिस खोज में वे अपनी लेखनी को उस अवस्था में भी दो क्षण के लिए विराम न दे सके, जबकि उन्हें जेलर ने तार दिया जिसमें लिखा था, तुम्हारी जीवन संगिनी सुभद्रा अब संसार में नहीं (मृत्यु) रही, वह महान् कर्मयोगी लोकमान्य तिलक अपनी उजड़ रही दुनियाँ की चिन्ता किए बगैर अपनी आँखों से अपनी धर्मपत्नी के लिए श्रद्धा स्वरूप दो आँसू बहाए बिना पुनः सम्पूर्ण मानव जाति की दुनियाँ बसाने के लिए पूर्ववत् **'गीता भाष्य'** में लगा रहा । अन्त में जेलर को कुछ कठोर शब्द कहना ही पड़ा-महात्मा जी ! आपका दिल इतना कठोर है ? दिल दहलाने वाली, पति को रुलाने वाली इससे बड़ी क्या खबर हो सकती है? धर्मपत्नी की मृत्यु का समाचार सुनकर भी आँखों में कोई आँसू नहीं ? गीता का भक्त कहता है-अरे जेलर ! तू शायद ठीक कहता है क्योंकि तुझे क्या पता मैं इस राष्ट्र की दासता की मुक्ति के लिए गीता को एक बार नहीं, हजारों बार पढ़कर, मनन कर अपनी भारत माता के लिए इतना अधिक रोया हूँ कि आज मेरी अपनी धर्मपत्नी सुभद्रा के लिए रोने हेतु मेरी आँखों में आँसू ही नहीं बचे, यह है गीता का चमत्कार, यह है गीता का अमर संदेश ।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन

गी० २।४७।।

महात्मा गाँधी ने भी यरवदा के तपोवन में अनासक्ति योग की रचना की । साधु वास्वानी, लाजपतराय, भाई परमानन्द राजा राममोहनराय जैसे तपस्वी भी कृष्ण की बांसुरी के साथ रात दिन साधना में लीन रहे । हिन्दू राष्ट्र के प्रबल प्रवक्ता अंग्रेजों से संघर्ष कर कालापानी की सजा पाने वाले राष्ट्रवादी देशभक्त भारत माता के वीर सपूत वीर सावरकर का किस्सा गीता-संदेश व गीता उपदेश का सार है । राष्ट्र के सैकड़ों हजारों देश भक्तों का स्वतन्त्रता संग्राम गीता के शब्दों में राष्ट्रीय यज्ञ है । गीता का उपदेश एकदेशीय नहीं । गीता ने तो सम्पूर्ण संसार को प्रभावित किया है । पठान अब्दुल गफ्फार खाँ तथा मौलाना आजाद ने गीता में ही सच्ची शान्ति प्राप्त की थी । मि० स्टोक्स, दीनबन्धु एन्ड्रयूज, डा० एनीबेसेन्ट भारत में ईसाईयत का प्रचार करने आये थे, परन्तु यहाँ आकर वे भी गद्गद होकर गीता रूपी अमृतपान कर कृष्ण के गीत गाने लगे, औरों का तो कहना ही क्या ! कृष्ण धारा ने ख्वाजा सहन निजामी तथा जफरअली खाँ सरीखे कट्टर हिन्दुत्व विरोधियों की कलुषित आत्माओं को भी कुछ क्षणों के लिए पवित्र कर ही दिया था । सर्वोदय नेता भूदान यज्ञ के संस्थापक विनोबा भावे ने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीता के बलबूते पर १७ वर्ष तक अपने कैंसर जैसे भयानक रोग को काबू किया था। गीता रहस्य को पढ़कर लाल बहादुर शास्त्री ने थोड़े से समय में नेहरू के कार्यों की तुलना में देश को एक नया नारा **"जय जवान, जय किसान"** उद्घोष कर राष्ट्र का मनोबल ऊँचा किया और राष्ट्र के अस्तित्व के लिए स्वयं कुर्बान हो गये। क्या यह गीता का अद्भुत प्रभाव नहीं था जो ऐसा चमत्कार हुआ। द्वैतवादियों ने इसमें अपने ही पक्ष को सिद्ध किया, अद्वैतवादियों ने इसे अपना ही रूप समझा। पंडित बुद्धदेव विद्यालंकार ने गीता भाष्य करके लिखा **गीता आर्यसमाजी** हो गई। पौराणिकों ने गीता-भाष्य लिखा और कहा कि गीता **सनातन धर्मी** है। समर-क्षेत्र में प्रस्थान करने वाले राष्ट्रीय योद्धाओं ने भी इसी की विजय दुन्दुभि बजाई और समर क्षेत्र से कायरों के समान भाग जाने वालों ने भी गीता की पोथी हाथ में लेकर ही अपना कार्य किया। न्यायालय में वादी-प्रतिवादी को भी गीता की शपथ द्वारा सत्य बोलने की प्रेरणा दी जाती है। आजादी मिलने के कुछ ही वर्ष पहले की बात है भारतमाता के कुछ सपूतों के विरुद्ध राज्य-द्रोह का मुकदमा चलाया गया। जज महोदय ने उन सबको फांसी का हुक्म सुनाया। फाँसी का नाम सुनते ही वे नवयुवक मुस्करा उठे। संसार दंग रह गया, जिस मृत्यु का नाम सुनकर मनुष्य का दिल दहल जाता है, उसी मृत्यु की ओर बढ़े जा रहे यह भारत के अमर सपूत हँस रहे थे, सभी ने देखा उनके हाथ में छोटी सी पुस्तक थी, जिसके मुख पृष्ठ पर मोटे शब्दों में लिखा यह अमर वाक्य अंकित था।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः॥

गी० २।२३॥

उसी पुस्तक को अपने हृदय से लगाकर भारतमाता के निम्न सपूत भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव, रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्ला खाँ ने सावन के झूले के समान फांसी के तख्ते पे झूल मौत का आलिङ्गन किया था। अस्तु ! श्री कृष्ण का गीता संदेश वेद के यथार्थ को समझने का एक सरल, सुबोध व सुगम तरीका है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीता के कुछ चुने हुए संदेश-

१. अपने जड़ शरीर को भूल जाना तथा परमात्मचिन्तन में अपने आप को लगा देना ही आत्म-विस्मृति है ।
२. जीवात्मा, नित्य, अमर, अजन्मा और चेतन तत्त्व है ।
३. जीवात्मायें अनेक हैं और एक ही परिवार से सम्बन्ध रखती हैं ।
४. सब के सुख-दु:ख में अपना सुख-दु:ख समझना चाहिए ।
५. जीवात्मा का उद्देश्य संसार में रहकर परमात्मा के आनन्द का अनुभव करना । ज्ञान को प्राप्त करके वास्तविकता को समझना तथा कर्त्तव्य बुद्धि से यज्ञादि शुभ कर्म करते ही रहना है ।
६. मानव, पशु, पक्षी आदि सभी प्राणियों में जीवात्मायें एक जैसी हैं । कर्मानुसार शरीर ही भिन्न-भिन्न हैं ।
७. परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ नाम ओ३म् है । वह परमात्मा विराट् है । उसी में सम्पूर्ण जगत् समाया हुआ है और वह सम्पूर्ण जगत् में व्यापक है ।
८. परमात्मा नित्य, व्यापक, अजन्मा, सृष्टि संहर्ता तथा कर्मों का फल देने वाला है ।
९. परमात्मा इस सृष्टि रूपी क्षेत्र (खेत) को जानने वाला है तथा इस शरीर को भी जानता है । वह सर्वज्ञ है और सर्वशक्तिमान् है ।
१०. ज्ञान जीवात्मा का भोजन है अतः सच्चे गुरु के सत्संग से तथा स्वाध्याय से ज्ञान प्राप्त करते ही रहना चाहिए ।
११. परमात्मा आनन्द स्वरूप है । यदि जीवात्मा उस आनन्द का अनुभव करना चाहता है तो उसे परमात्मा का ध्यान और उसकी उपासना करनी ही चाहिए ।
१२. जीवात्मा को प्रत्येक शुभ कर्म कर्त्तव्य समझकर ही करना चाहिए । फल पर दृष्टि रखकर कर्म करना सकाम कर्म कहलाता है और कर्त्तव्य समझकर करना निष्काम कर्म कहलाता है ।
१३. अपने जीवन में दैवी सम्पत्ति अर्थात् महान् और शुभ गुणों को ही धारण करो, आसुरी सम्पत्ति अर्थात् पतित और अशुभ गुणों को मत धारण करो ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४. संसार के प्रत्येक वस्तु का ईश्वर ही मालिक है यह मानकर ही वस्तुओं का प्रयोग करो ।

१५. प्रकृति तीन गुण वाली है अर्थात् सत्व, रजः और तमः ये तीन प्रकृति के गुण हैं ।

१६. इनमें सत्व गुण श्रेष्ठ है हमेशा सात्त्विक कर्म ही करने चाहिए । रजोगुणी तथा तमोगुणी कर्म नहीं करने चाहिए ।

१७. प्रत्येक कर्म के लिए स्थिर बुद्धि आवश्यक है । स्थिर बुद्धि बनाने के लिए सात्त्विक खान-पान अत्यन्त आवश्यक है ।

१८. अपना उद्धार करने का दृढ़ संकल्प करना चाहिए कभी भी पतन की तरफ नहीं जाना चाहिए ।

१९. चंचल मन को रोकने के लिए अभ्यास और वैराग्य को धारण करना चाहिए ।

२०. याद रखो अच्छे कर्म करने वाला कभी दुर्गति को अर्थात् पतित योनि को नहीं प्राप्त करता ।

२१. याद रखिए देह विनाशी है आत्मा अविनाशी है । सृष्टि की वस्तुएें विनाशी हैं परमात्मा अविनाशी है ।

२२. आत्मा कभी नहीं मरता, देह के जड़ तत्त्व भी कभी समाप्त नहीं होते वे अपने कारणों में विद्यमान रहते हैं । जन्म के बाद मृत्यु और मृत्यु के बाद पुनः जन्म मिल जाता है । बचपन, कुमार, यौवन और वृद्ध ये अवस्थाऐं बदलती रहती हैं । एक के बाद दूसरी अवस्था का क्रम चलता ही रहता है । पुराना शरीर छूटने पर नया शरीर फिर मिल जाता है । इन बातों पर विचार करके शोक नहीं करना चाहिए ।

२३. अज्ञान या मोह जीवन का सबसे बड़ा शत्रु है ।

२४. काम (बेलगाम भौतिक इच्छायें) लोभ और क्रोध ये नरक अर्थात् दुःख के दरवाजे हैं ।

२५. आहार, यज्ञ, तप, दान, सात्त्विक भाव से ही करने चाहिए ।

२६. ज्ञान, कर्म, कर्त्ता, बुद्धि, धैर्य और सुख भी सात्त्विक ही श्रेष्ठ है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२७. सत्य को धारण करना ही श्रद्धा है और श्रद्धा को कभी मत त्यागो ।

२८. कर्मों का त्याग न करके फल का त्याग ही सच्चा त्याग है ।

२९. ज्ञान और कर्म का जीवन में मेल करो तभी आपकी इच्छा पूर्ण होगी ।

३०. कर्म की कुशलता योग है, समता का भाव रखना योग है, अपनी आत्मा के समान ही दूसरे प्राणियों के सुख-दुःख का अनुभव करना योग है, अपनी आत्मा का परमात्मा से मिलन का अनुभव करना योग है । अतः योगी बनने का प्रयत्न करो ।

३१. जीवन वही पूर्ण है जिसमें ब्रह्मशक्ति और क्षत्रशक्ति दोनों हों ।

❖❖❖

यह ध्यान रहे कि सम्पूर्ण गीता यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के दूसरे मन्त्र-

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳ समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ।।

अर्थात् मनुष्य कर्म करते हुए सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करे किन्तु उस कर्म में आसक्त न हो, निष्काम निःसंग होकर पुरुषार्थ करता रहे ।

इसी एक मन्त्र के आधार पर कर्मयोगी श्रीकृष्ण ने सम्पूर्ण गीता का उपदेश किया है ।

।। सम्पा० ।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो ऐतिहासिक महापुरुष श्रीराम और श्रीकृष्ण

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम जी ने उत्तर से दक्षिण अर्थात् नेपाल के सीमावर्ती प्रदेश जनकपुर से दक्षिण में हिन्द महासागर के अन्तर्गत लंका के टापू तक इस देश को एक दृढ़ सूत्र में आबद्ध किया था। जब यह आर्यावर्त चारों ओर राक्षस साम्राज्य से घिरा हुआ था तब राम ने ऋषियों के मार्ग दर्शन में राक्षसों के साम्राज्य को छिन्न-भिन्न करके आर्य राज्य का विस्तार किया और उत्तर से दक्षिण तक आर्यों की सत्ता को कण्टक-विहीन बनाया था। उस समय पूर्व में, ताड़का और सुबाहू, उत्तर पश्चिम में वाणासुर और दक्षिण में स्वयं लंकाधिपति रावण आर्य राज्य को हड़पने हेतु तैयार थे। रावण की सेनायें दण्डकारण्य तक और जन-स्थान तक पहुँच चुकी थीं। आर्य राज्य पर आये इस भीषण संकट के निवारण में दशरथ जी अपने को असमर्थ पा रहे थे, तब ऋषियों ने उस संकट के निवारण की योजना बनाकर राम को आगे कर वैदिक धर्म का नाद बजाया था। श्रीराम ने शुरू से अंत तक ऋषियों के मार्गदर्शन में कार्य को पूर्ण किया था। इसमें प्रमुख ऋषि **वसिष्ठ, विश्वामित्र, भारद्वाज, अगस्त** थे। रावण आर्य राज्य को समाप्त कर इस आर्यावर्त पर राक्षस राज्य स्थापित करना चाहता था। राम का आर्यों के राज्य विस्तार हेतु सफल प्रयास था जिसमें सफलता हेतु राम ने अयोध्या की सेना न लेकर बल्कि आन्ध्र, कर्नाटक और द्रविड़ देश के वनवासियों से सम्पर्क स्थापित कर उन्हीं के सहयोग से पूर्ण किया था। यह कार्य बिना वनवास ग्रहण किए इन वनवासियों से सम्पर्क किए बगैर सम्भव नहीं था। यह श्रीराम के जीवन का सबसे महान् कार्य राष्ट्र के प्रति था। उस समय के वे वनवासी **हनुमान्, सुग्रीव, जांमवन्त** आदि प्रमुख थे, उनके पूँछ नहीं थी, वे मानव थे, पूर्ण वेद वेदांग के महान् पंडित और योद्धा थे। ये लोग वनों में रहते हुए वानर थे बन्दर नहीं। राम ने इन वानरों को मिलाया और इन्हीं के सहयोग से इतना महान् राष्ट्रीय कार्य पूर्ण किया था।

श्री कृष्ण जी ने इस आर्यावर्त्त को पश्चिमी छोर से लेकर पूर्वी छोर तक अर्थात् समुद्र-तटवर्ती द्वारिका से लेकर वर्मा की सीमा से लगे मणिपुर तक इस देश को एक सूत्र में आबद्ध किया था।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन है पशु, गाय या उसके हत्यारे ?

मैं भारत में हो रही निर्मम गौ हत्याओं की तरफ ध्यान दिलाना चाहता हूँ, जिससे अत्यन्त उपयोगी पशुधन का संवर्द्धन हो सके तथा मानवता भी कलंकित होने से बच सके। भारतवर्ष में ३६०० से अधिक सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त बूचड़खाने हैं जिनमें दस बहुत बड़े मशीनयुक्त कारखाने हैं। यहाँ प्रतिदिन २५००० पशुधन कटते हैं। इनमें **'अलकबीर'** हैदराबाद प्राइवेट सेक्टर तथा **'देवना'** कत्लखाना मुम्बई सार्वजनिक क्षेत्र के महत्त्वपूर्ण कत्लखाने हैं। **अलकबीर कत्लखाना** जिला मेदक हैदराबाद में है। इसे **दुबई के इमाम मुहम्मद शेख** ने भारत सरकार की ४०० करोड़ की सहायता से स्थापित किया है, यह ३०० एकड़ भूमि में फैला हुआ है। इसमें प्रतिदिन ६००० के लगभग गोवंश को निर्ममतापूर्वक काटा जाता है। चार दिन तक पशुओं को बिना चारा, पानी दिए भूखा रक्खा जाता है। वह अशक्त होकर गिर पड़ता है, गिरने पर घसीटकर मशीनों के पास लाया जाता है तथा पीट-पीट कर खड़ा किया जाता है। मशीन की एक पुली पशुओं के पिछले पैरों को जकड़ लेती है, तत्पश्चात् १००° डिग्री सेंटीग्रेट का गर्म पानी ५ मिनट तक आटोमेटिक फव्वारों से गिराया जाता है, इसें हाट वाटर ट्रीटमेन्ट कहते हैं। इसका उद्देश्य यह है कि खून का हीमोग्लोबिन पिघल जाता है, पिघलकर मांस में मिल जाता है जिससे मांस अधिक लाल हो जाए। लाल मांस का मूल्य अमेरिका के सफेद मांस की कीमत से अधिक है। दुबई में अमेरिकन मांस १५ दियाल अर्थात् १२० रुपये प्रति किलो है। भारतीय ३२ दियाल अर्थात् २४० रुपये प्रति किलो है। फिर मशीन की पुली पिछले पैरों को ऊपर उठाती है। गाय एक पैर पर लटका दी जाती है, फिर पशु की आधी गर्दन काट दी जाती है ताकि खून बाहर आ जाय और पशु मरे नहीं। खून की धारा बहने लगती है तुरंत पशु के पेट में एक छेदकर हवा भर दी जाती है जिससे पशु फूल जाता है फिर तुरंत चमड़ा उतारने का काम होता है। पशु अभी मरा नहीं है, मरने पर पशु का चमड़ा मोटा हो जाता है तब उसकी कीमत कम हो जाती है। जीवित पशु का चमड़ा पतला महीन होता है उस चमड़े की कीमत अधिक होती है उस चमड़े से कोमल और कीमती जूते बनाये जाते हैं, जिन्हें धनवान् लोग पहनकर प्रसन्न होते हैं। काश उन्हें यह पता नहीं उनका जूता गाय के चमड़े का है जिसे कितनी पीड़ा देकर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उतारा जाता है । बछड़ा या बछिया का चमड़ा अधिक कोमल मुलायम होता है जिसे काफ लेदर कहा जाता है । काफ लेदर के जूते बैग आदि फैशन परस्तों के पैर और हाथ की शोभा बढ़ाते हैं । इनका उपयोग करने वालों को समझना चाहिए कि परमात्मा द्वारा बनाये जीवों को सताकर प्राप्त किया गया चमड़ा आपको सुख-शान्ति कैसे दे सकता है ? चमड़ा उतारने के पश्चात् पशु के चार टुकड़े कर दिए जाते हैं । **गर्दन, पैर, धड़, हड्डियाँ** । तत्काल मांस के डिब्बे भरकर कत्लखाने से आने शुरू हो जाते हैं, जिसे शीतलीकृत ट्रकों या ट्रेनों से भेजा जाता है । दस हजार लीटर खून प्रतिदिन एकत्र होता है। जिससे प्लाज्मा, प्रोटीन्स, हीमोग्लोबिन टानिक बनते हैं । मुख्यतया गर्भवती महिलाओं के लिए बनने वाला 'डेक्सोरेंज टानिक़' बहुत प्रसिद्ध है । रक्त ही नहीं, कटे हुए पशुओं के लगभग प्रत्येक अंग का प्रयोग टूथपेस्ट, सरेस, फेवीकोल, चीनी मिट्टी के बर्तन, सनमाइका, इंसुलिन इंजेक्शन आदि बनाने में होता है । क़िन्तु इन हत्यारों को यह पता नहीं कि गौ महाधन है । यजुर्वेद में लिखा है कि गाय के दूध से ऐश्वर्य प्राप्त होता है । गाय का दूध, घी तो पौष्टिक है ही गाय के गोबर को जलाने से प्लेग जैसी घातक बीमारी दूर होती है । गाय के घी से यज्ञ करने से तथा दीपक जलाने से पर्यावरण शुद्ध होता है । हमारी आर्थिक उन्नति का आधार गोवंश है उसे काट-मार कर हम क्या स्वयं पशु = मूर्ख नहीं बन गये ?

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
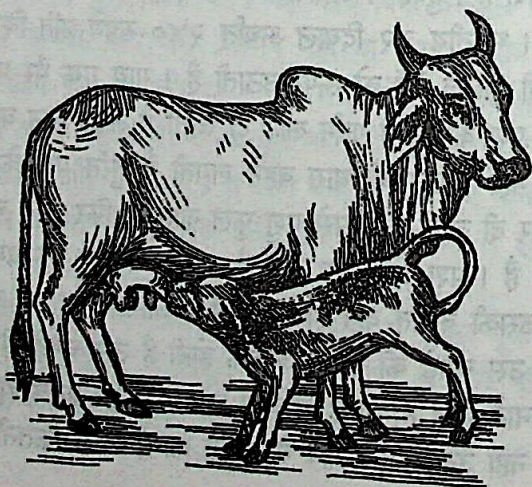
आर्ष-शिक्षा प्रणाली

वेद चार हैं-ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद ।

परमात्मा का मुख्य नाम 'ओ३म्' है । सृष्टि के आदि में चार प्रमुख ऋषियों के हृदय में परमात्मा ने वेदों का ज्ञान दिया । ये चारों महर्षि वेदों के ज्ञान के रचयिता नहीं परन्तु प्रकट करने वाले वक्ता मात्र थे । ये चारों महर्षि शरीरधारी पुरुष थे ।

१. ऋग्वेद – ऋग्वेद ज्ञान काण्ड है, इसमें १० मंडल हैं और इन मंडलों में १०२८ सूक्त हैं १०५८९ मन्त्र हैं । इन मंत्रों में कुल २५३८२६ पद और ४३२००० अक्षर हैं । इसका अथर्ववेद उपवेद है ।

२. यजुर्वेद – यजुर्वेद में ४० अध्याय जिनमें १९७५ मंत्र हैं । यह कर्मकाण्ड है । इसका उपवेद धनुर्वेद है ।

३. सामवेद – सामवेद उपासना काण्ड है, इसमें मंत्रों की संख्या १८७३ तथा इसमें बाइस अध्याय हैं इसका उपवेद गांधर्ववेद है ।

४. अथर्ववेद – अथर्ववेद में २० काण्ड हैं जिनमें ७३१ सूक्त हैं और ५९७७ मंत्र हैं । अथर्ववेद विज्ञान काण्ड है इसका उपवेद आयुर्वेद है ।

वेदों की व्याख्या – ब्राह्मण-ग्रन्थों में की गई है । ब्राह्मण-ग्रन्थ गणना में तो अधिक हैं परन्तु चार ही प्रसिद्ध हैं । ऋग्वेद का ऐतरेय ब्राह्मण, यजुर्वेद का शतपथ ब्राह्मण, सामवेद का साम ब्राह्मण, छान्दोग्य ब्राह्मण और अथर्ववेद का गोपथ-ब्राह्मण । प्राचीन वैदिक साहित्य में इन्हीं को पुराण कहा गया है । वेदों की शाखा ११३१ हैं जो इस प्रकार हैं-

ऋग्वेद की शाखा २१

यजुर्वेद की शाखा १०१

सामवेद की शाखा १०००

अथर्ववेद की शाखा ९ (महर्षि पातञ्जल महाभाष्य)

वेदों के अंग छः हैं – शिक्षा[१], कल्प[६], व्याकरण[२], निरुक्त[३], छन्द[४], ज्योतिष[५] ।

वेदों के उपांग – वेदों के छः उपांग हैं, जिनको छः दर्शन अथवा छः शास्त्र भी कहते हैं- (१) कपिल का सांख्य, (२) गौतम का न्याय, (३) पतञ्जलि

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का योग, (४) कणाद का वैशेषिक, (५) व्यास का वेदान्त, (६) जैमिनि का मीमांसा दर्शन ।

उपनिषद्– जिनसे हमें ब्रह्मविद्या प्राप्त होती है उन्हें उपनिषद् कहते हैं जो प्रामाणिक ग्यारह उपनिषद् हैं-

ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक और श्वेताश्वतर ।

ऋषि मुनि जो प्रामाणिक ग्रन्थ मानते हैं उनमें चारों वेद, अङ्ग, उपांग, उपवेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद् आदि हैं जो वेदानुकूल प्रामाणिक हैं । चारों वेदों की संहितायें ही ईश्वर प्रदत्त हैं, अतः स्वतः प्रमाण हैं ।

योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम् ।
स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ।।

मनु० २।१६८।।

जो द्विज वेद को न पढ़कर अन्यत्र परिश्रम करता है, वह बन्धुओं सहित जीता हुआ ही शूद्रता को प्राप्त हो जाता है ।

।। सम्पा० ।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैदिक सामान्य ज्ञान

१. **यम – अहिंसा** – किसी को दुःख न देना । **सत्य** – सदा सच्चाई के मार्ग को अपनाना । **अस्तेय** – जो अपना नहीं, जो अपने परिश्रम से कमाया नहीं, उसे दूसरों से नहीं लेना । **ब्रह्मचर्य** – अपनी इन्द्रियों को वश में रखना । संसार की अपेक्षा भगवान् की ओर जाने का यत्न करना । **अपरिग्रह** – वैराग्य की भावना से त्याग करना । आवश्यकता से अधिक जमा न करना ।

२. **नियम – शौच** – बाहर और भीतर से अपने-आपको स्वच्छ रखना । **सन्तोष** – हर समय, हर दशा में जो कुछ भी है, उसे स्वीकार करके सन्तोष करना । **तप** – हर दशा को सहन करना, अपने व्रत को तोड़ना नहीं । **स्वाध्याय** – अच्छे ग्रन्थों को पढ़ना, अच्छे लोगों का सत्संग करना, अपने आपको पढ़ना-आत्मनिरीक्षण करना । **ईश्वरप्रणिधान** – अपने सभी कर्मों को ईश्वरार्पण कर देना ।

३. **आसन** – पर्याप्त समय तक सुखपूर्वक एक ही आसन पर बैठे रहना, लेटे रहना, खड़े रहना आसन कहलाता है ।

४. **प्राणायाम** – श्वास की गति को अपने वश में रखते हुए अपनी इच्छानुसार चलाना प्राणायाम है ।

५. **प्रत्याहार** – आँख, नाक, कान, जिह्वा आदि इन्द्रियों को पशुत्व के मार्ग से हटाकर अध्यात्म के मार्ग पर चलाना 'प्रत्याहार' है ।

६. **धारणा** – जब जीवात्मा, परमात्मा में मग्न हो जाता है तो वह 'धारणा' की अवस्था कहलाती है ।

७. **ध्यान** – यह निश्चय करना कि मैं अपने चित्त को अमुक वस्तु, स्थिति या सत्ता के ध्यान में लगाऊँगा 'ध्यान' है ।

८. **समाधि** – इस वस्तु, स्थिति या सत्ता के अलावा शेष सभी प्रकार के अनुभवों का समाप्त हो जाना 'समाधि' है ।

इन आठ अंगों वाले योग मार्ग पर चलने वाले को योगी, साधक कहा जाता है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः ।
न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये बको यथा ।।

(चाणक्य १।११।)

अर्थ– वे माता और पिता अपने संतानों के पूर्ण बैरी हैं, जिन्होंने उनको विद्या की प्राप्ति न कराई । वे बालक विद्वानों की सभा में वैसे ही तिरस्कृत होते हैं जैसे हंसों के बीच में बगुला ।

तम आसीत्तमसा गूढमग्रे ऋक्०१०।१२९।३।।

यह सब जगत् सृष्टि के पहले प्रलय में अंधकार से आच्छादित था और प्रलय के बाद भी वैसा ही रहेगा प्रलय के समय सिर्फ परमात्मा और मुक्त जीवों को छोड़कर और कोई नहीं होता है ।

परमात्मा जब सृष्टि का निर्माण करता है तो आकाश के पश्चात् वायु और वायु के पश्चात् अग्नि, अग्नि के पश्चात् जल, जल के पश्चात् पृथ्वी, पृथ्वी के पश्चात् ओषधि, ओषधियों से अन्न, अन्न से वीर्य, वीर्य से शरीर (नर, नारी) उत्पन्न होते हैं ।

आकाश की उत्पत्ति नहीं

आकाश की उत्पत्ति नहीं होती है क्योंकि बिना आकाश के प्रकृति और परमाणु कहाँ ठहर सकेंगे ।

तुलसी के विभिन्न नाम

(१) रामा तुलसी, (२) श्यामा तुलसी, (३) दद्रिह तुलसी, (४) बाबी तुलसी, (५) तुकाशमीय तुलसी ।

कलियुग के रहने का स्थान

(१) जुआ घर, (२) मदिरालय, (३) वेश्यालय, (४) चिंता, (५) स्वर्ण ।

विशिष्ट बातें

पृथ्वी से भारी– माता की गोद
आकाश से ऊँचा– पिता का साया
पवन से तीव्र गति– मन की गति
काजल से काला– कलंक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसार में दुःखी कौन है – ऋणग्रस्त

संसार में सुखी कौन – आत्मा में संतोष रखने वाला - सन्तुष्ट

राष्ट्र की रक्षा – भ्रष्टाचार से मुक्ति ।

ज्ञान की बातें-जो हुआ अच्छा हुआ । जो हो रहा है अच्छा हो रहा है। जो होगा वह भी अच्छा होगा । तुम्हारा क्या गया जो तुम रोते हो ? तुम क्या लाये थे जो तुमने खो दिया । जो आज तुम्हारा है कल किसी और का था, परसों किसी और का होगा । परिवर्तन संसार का अटल नियम है । क्यों व्यर्थ की चिंता करते हो, न ही शरीर तुम्हारा है न ही तुम शरीर के हो । आत्मा तुम्हारा है । आत्मा अक्षर है । तेरा मेरा, छोटा बड़ा, अपना पराया मन से मिटा दो, फिर सब तुम्हारा है, तुम सबके हो । मैं था, मैं हूँ, मैं रहूँगा किन्तु जिसमें था, न तो वह रहेगा और जिसमें हूँ, न तो यह रहेगा । अर्थात् मैं नित्य, चेतन, अविनाशी हूँ और यह शरीर अनित्य, नाशवान्, जड़ है ।

धर्म के दस लक्षण

महाराज मनु ने मनुस्मृति में धर्म के दस लक्षण बताये हैं जो निम्न हैं-

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ।।

मनु० ६।९२।।

१. **धृतिः** – हमें सर्वदा मन में धैर्य रखना चाहिए, हमारे ऊपर कठिन विपदा आवे तो भी धैर्य रखना चाहिए । **'धैर्यं न त्याज्यं विधुरेऽपि काले'** पञ्च०मित्र० २१६।

२. **क्षमा** – निन्दा, स्तुति, हानि, लाभ का बिना विचार किए दूसरे के साथ उदार भाव रखना ।

३. **दम** – अपने मन को विषयों से हटाकर वश में रखना ।

४. **अस्तेय** – चोरी न करना ।

५. **शौच** – तन, मन, वाणी को पवित्र रखना ।

६. **इन्द्रिय निग्रह** – इन्द्रियों को अधर्म से हटाकर धर्म में लगाना ।

७. **धीः** – बुद्धि से यथायोग्य कार्य करना ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. विद्या—पृथ्वी से लेकर परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों का यथार्थ ज्ञान और उनसे यथायोग्य उपकार लेना विद्या कहाती है और इसके विपरीत अविद्या कहाती है ।

९: सत्य—सत्य बोलना और उसके अनुकूल आचरण करना ।

१०. अक्रोध—क्रोध को छोड़कर शान्त गुणों को धारण करना ।

धर्म

जो पक्षपात रहित न्याय, सत्य को ग्रहण करे और असत्य का सर्वथा परित्याग कर उसी अनुसार अपना आचरण बनावें उसी को धर्म कहते हैं ।

अधर्म

जो पक्षपात सहित न्याय, असत्य को ग्रहण करे और सत्य का सर्वथा परित्याग कर उसी अनुसार अपना आचरण बनावें उसी को अधर्म कहते हैं ।

३ बार ओ३म् शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः कहने का तात्पर्य—
इस संसार में तीन प्रकार के दुःख हैं—

१. आध्यात्मिक—जो शरीर आत्मा को अविद्या, राग, द्वेष, मूर्खता, ज्वर आदि पीड़ित करते हैं ।

२. आधिभौतिक—जो शत्रु, व्याघ्र, सर्पादि से प्राप्त होता है ।

३. आधिदैविक—जो अतिवृष्टि, अतिशीत, अतिउष्णता तथा मन, इन्द्रियों की अशान्ति से होता है ।

वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः ।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षात् धर्मस्य लक्षणम् ।।

(मनु० २।१२)

धर्माधर्म के ज्ञान का पहला प्रमाण वेद है, इसके पश्चात् वेदानुकूल स्मृति का स्थान है; अथ च उत्तम आचरण और जिसे हम अपने लिये अच्छा समझते हैं वही व्यवहार अन्यों के साथ करना ये ४ धर्म के प्रत्यक्ष लक्षण कहे गये हैं ।। सम्पा० ।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तैंतीस देवताओं का वर्णन

आठ वसु– पृथ्वी, अग्नि, वायु, अन्तरिक्ष, सूर्य, द्यौः चन्द्रमा और नक्षत्र सब सृष्टि के निवास स्थान ।

ग्यारह रुद्र– प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनञ्जय और जीवात्मा ।

बारह आदित्य– बारह महीने, बारह आदित्य इसलिए हैं कि ये सबकी आयु देते लेते रहते हैं ।

इन्द्र– बिजली नाम इन्द्र से है जो परम ऐश्वर्य युक्त है ।

प्रजापति– यज्ञ को प्रजापति भी कहते हैं । इससे जलवायु, ओषधि की शुद्धि, विद्वानों का सत्कार और नाना प्रकार की शिल्प विद्या से प्रजा का पालन होता है ।

ये सब मिलकर तैंतीस देवता हुए इनका स्वामी **'परमात्मा'** है जो **चौंतीसवाँ उपास्यदेव है ।**

मुक्ति में जीवों के रहने का समय-

ते ब्रह्मलोकेषु परान्तकाले परामृताः परिमुच्यन्ति सर्वे ।।

(मुण्ड० ३।२।६।।)

मुक्त जीव ब्रह्म में आनन्द को तब तक भोगता है जब तक पुनः महाकल्प के पश्चात् मुक्त सुख को छोड़कर पुनः संसार में नहीं आता है । इसकी संख्या यह है कि तैंतालीस लाख, बीस सहस्र वर्षों की एक चतुर्युगी, दो सहस्र चतुर्युगियों का एक अहोरात्र, ऐसे तीस अहोरात्रों का एक महीना, ऐसे बारह महीनों का एक वर्ष, ऐसे शत वर्षों का परान्तकाल होता है । इतना समय जीव मुक्ति सुख भोगता है । मुक्ति, जन्म-मरण के समान नहीं क्योंकि जब तक छत्तीस हजार बार उत्पत्ति और प्रलय का जितना समय होता है, उतने समय पर्यन्त जीव मुक्ति के आनन्द में रहता है । इसके पश्चात् जीव मोक्ष से लौटता है और उत्तम ऋषियों का शरीर धारण करता है इस शरीर में यदि अच्छे कार्य करता है तो फिर मोक्ष हो जाता है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुराणों और उपपुराणों की संख्या

सात्विक महापुराण	राजसिक पुराण	तामसिक पुराण
१. विष्णु पुराण	७. ब्रह्म पुराण	१३. शिव पुराण
२. भागवत पुराण	८. ब्रह्माण्ड पुराण	१४. लिंग पुराण
३. नारदीय पुराण	९. ब्रह्मवैवर्त पुराण	१५. स्कन्द पुराण
४. गरुड़ पुराण	१०. मार्कण्डेय पुराण	१६. अग्नि पुराण
५. पद्म पुराण	११. भविष्य पुराण	१७. मत्स्य पुराण
६. वराह पुराण	१२. वामन पुराण	१८. कूर्म पुराण

'उप पुराण की गणना'

१. सन्त कुमार पुराण	७. नन्दिकेश्वर पुराण	१३. महेश्वर पुराण
२. नृसिंह पुराण	८. उश्ना पुराण	१४. कल्कि पुराण
३. वायु-पुराण	९. कपिल पुराण	१५. देवी पुराण
४. शिव धर्म पुराण	१०. वरुण पुराण	१६. पराशर पुराण
५. आश्चर्य पुराण	११. साम्ब पुराण	१७. मरीची पुराण
६. नारद पुराण	१२. कलिका पुराण	१८. सौर पुराण

जयदेव – दोनों सगे भाई – गोपदेव

जयदेव	गोपदेव
इन्होंने 'गीतगोविन्द' लिखा। इसमें रासलीला, कृष्ण-राधा, गोपियों का संग, मदनोत्सव कामवासना की पूर्ति आदि प्रसंग लिखा गया।	इन्होंने भागवत, विष्णु, ब्रह्मवैवर्त आदि पुराणों को लिखा जिन्हें महर्षि व्यास जी के नाम से प्रचारित किया गया।

(रामानुज सम्प्रदाय में कथित)

भक्ति मार्ग में दस बाधा

१. सत् निन्दा – सत्पुरुषों एवं हितैषी जनों की निन्दा करना।

२. असति नाम वैभव कथा – दुष्ट जनों के वैभव की प्रशंसा करना।

३. श्रीः शेषयोर्भेदधीः – परमेश्वर के अलग-अलग नामों में उसके प्रति भेद बुद्धि रखना।

४. अश्रद्धा वेदवचने – वेदों के प्रति श्रद्धा विहीन होना।

५. अश्रद्धा गुरुवचने – गुरु के प्रति जिज्ञासु भाव का न होना।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. अश्रद्धा शास्त्रवचने – शास्त्रों के अनुशासन के प्रति श्रद्धा न होना।

७. नाम्नि अर्थवादभ्रमः – नाम जप में उचित-अनुचित का भ्रम होना।

८. नाम अस्तीति निषिद्धवृत्तिः – इस जप से लाभ होगा या नहीं ऐसी भावना।

९. विहितत्यागः – आवश्यक कर्त्तव्य कर्मों का त्याग करना।

१०. मतान्तरे विरुद्धदृष्टिः, धर्मान्तरे अन्तरदृष्टिः – दूसरे के मत पर ही दृष्टि रखना और अपने मत को श्रेष्ठ और दूसरे को हीन समझना।

अफगानिस्तान

आज जिसे अफगानिस्तान कहा जाता है उसका यह नाम तो अहमद शाह दुर्रानी ने सन् १७४७ में दिया था। लेकिन प्राचीन नाम का उल्लेख **'एरियाना'** के रूप में मिलता है जो कि **'आर्यायन'** का अपभ्रंश है। इसकी प्राचीन राजधानी **'गांधार'** थी जिसे आज **'कंधार'** कहते हैं। महाभारत में गांधार का नाम आता है। जब देवव्रत (भीष्म) कौरव राजकुमार धृतराष्ट्र के विवाह हेतु गांधार की राजकुमारी **'गांधारी'** को युद्ध में जीतकर लाये थे तो इस पर्वतीय प्रदेश से आकर गांधारी ने जब मैदानी क्षेत्रों की रमणीयता को देखा तो वह प्रसन्न हो गई परन्तु जब उसे पता लगा कि उसका विवाह एक नेत्रहीन राजकुमार धृतराष्ट्र से होना है तो उसने व्यथा और पीड़ा में भरकर अपने नेत्रों पर पट्टी बाँध ली। उसका भाई शकुनि जो प्रतिशोध की अग्नि में जलता रहा। अंत में परिणाम महाभारत का भयानक युद्ध हुआ।

अतिथि के गुण

१. जिसके आगमन और घर में रहने की स्थिति अर्थात् समय अनियत है।

२. परमयोगी

३. पूर्ण विद्वान्

४. धार्मिक

५. सत्योपदेशक

६. निष्कपट

७. सबकी उन्नति चाहने वाला

८. उपकारार्थ सर्वत्र भ्रमणशील

९. संन्यासी-परिव्राजक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सृष्टि सम्वत् की सर्वमान्य काल गणना

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के आधार पर

छः मन्वन्तर = ४३२०००० × ७१ × ६ = १,८४,०३,२०,००० वर्ष

वैवस्वत २७ चतुर्युगी = ४३२०००० × २७ = ११,६६,४०,००० वर्ष

२८वीं चतुर्युगी का = सतयुग-१७,२८,०००

त्रेता-१२,९६,००

द्वापर-८,६४,०००

कलियुग-५१०४

कुल वर्ष-१,९६,०८,५३,१०४ वर्ष

यह गणना सन् २००३ में सम्वत् २०६० के चैत्र बदी अमावास्या तक का है।

दीपावली पर्व पर घटनायें

१. कार्तिक अमावास्या के दिन सम्राट् विक्रमादित्य ने हूणों को परास्त कर भारतवर्ष को आजादी दिलाई थी।

२. इसी दिन सिखों के चौथे गुरु रामदास ने अमृतसर के स्वर्ण मंदिर की नींव डाली थी।

३. इसी दिन सिखों के छठवें गुरु हरगोविन्द जी बादशाह जहाँगीर की कैद से मुक्त हुए थे।

४. अंग्रेजों से लड़ते हुए झांसी की रानी लक्ष्मीबाई इसी दिन शहीद हुई थी।

५. इसी दिन गौतम बुद्ध के स्वागत में २५०७ वर्ष पूर्व असंख्य दीपों की रोशनी पर दीपावली मनायी गयी थी। (गणना २००२ सन् में)

६. इसी दिन भगवान् महावीर का निर्वाण हुआ और इस प्रकार ज्ञान की ज्योति बुझ जाने पर जैन समाज में पुनः दिये जलाकर दीपावली मनाने की प्रथा आरम्भ हुई।

७. आदि शंकराचार्य इसी दिन अवतरित हुए थे।

८. स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी रामतीर्थ एवं आचार्य विनोबा भावे ने इसी दिन शरीर त्यागा। स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने इसी दिन समाधि ली थी।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शारीरिक मानचित्र

स्थूल शरीर – यह सबका अलग-अलग होता है ।

कारण शरीर – यह सबका एक होता है अर्थात् प्रकृति

सूक्ष्म शरीर – पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियाँ, पांच प्राण, मन, बुद्धि सूक्ष्म शरीर के साथ रहते हैं । अंत समय में आत्मा के साथ जाते हैं ।

ज्ञानेन्द्रियाँ – श्रवण, त्वचा, नेत्र, जिह्वा और घ्राण ।

कर्मेन्द्रियाँ – वाक्, हस्त, पाद, गुदा और उपस्थ (लिंग) ।

प्राण – प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान ।

विषय – शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध ।

शरीर – मज्जा, अस्थि, मेद, मांस, रक्त, चर्म, त्वचा, रस ।

प्राण – जो बाहर से भीतर जाता है ।

अपान – जो भीतर से बाहर आता है ।

समान – जो नाभिस्थ होकर सर्वत्र शरीर में रस पहुँचाता है ।

उदान – जिससे कण्ठस्थ अन्नपान खींचा जाता और बल पराक्रम होता है ।

व्यान – जिससे सब शरीर में चेष्टा आदि कर्म जीव करता है ।

परमात्मा की सोलह कलाएँ

१. इच्छा	२. प्राण	३. श्रद्धा	४. आकाश
५. वायु	६. अग्नि	७. जल	८. पृथ्वी
९. इन्द्रिय	१०. मन	११. अन्न	१२. वीर्य
१३. तप	१४. मंत्र	१५. लोक (कर्म)	१६. नाम

इन षोडश कलाओं से परिपूर्ण परमात्मा अग्नि, सूर्य एवं बिजुली को संसार के समस्त पदार्थों में स्थापित करता है यह निम्न मन्त्र में बताया है :-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यस्मान्न जातः परोऽअन्योऽस्ति यऽआविबेश भुवनानि विश्वा ।
प्रजापतिः प्रजया संरराणस्त्रीणि ज्योतींषि सचते स षोडशी ॥
यजु०८।३६॥

चार वर्णाश्रम –

ब्राह्मण	बुद्धिजीवी	अज्ञान दूर करना
क्षत्रिय	शौर्यजीवी	अन्याय दूर करना
वैश्य	व्यवसायजीवी	अभाव दूर करना
शूद्र	श्रमजीवी	सेवा/श्रम कार्य करना

स्वामी दयानन्द जी ने आठ बुराइयों का वर्णन किया

१. अट्ठारह पुराण जो व्यास जी के नाम से जाली बनाये हुये हैं वे अप्रामाणिक हैं । पुराणों की रचना गोपदेव ने की थी ।
२. मूर्ति पूजा ।
३. सम्प्रदाय अर्थात् शैव, गणपति, रामानुज आदि सब अनुचित हैं । कृत्रिम हैं ।
४. तन्त्रग्रन्थ, वाम मार्ग ।
५. मादक द्रव्यों का सेवन ।
६. व्यभिचार ।
७. चोरी
८. असत्य भाषण, धोखा देना, कृतघ्नता ।

इस मानचित्र को अमूल्य समझकर प्रत्येक मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष का चिन्तन कर मानव जीवन सफल करना चाहिए । महर्षि दयानन्द सरस्वती कहते हैं कि आठ बुराई मनुष्य के मानचित्र में आ जाने पर मनुष्य सदा दुःख सागर में पड़ा रहता है ।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमात्मा की उपासना क्यों ? और कैसे करें ?

परमात्मा का मुख्य नाम-

परमात्मा का मुख्य नाम 'ओ३म्' है । यजुर्वेद के निम्न मंत्र से स्पष्ट है-

ओ३म् शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्य्यमा ।
शन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः ।।

(यजु० ३६।९)

ओ३म्– यह ओंकार शब्द परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम है क्योंकि इसमें जो अ, उ, म् तीन अक्षर मिलकर एक (ओ३म्) समुदाय हुआ है इस एक नाम से परमेश्वर के बहुत से नाम आते हैं ।

अकार – विराट्, अग्नि और विश्वादि ।

उकार – हिरण्यगर्भ, वायु, तैजसादि ।

मकार – ईश्वर, आदित्य और प्राज्ञादि नामों का वाचक और ग्राहक है।

ओं खं ब्रह्म (यजु० ४०।२७)

यह परमात्मा का नाम है ।

उपनिषदों द्वारा इस संदर्भ में मुख्य विचार

प्रश्नोपनिषद् में महर्षि पिप्पलाद से उनके शिष्य सत्यकाम ने पूछा ! गुरुवर- यदि कोई भक्त सारा जीवन **ओ३म्** का ध्यान करता रहे तो मृत्यु के पश्चात् उस **ओ३म्** के ध्यान के कारण वह किस लोक में पहुँचता है । महर्षि पिप्पलाद ने कहा हे सत्यकाम सुनो! ब्रह्म के दो रूप हैं । एक 'पर' दूसरा 'अपर'। यह जो ओंकार है यही 'पर' और 'अपर' ब्रह्म है । जो इसका सहारा लेता है वह 'पर' और 'अपर' जिस ब्रह्म को चाहे पा सकता है । 'पर' और 'अपर' दो ब्रह्म नहीं हैं । एक ही ब्रह्म की दो अवस्थायें हैं । 'पर' ब्रह्म ईश्वर की वह अवस्था है जहाँ वह प्रकृति से परे अपने आप में अपने ही परमानन्द में मग्न होकर विद्यमान है । वहाँ प्रकृति नहीं, माया नहीं, माया का कोई खेल नहीं है और 'अपर ब्रह्म' ईश्वर की वह अवस्था है, जहाँ वह प्रकृति के साथ उसमें अपनी शक्ति का संचार करता हुआ, माया का खेल रचा रहा है। यह संसार बनाकर, इसे साक्षी रूप से देखता हुआ विद्यमान है । यह ऋग्वेद के मंत्र से स्पष्ट है-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते ।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभि चाकशीति ।।

ऋक्० १।१६४।२०।।

अर्थात् – प्रकृति रूपी वृक्ष पर सुन्दर पंखों वाले आत्मा और परमात्मा रूपी दो पक्षी बैठे हुए हैं । उनमें एक पक्षी (आत्मा) तो उस वृक्ष के फल को खाता है अर्थात् कर्म करता है, उसके परिणाम से सुखी या दुःखी होता है, परन्तु दूसरा पक्षी (परमात्मा) न तो उस वृक्ष के फल को खाता है और न उसके परिणाम से सुखी या दुःखी होता है वह तो केवल देखता है । उपनिषद् और दूसरे आर्ष ग्रन्थों में 'पर' और 'अपर' को 'विद्या' और 'अविद्या' का नाम भी दिया गया है । आजकल की भाषा में हम इसे अध्यात्मवाद और संसारवाद भी कह सकते हैं । संसार में जो कुछ भी है-शक्ति, धन, सम्पत्ति, शासन, आयु प्रत्येक प्रकार के सुख ये सब 'अपर' हैं । और इससे परे आत्मदर्शन और प्रभु की परमानन्द से भरी गोद में जाकर परम शान्ति और मुक्ति यही 'पर' है । उपनिषद् का ऋषि कहता है कि जो भक्त ओ३म् का ध्यान करता हुआ उसे अपने मन और आत्मा में धारण करके इस शरीर को छोड़ता है वह **परब्रह्म** या **अपर ब्रह्म** दोनों में से जिसको भी चाहे उसे प्राप्त कर सकता है । महर्षि पिप्पलाद ने कहा सुनो सत्यकाम यह जो अक्षर **'ओ३म्'** है । इसमें तीन मात्रायें हैं । तीन मात्रा से ही इसका ध्यान, जाप करना चाहिए । एक मात्रा से जाप का अर्थ है **'ओ३म्'** की स्थूल शरीर के द्वारा उपासना । दो मात्रा के जाप का अर्थ है-मानसिक उपासना और तीन मात्रा से जाप का अर्थ आत्मिक उपासना करना ।

इस मंत्र में परमात्मा, आत्मा, प्रकृति तीनों की सत्ता का स्पष्ट बोध होता है ।

अध्यात्मवाद

वह अवस्था जब **आत्मा** सात्विक बुद्धि में स्थिर हो जाता है, ऐसी अवस्था में **आत्मा** जो भी कार्य करता है, वह कल्याण करने वाला होता है, उन्नति की ओर ले जाने वाला होता है । उसमें पवित्रता होगी, स्वार्थ नहीं, घृणा नहीं, शत्रुता नहीं, अपितु आनन्द प्रेम की भावना होगी । अतः ऐसा **आत्मा** निरन्तर उन्नति करता जावेगा इन्द्रियों की तृप्ति से ऊपर होकर आत्मभाव में पहुँचकर कर्म को करेगा, परन्तु लिप्त नहीं होगा । उपनिषद् में यही बात यम ने नचिकेता को, महर्षि याज्ञवल्क्य ने गार्गी, मैत्रेयी को बताया था । यह कथा छान्दोग्य, बृहदारण्यक, श्वेताश्वतर उपनिषद् में आती है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपासना क्यों और कैसे करें ?

ओं उत स्वया तन्वा सं वदे तत् कदान्वन्तर्वरुणे भुवानि ।
किं मे हव्यमहृणानो जुषेत कदा मृडीकं सुमना अभि ख्यम् ।।
(ऋक्० ७।८६।२)

अर्थ—(उत स्वया तन्वा संवदे) हाँ ! मैं अपनी देह से संवाद करता हूँ-पूछता हूँ । (तत्-कदा-नु-वरुणे-अन्तः भुवानि) तो फिर कब वरने योग्य एवं वरने वाले परमात्मा वरुणदेव के अन्दर विराजमान होऊँ-ऐसा दिन कब आयेगा, जबकि मैं वरने योग्य और वरने वाले परमात्मा में अपने को विराजमान हुआ देखूँ । (मे) मेरी (किं हव्यम्) किस भेंट को (अहृणानः-जुषेत) स्वागत करता हुआ स्वीकार करे ।

(कदा मृडीकं सुमनाः अभिख्यम्) कब मैं सुखस्वरूप, आनन्दरूप परमात्मा को पवित्र मन वाला और निरुद्ध मन वाला होकर देख सकूँ ।

भावार्थ—इस मंत्र में भक्त भगवान् से नम्र निवेदन करता हुआ कहता है कि प्यारे सुन्दर प्रभो ! वह दिन कब आवेगा, जब मैं तेरे दर्शन पाऊँगा । कब तू मेरी भेंट स्वीकार करेगा, जब मैं तेरा अन्तरंग बनूँगा । शुभ घड़ी कब आवेगी । जब मैं अपने आत्मा के साथ तुझसे बातचीत करूँगा ।

पृच्छे तदेनो वरुण दिदृक्षूपो एमि चिकितुषो विपृच्छम् ।
समानमिन्मे कवयश्चिदाहुरयं ह तुभ्यं वरुणो हृणीते ।।
(ऋक्० ७।८६।३)

भावार्थ—हे प्रभो ! आप तो वरुण हैं, जैसे पत्नी, पति को वर लेती है और फिर उसके लिए पति के अलावा दूसरा कोई नहीं रहता । वैसे ही मैंने तुझे वर लिया है । तेरे अलावा मुझे कुछ नहीं चाहिए, परन्तु इतना बताओ प्रभु ! मैंने वह कौन सा पाप किया है, जिसके कारण मैं यहाँ बंधा हुआ हूँ । अब आप ही कृपा करके मुझे बंधन से मुक्ति दिलावें ।

किमाग आस वरुण ज्येष्ठं यत् स्तोतारं जिघांससि सखायम् ।
प्र तन्मे वोचो दूळभ स्वधावो ऽव त्वानेना नमसा तुर इयाम् ।।
(ऋक्० ७।८६।४)

भावार्थ—बोलो मेरे प्रियतम ! मैं तुम्हें वरता हूँ, मैं तुम्हारा मित्र हूँ । मैं तुम्हारा अपना हूँ । कृपा करके बोलो कि मैंने ऐसा कौन सा पाप किया

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि मेरे जैसे प्यारे भक्त को भी दण्ड देना चाहते हों। बहुत कठिनता से मिलने वाले, रूठकर दूर बैठे हुए, दूर-दूर तक सभी स्थान पर ज्योति देने वाले! कृपया मार्गदर्शन करो, कि मैं पाप से अलग होकर भक्ति से भरपूर होकर शीघ्र से शीघ्र आपको कैसे पाऊँ।

अव द्रुग्धानि पित्र्या सृजा नोऽव या वयं चकृमा तनूभिः।
अव राजन् पशुतृपं न तायुं सृजा वत्सं न दाम्नो वसिष्ठम्॥

(ऋक्० ७।८६।५)

भावार्थ– मेरे ज्योति से पूर्ण स्वामी! जिन लोगों ने मुझे पाला वे शायद ठीक शिक्षा न दे पाये मुझे? उसके कारण कुछ अपराध हो गये और मैं भी शायद आपके उपदेशों को भूलकर कुछ त्रुटियाँ कर बैठा, परन्तु अब तो गलती हो गई, इन्हें भुला दो स्वामी। पशुओं को चुराने वाले चोरी करने से पूर्व उन्हें घास खिलाते हैं। मैं भी इन्द्रियों को घास खिला रहा हूँ अर्थात् इन्हें वश में कर लिया है, हो गया अपराध मुझसे, परन्तु मैं आपको हृदय से प्यार करता हूँ। हे प्रभो! प्यार भरा स्वामी जिस प्रकार बछड़े की रस्सी खोल देता है। आप भी कृपया प्रकृति के बंधन को खोल देवें जो मुझे जकड़े बैठी है। मैं आपसे शक्ति माँगता हूँ। मेरे अपराधों को अनदेखा कर अपनी अमृतमयी गोद में स्थान दीजिए। हम सब अनुभव करते हैं कि शरीर में चार वस्तुएँ मुख्य रूप से हैं। (१) इन्द्रियाँ अथवा स्थूल शरीर, (२) मन, (३) बुद्धि, (४) आत्मा। इन चारों पदार्थों के लिए किसी न किसी प्रकार के भोजन की आवश्यकता है। इन्द्रियाँ और स्थूल-शरीर के लिए अन्न और धन की आवश्यकता है। अन्न और धन के बिना यह शरीर चल नहीं सकता, इसी अन्न और धन को हम **अर्थ** के नाम से भी जानते हैं। दूसरा पदार्थ हमारे पास **मन** है। मन हमेशा कामनायें करता है। शास्त्रकार भी कहते हैं- **'संकल्पविकल्पात्मकं मनः'** संकल्प-विकल्प करने वाला मन है। इस संकल्प-विकल्प को ही दूसरे शब्दों में **काम** के नाम से पुकारते हैं। इस प्रकार **मन का भोजन काम हुआ।**

तीसरी वस्तु **'बुद्धि'** है, इसका कार्य निश्चय करने का है। अच्छा क्या है, बुरा क्या है इसका सदैव विवेक करते रहना यह बुद्धि का कार्य है। इसी सद्‌विवेक को **धर्म** के नाम से जानते हैं। इस प्रकार **बुद्धि का भोजन धर्म हुआ।**

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब प्रश्न होता है कि आत्मा का भोजन क्या है? आत्मतत्व अनन्तकाल में आनन्द की खोज में एक विशाल यात्रा पर निकला हुआ है। वह उस आनन्द को प्राकृतिक पदार्थों से प्राप्त करना चाहता है । कभी वह धन-दौलत कमाने में ही आनन्द समझता है, कभी वह परिवार बसाने में ही आनन्द, कभी वह अधिकार एवं प्रतिष्ठा प्राप्त करने में आनन्द समझता है। इसी प्रकार प्राकृतिक वस्तुओं की प्राप्ति में परिश्रम करता हुआ आनन्द की अनुभूति की कामना करता है । परन्तु ये प्राकृतिक पदार्थ बड़े चंचल, सदैव परिवर्तनशील, उसको पग-पग पर ठोकरें मारते हुए, दुःखसागर में धकेल देते हैं । वह जीवात्मा इन भौतिक पदार्थों से आनन्द की कामना करता हुआ अनायास दुःख, क्लेश और संकटों में फंसकर दुर्दशा को प्राप्त होता है । हमारे तपस्वी महर्षियों का कथन है कि जीवात्मा को यदि आनन्द चाहिए तो उसे आनन्द के स्रोत परमात्मा के पास जाना होगा वहीं परमानन्द की प्राप्ति होगी, अपने सभी क्रिया-कलापों को अध्यात्ममुखी बनाना होगा । अर्थात् अर्थ और काम से पूर्व धर्म की स्थापना करनी होगी । धर्मपूर्वक अर्थ कमाना होगा और धर्मपूर्वक ही सभी कामनायें करनी होंगी तभी आनन्द प्राप्ति का मार्ग सुगम बन सकेगा । अर्थात् जीवात्मा का भोजन आनन्दस्वरूप परमात्मा ही है । इससे स्पष्ट हुआ कि परमात्मा की उपासना करनी चाहिए ।

शरीर में कोई रोग हो जाय तो मनुष्य डाक्टर के पास जाकर उसे दिखाता है, ढंग से उपचार के बाद जब स्वस्थ हो जाता है तो डाक्टर को धन्यवाद देता है, उसके उन्नति की कामना भी प्रभु से करता है। जबकि उसने डाक्टर को फीस दवा का मूल्य भी पूरा दिया। मनुष्य यह नहीं सोचता कि परमात्मा ने जो यह शरीर दिया जिसमें पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच प्राण, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, आत्मा ये सब हैं, फिर भी हम परमात्मा की उपासना न करें, तो हम कर्त्तव्यों से गिर जाते हैं । मानव शरीर ही परमात्मा के करीब पहुँचने का पात्र है । जो अष्टांग योग द्वारा पूर्ण कर सकता है । जो मानव तन प्राप्त करके भी पशु तुल्य वासनाओं और चेष्टाओं में लिप्त है, उसका बड़ा दुर्भाग्य है, कि नर- तन प्राप्त करके भी परमात्मा को प्राप्त करने का प्रयत्न नहीं करता ।

वेदों में मनुष्य के शरीर को देवताओं की नगरी, अयोध्या, पुरी बतलाया, इसी को मुक्ति का द्वार भी कहा है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या ।
तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः ।।

(अथर्व० १०।२।३१)

भावार्थ – सबसे नीचे मूलाधार चक्र, स्वाधिष्ठान चक्र, मणिपूरक चक्र, अनाहत चक्र, हृदय चक्र, विशुद्ध चक्र, आज्ञा चक्र, ब्रह्म चक्र इन चक्रों वाली, योग के आठ अंगों के (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि) कर्म करने वाली, नौ द्वारों वाली (दो नेत्र, दो कर्ण, दो नासिका, एक मुख, मल, मूत्र के द्वार) नगरी के इन सभी द्वारों पर देवता पहरा देते हैं। इनसे आगे शरीर के अंधकार में हृदय गुफा है, उसके भीतर प्रकृति के सुनहरे ढकने से घिरा हुआ **परमज्योति-स्वरूप परमात्मा रहता है।** शरीर पुरी अज्ञानियों के लिए अज्ञेय है। इस पुरी में अनेक बलों से युक्त चेतन जीवात्मा तथा सुख स्वरूप परमात्मा का चारों तरफ चलने वाला प्रकाश स्वरूप ब्रह्म तेज छाया हुआ है।

मनुष्य इन्हीं आँखों से परमात्मा का दर्शन करना चाहता है जबकि कठोपनिषद् में स्पष्ट कहा है।

न सन्दृशे तिष्ठति रूपमस्य न चक्षुषा पश्यति कश्चनैनम् ।
हृदा मनीषी मनसाभिक्लृप्तोऽय एतद्विदुरमृतास्ते भवन्ति ।।

(कठ० वल्ली ६, श्लोक ९)

इस आत्मा का रूप दृष्टि में नहीं ठहरता। यह आँख क्या ? वह किसी भी इन्द्रिय का विषय नहीं है। परमात्मा की कोई मूर्ति नहीं है। (यजु० ३२।३) **'न तस्य प्रतिमा अस्ति'।**

उस परमात्मा की प्रतिमा, परिमाण उसके तुल्य अवधि का साधन प्रतिकृति, मूर्ति व आकृति ही नहीं है।

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यःसमाभ्यः।।

(यजु० ४०।८)

इस मंत्र में कहा गया है कि परमात्मा **अकाय** है अर्थात् स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर रहित है। वह **अव्रणम्** है अर्थात् छिद्र रहित और अच्छेद्य है। वह **अस्नाविरम्** है। नस नाड़ी के बंधनों से मुक्त है। ऐसे परमात्मा का

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्शन इन आँखों से नहीं हो सकता है । वह तो समस्त इन्द्रियों के परे है, तो फिर उसका दर्शन किस प्रकार से हो सकता है । कठोपनिषद् के शांकर भाष्य में बताया गया है कि परमात्मा (हृदा हृत्स्थया बुद्धया = हृदय स्थिता बुद्धि से 'मनीषा मनसः संकल्पादिरूपस्येष्टे नियन्तृत्वेनेति मनीट् तया हृदा मनीषा विकल्पयित्र्या मनसा मननरूपेण सम्यग्दर्शनेन, अभिक्लृप्तोऽभिसमर्थितोऽभिप्रकाशित इत्येतत् । (शां० भा० कठो० ६।९।।) जो कि संकल्पादिरूप मन का नियन्ता होकर ईक्षण करने के कारण **मनीषी** है । उस विकल्प शून्या बुद्धि से मन अर्थात् मनन रूप यथार्थ दर्शन द्वारा सब प्रकार समर्थित अर्थात् प्रकाशित हुआ वह परमात्मा जाना जा सकता है ।

एष सर्वेषु भूतेषु गूढात्मा न प्रकाशते ।
दृश्यते त्वग्र्यया बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः ।।

(कठ० वल्ली ३, श्लोक १२)

अर्थ – सम्पूर्ण भूतों में छिपा हुआ वह परमात्मा ही देखा जाता है । शास्त्रानुसार यह स्पष्ट है कि वह परब्रह्म परमात्मा इन भौतिक आंखों से नहीं देखा जा सकता है । शंका यह उठ सकती है कि अंधेरे के कारण परमात्मा दिखाई नहीं देता । अगर सूर्य, चांद, तारागण, अग्नि, बिजली हों तो ये इसके प्रकाशन में समर्थ हो सकते हैं । पुनः कठोपनिषद् के अगले मंत्र में इसका समाधान किया, जो निम्न है-

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः ।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ।।

(कठ० वल्ली ५, श्लोक १५)

अर्थ – वहाँ उस आत्मलोक में सूर्य प्रकाशित नहीं होता, चन्द्रमा और तारे भी नहीं चमकते और न वह बिजली ही चमचमाती है, फिर इस अग्नि की तो बात ही क्या है ? अर्थात् ये सब प्रकाशक पदार्थ उस परब्रह्म परमात्मा को प्रकाशित करने में असमर्थ हैं । उस परमात्मा के प्रकाशमान होने से ही यह सब कुछ प्रकाशित है । उसका प्रकाश ही इन सब प्रकाशक पदार्थों को भी प्रकाशित करता है । स्पष्ट है कि इन्द्रियाँ किसी भी अवस्था में उस सूक्ष्मातिसूक्ष्म परमात्मा को देखने का सामर्थ्य नहीं रखतीं । वह परमात्मा तो मन पर शासन करने वाली विकल्पशून्य, सूक्ष्म, तीव्र और पवित्र बुद्धि द्वारा ही अनुभव करने योग्य है । इस प्रकार की बुद्धि ऐसे प्राप्त

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की जावेगी कि मनुष्य जब अपने मन में उसके पवित्र 'ओ३म्' नाम को बसा ले तब वह परमात्मा उसके हृदय रूपी आसन पर विराजमान हो सकेगा।

प्राणी योग साधना के द्वारा अष्टांग योग मार्ग का अवलम्बन लेते हुए, अपने मन को शुद्ध, पवित्र, एकाग्र और निरुद्ध कर सकते हैं। निरुद्ध मन ही पवित्र ऋतम्भरा बुद्धि को प्रदान करने वाला है, जिस बुद्धि को प्राप्त करके हम परब्रह्म परमात्मा का अनुभव कर सकते हैं और अपने जीवन के अंतिम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं।

उदाहरण – एक संन्यासी गृहस्थ के घर आते हैं भिक्षा हेतु। उनसे गृहिणी आत्मदर्शन के बारे में जानना चाहती है। महात्मा ने कहा कि कल आत्मदर्शन के बारे में बतायेंगे, तो गृहिणी ने कहा कि कल हम भी आपको भोजन करा देंगे। दूसरे दिन महात्मा अपने कमंडल में गोबर रख गृहिणी के घर पुनः आये। गृहिणी ने कहा कि महात्मा बैठें आज मैंने आपके लिए खीर बनाया है ग्रहण करें। महात्मा ने कहा कि मैं यहाँ नहीं खाऊँगा मेरे कमंडल में रख दो, कुटिया में जाकर खा लूँगा और अपना कमंडल गृहिणी को दे दिया, उसने देखा कि उसमें गोबर है तो कहा कि महात्मा इसमें गंदा है इसे मैं साफ कर दूँ तब इसमें खीर डाल दूँगी। महात्मा ने कहा कि अपने मन से काम, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, मोह, लोभ, अहंकार रूपी जो गंदगी है, उसे पहले दूर करो उसके बाद आत्मदर्शन और परमात्मा की प्राप्ति का उपाय बता दूँगा। इस कहानी से मनुष्य को शिक्षा लेनी चाहिए, तब उसका उद्धार हो सकेगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमात्मा का मुख्य नाम ओ३म्

'ओ३म्' सम्पूर्ण विश्व का प्राण है। सृष्टि-उत्पत्ति के समय सबसे पहला जो शब्द सुनाई दिया वह 'ओ३म्' था। अब भी, जब और कोई ध्वनि नहीं होती तो यही 'ओ३म्' की ध्वनि न केवल बाह्य श्रोत्र ही सुनते हैं, अपितु अन्त:करण भी 'ओ३म्' का ही नाद सुनता है। 'ओ३म्' का उच्चारण तीन प्रकार से करते हैं। (१) मुख द्वारा दीर्घ स्वर से (२) नासिका द्वारा गम्भीर स्वर से (३) सर्वदा मौन रहकर केवल हृदय में 'ओ३म्' का निरन्तर जप किया जावे तो ओ३म् अक्षर के जप से मुनि अवस्था प्राप्त होकर ध्यानावस्था आने लगती है। वेदों में 'ओ३म्' ही के जाप को बताया है और परमात्मा ने वेद में स्वयं अपना नाम 'ओ३म्' बतलाया है। यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के सत्रहवें मंत्र में **'ओं खं ब्रह्म'** है। परमात्मा का नाम 'ओ३म्' जो सर्वव्यापक है और सबसे बड़ा है। यजु० ४०।१५ में मानव कल्याण के लिए आदेश है **'ओ३म् क्रतो स्मर'** हे कर्मशील! ओ३म् का स्मरण कर यही सबका सहारा है।

ओ३म् का संक्षेप में अर्थ – सर्वरक्षक, सर्वव्यापक, सर्वगतिदाता, सर्वप्रकाशक, पाप विनाशक, दाता, भगवान्, तृप्तिकारक, शक्तिमान्, न्यायकारी, श्रोता, बुद्धि-पुष्टि-सुगन्ध देने वाला, सत्-चित्-आनन्द (सच्चिदानन्द)।

श्रीकृष्ण जी ने गीता में, वेदव्यास ने महाभारत में, सभी पुराणों में, उपनिषदों और ब्राह्मण ग्रंथों में तथा मनुस्मृति में इसी नाम का उल्लेख मिलता है। स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, पंचमहायज्ञ विधि में 'ओ३म्' ही को परमेश्वर के सब नामों से उत्तम नाम बताया है। इसमें सब नामों के अर्थ आ जाते हैं।

'ओ३म्' – तीन अ-उ-म् अक्षरों का समुदाय है। इससे अकार, उकार, मकार का बोध होता है, जो मनुष्य इसे समझ लेता है वह ऋषि की श्रेणी में आ जाता है। इसे समझना ही कठिन कार्य है। सत्यार्थप्रकाश में स्वामी दयानन्द जी ने अकार, उकार, मकार की निम्न परिभाषा दी है।

अकार – विराट्, अग्नि और विश्व

उकार – हिरण्यगर्भ, वायु, तैजस आदि

मकार – ईश्वर, आदित्य और प्राज्ञ

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन तीनों की विस्तार से व्याख्या माण्डूक्योपनिषद् में मिलती है । अ, उ, म् ये तीनों मानवीय ध्वन्यात्मक वर्णमाला के आधार और चरम हैं । वेदों में बताया गया है कि तीन अक्षर परमात्मा के विभिन्न गुण-कर्म-स्वभावों के प्रतीक हैं । व्याकरणानुसार 'ओ३म्' शब्द संज्ञा नहीं अव्यय है । अव्ययों के रूप नहीं चलते । इस शब्द का रूपान्तरण कर्त्ता, कर्म, संप्रदान व करण, कारकों में नहीं हो सकता है । इससे सिद्ध है कि सृष्टि में 'परमात्मा' के अलावा 'ओ३म्' नाम किसी देवता का नहीं हो सकता है । विभिन्न धार्मिक पुस्तकों में परमात्मा के जितने नाम हैं सारे 'ओ३म्' शब्द से ही निकलते हैं। यह ऐसा महाशब्द है, जो इंसान ही नहीं, पशु, पक्षी भी अपनी भाषा में बोलते हैं ।

हिन्दुओं (आर्यों) के अलावा यहूदी, मुसलमान, ईसाई, सिख सभी अपनी-अपनी प्रार्थनाओं में ओम्, आमीन, ओंकार शब्द का उच्चारण करते हैं । सिखों के गुरु नानकदेव जी ने ओंकार शब्द का उच्चारण इस प्रकार किया । **'एक ओंकार सतनाम कर्त्ता पुराण'** गुरु जी ने भी 'ओ३म्' (ओंकार) का ही जप करने को बताया है । उपनिषदों ने स्पष्ट कहा है कि-

ओंकार एवेदं सर्वम्, ओंकार एवेदं सर्वम्

छान्दो० २।२३।३॥

यह सब कुछ ओंकार ही है-गुरु नानकदेव जी महाराज पुनः कहते हैं कि-

ओं अंकारि ब्रह्मा उतपति, ओं अंकारि कीआ जिनि चिति ।
ओं अंकारि सैल जुग भये, ओं अंकारि वेद निरमए ।।

जपुजी पृ० ३६॥

ओंकार से ब्रह्मा उत्पन्न हुए और ओंकार का ध्यान किया । ओंकार सदा से है और वेदों का ज्ञान मनुष्यमात्र को दिया । माण्डूक्य उपनिषद् में ओंकार के संबंध में निम्न मंत्र आया है-

ओमित्येतदक्षरमिदं सर्वं तस्योपव्याख्यानं भूतं भवद् भविष्यदिति ।
सर्वमोंकार एव । यच्चान्यत् त्रिकालातीतं तदप्योंकार एव ।।

माण्डूक्य० १॥

'ओ३म्' यह एक अक्षर ही सब कुछ है । जो पहले था, जो आगे होगा सब ओंकार है, अर्थात् ओंकार सदा रहता है । और जब यह सब कुछ नहीं

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहता है, भूत, भविष्यत्, वर्तमान तीनों काल समाप्त हो जाते हैं, तब भी 'ओंकार' विद्यमान रहता है । इससे बड़ा सहारा प्राणीमात्र के लिए दूसरा नहीं हो सकता है । 'ओ३म्' का ध्यान करने से हृदय पवित्र होता है मन की शांति, चेतना के विकास और बुद्धि परिमार्जन में 'ओ३म्' का नाद प्राणीमात्र को प्रतिदिन अवश्य करना चाहिए । इससे हम ईश्वरीय शक्ति, प्रकृति, धर्म एवं सत्य शुभाचार के करीब पहुँच जाते हैं । 'ओ३म्' के बोलने या जप से अंत:करण साफ होता है, साथ ही शरीर, मन, बुद्धि में प्रखरता आती है । वैज्ञानिकों ने इस पर सालों तक शोध करके 'ओ३म्' नाद के प्रभावों को बतलाया । जो मनुष्य दुनियाँ के कार्यों में से कुछ समय निकालकर सुबह, शाम, उच्च स्वर से 'ओ३म्' का जप उच्चारण करता है उसके वर्तमान, भविष्य दोनों सुधरते हैं । श्रीकृष्ण जी ने गीता में भी लिखा कि जो मनुष्य अंत समय में ईश्वर का ध्यान 'ओ३म्' का जप करता हुआ प्राण छोड़ता है, वह आवागमन से हमेशा के लिए मुक्त हो जाता है ।

महाभारत में वेदव्यास महाराज कहते हैं कि 'ओ३म्' का जप, तप एवं ध्यान करने से दु:खों एवं जन्म-मरण के चक्र से छुटकारा मिलता है । स्वामी रामतीर्थ जी 'ओ३म्' को सभी धर्मों का आधार मानते हैं । स्वामी जी कहते हैं कि जब यूरोप और अमेरिकावासी 'ओमन' बोलते हैं तब दूसरी सभी क्रियायें रुक जाता हैं । जहाँ दिव्यता में आत्मा का विलय हो जाता है, उस स्थान पर 'ओमन' का आविर्भाव होता है । इसीलिए हमें लगातार 'ओमन' बोलते रहना चाहिए । एक समय ऐसा आता है जब हृदय में ऐसा आनन्द अनुभव होता है जो अकथनीय, अनिर्वचनीय होता है । 'आमीन, ओमन, ओ३म्' में कोई अन्तर नहीं है । 'ओ३म्' जिस तरह वेदान्त का सार है उसी तरह 'ओमन और आमीन' बाइबिल और कुरान का सार है । इस तरह 'ओ३म्' ही सभी धर्मों का आधार और सार तत्व है । मनुस्मृति में भगवान् मनु ने वेदों को सभी धर्मों का मूल बतलाया है और वेदों को ईश्वरीय वाणी माना है । वेदों में किसी मत मतांतर या सम्प्रदाय, जाति एवं वर्ग समूह का वर्णन नहीं, इसीलिए वेद को प्राणीमात्र के लिए विश्व की प्राचीन पुस्तक माना जाता है ।

वेदों से ही सभी बाद के धर्मग्रन्थों ने अपने हित साधना के अनुसार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्व लिए, इसीलिए सभी ग्रंथों में वेद धर्म का आधार माना गया है। 'ओ३म्' ऐसा महानाद है जो प्रत्येक मनुष्य के स्वर रन्ध्रों में गूंज रहा है। इतना ही नहीं तंत्र ग्रंथों के अनुसार पूरे ब्रह्मांड में 'ओ३म्' नाद गुंजायमान हो रहा है। साधना के द्वारा इस गूंज का हम अनुभव करते हैं। इसीलिए प्रत्येक मनुष्य को चाहिए कि लम्बी आयु, स्वस्थ शरीर, दुःखों से छुटकारा एवं सद्भावना के लिए 'ओ३म्' की उपासना सदैव जीवन पर्यन्त करता रहे।

ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत ।

छान्दो० १।१।१॥

छान्दोग्य उपनिषद् में परमेश्वर का मुख्य नाम 'ओ३म्' कहा है जो कभी नष्ट नहीं होता, उसी की उपासना करनी चाहिये, अन्य की नहीं अन्य सब गौणिक नाम हैं।

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति ।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत् ।।

कठो० वल्ली १५।२१॥

सब वेद, सब धर्मानुष्ठान रूप तपश्चरण जिसका कथन और मान्य करते और जिसकी प्राप्ति की इच्छा करके ब्रह्मचर्य-आश्रम करते हैं उसका नाम 'ओ३म्' है। जीवात्मा का वास्तविक माता-पिता, मित्र-पालक अथवा सर्वस्व, कभी आत्मा का साथ न छोड़ने वाला 'ओ३म्' ही है। इसका ज्ञान, ध्यान प्रत्येक जीवात्मा को होना चाहिए।

ओं त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ ।
अधा ते सुम्नमीमहे ।।

(अथर्व० २०।१०८।२)
(ऋक्० ८।९८।११)

'ओ३म्' पदवाच्य परमात्मा की उपासना को सभी उपनिषदें, स्मृतियाँ, दर्शन, निरुक्तादि शास्त्र कहते हैं-

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदुः ।
यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासते ।।

(ऋक्० १।१६४।३९)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्जरी से पहले मरीजों को 'ओ३म्' का डोज[1]

नई दिल्ली (ब्यूरो)। सर्जरी के कुछ दिन पहले मरीज को दवा दी जाती है लेकिन अब वह दिन दूर नहीं जब बाइपास सहित अन्य सर्जरी के पहले राजधानी में मरीजों को **'ओ३म्'** का डोज दिया जायेगा। आश्चर्य नहीं होना चाहिए अगर आने वाले दिनों में डाक्टर अपनी परची पर मरीजों को दवाई की तरह ही भजन-कीर्तन, मंत्रोच्चारण आदि की सलाह भी लिखने लगें। आधुनिक इलाज में अध्यात्म की भूमिका को रेखांकित करने के लिए अत्याधुनिक सुविधाओं से लैस सर गंगाराम अस्पताल ने रिसर्च इंस्टीच्यूट आफ वैदिक कल्चर के साथ मिलकर वर्ल्ड अकेडमी आफ स्प्रीच्युअल साइंसेज की स्थापना की है। इस अकेडमी के तहत देश के विभिन्न हिस्सों में स्थापित केन्द्रों में शोध की महत्वाकांक्षी योजना बनाई गई है। ऐसा माना जा रहा है कि इन शोधों के बाद देश में इलाज की दिशा में गुणात्मक परिवर्तन होगा। लेकिन मजे की बात यह है कि इलाज में योग के प्रयोग की तरह ही हम **'ओ३म्'** या अन्य वैदिक मंत्रों के मामले में भी पीछे ही रहेंगे। न्यूयार्क में ईसाइयों के कोलंबिया प्रेसबाईटेरियन मेडिकल सेंटर में मरीजों को बाईपास के पहले तीन दिन तक **'ओ३म्'** का उच्चारण कराया जाता है।

❖❖❖

---

१. नोट – २२ अक्टूबर शनिवार सन् २००५ के हिन्दुस्तान अखबार लखनऊ में यह छपा था। लेखक॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य शरीर की रचना

अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या ।
तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः ।।

(अथर्व० १०।२।३१)

मनुष्य शरीर में नौ द्वार हैं – दो आँख, दो कान, दो नथुने, एक मुख, मल-मूत्र के द्वार ।

शरीर में आठ चक्र हैं – मूलाधार चक्र, स्वाधिष्ठान चक्र, मणिपूरक चक्र, अनाहत चक्र, हृदय चक्र, विशुद्धि चक्र, आज्ञाचक्र, ब्रह्मचक्र । इस नौ द्वारों, आठ चक्रों वाली नगरी में बुद्धि नामक सुन्दर स्त्री रहती है । दस इन्द्रियाँ उसके सेवक हैं और पांच प्राण अर्थात् पांच फनों वाला सर्प जो इस नगरी की रक्षा करता है । शरीर में ७२ करोड़, ७२ लाख, दस हजार, दो सौ, दस नाड़ियाँ हैं जिनमें १०१ नाड़ियाँ बहुत ही मुख्य हैं ।

स्थूल शरीर – सबका अलग-अलग रहता है, एक दूसरे का चेहरा नहीं मिलता है ।

सूक्ष्म शरीर – पांच प्राण, पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच तन्मात्राऐं, मन, बुद्धि जो जन्म-जन्म से हमारे साथ हैं । इसमें हमारे कर्म, अकर्म का लेखा जोखा रहता है ।

कारण शरीर – जो प्रकृति से मिलकर बना है । कारण शरीर में आत्मा निवास करता है और आत्मा में परमात्मा निवास करता है ।

आत्मा

मनुष्य शरीर में दो आत्माओं का निवास है, इसलिए वेद में **आत्मानौ** शब्द आया है । एक समस्त विश्व को चलाने वाला परमात्मा और दूसरा इस शरीर का अधिष्ठाता जीवात्मा । ये दोनों आत्मा चेतन हैं ।

अध्यात्मवाद – वह अवस्था जब आत्मा सात्विक बुद्धि में स्थिर हो जाता है । ऐसी अवस्था में आत्मा जो भी कार्य करेगा वह कल्याण करने वाला, उन्नति की ओर ले जाने वाला होता है । इसमें पवित्रता होगी, स्वार्थ नहीं, घृणा नहीं, शत्रुता नहीं अपितु अनन्त प्रेम की भावना होगी । अतः

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा आत्मा निरन्तर उन्नति करेगा । इन्द्रियों की तृप्ति से ऊपर होकर आत्मभाव में पहुँचकर कर्म करेगा परन्तु उसमें लिप्त नहीं होगा ।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते ।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति ।।

(मुण्ड० उप० ३।१।१)
(श्वेता० उप० ४।६)
(ऋक्० १।१६४।२०)

इसमें दो आत्मा हैं । एक वह आत्मा जो सुख दुःख को भोगता, कर्म करता और उसके फल को पाता है तथा दूसरा वह जिसको परमात्मा कहते हैं, जो सारे संसार का निर्माता, संचालक है । सब शक्तियों का स्वामी है । सभी कर्मों का फल प्रदाता है और सब कुछ करने पर भी केवल द्रष्टा बनकर परम आनन्द में मग्न होकर बैठा रहता है ।

इस मंत्र में परमात्मा, आत्मा, प्रकृति तीनों की सत्ता का स्पष्ट बोध होता है । योगशास्त्र के अनुसार इस शरीर को अन्नमयकोश, उसके भीतर प्राणमय कोश, उससे आगे मनोमयकोश, उससे आगे विज्ञानमयकोश और उससे आगे आनन्दमयकोश कहा है इसी में परमात्मा की ज्योति का दर्शन आत्मा करता है । उपनिषद् में भी कहा कि इस परमात्मा की ज्योति शरीर में देखो- **अन्तः पुरुषे ज्योतिः तस्यैषा दृष्टिः । यत्रैतदस्मिञ्छरीरे** (छान्दो० ३।१३।७,८) ।

दस इन्द्रियों के आवरण से ढका, ग्यारहवाँ मन उनके पर्दे को हटा दो आत्मा मिलेगा । जागृत अवस्था में आत्मा द्रष्टा बन कर संसार को देखता है । सोने के पश्चात् सुषुप्ति अवस्था आती है तब आप स्वप्न देखते हैं। आपकी ज्ञानेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ सो जाती हैं, मन, बुद्धि, अहंकार के साथ आत्मा जागता रहता है तथा सूक्ष्म कर्मेन्द्रियों और सूक्ष्म ज्ञानेन्द्रियों से स्वप्नों का संसार निर्माण करके रहता है । जब मन, बुद्धि, अहंकार, सूक्ष्म ज्ञान, कर्मेन्द्रियाँ सब सो जाती हैं, केवल प्राण और आत्मा जागते रहते हैं, तब प्राणी अपने रूप को देखता है और उसमें **परमपिता परमात्मा जो परब्रह्म है** उसे देखता है और आनन्द में मग्न हो जाता है । जागने पर कहता है कि आज बहुत आनन्द आया । कारण **आत्मा और परमात्मा जो परब्रह्म है** उसका क्षणिक मिलाप हुआ । अष्टांग योग-साधना के द्वारा शरीर में ही

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मलोक, गंगा-यमुना का कलरव, आकाश को छूता हिमालय पर्वत, सोने की भाँति चमकता सुमेरु पर्वत, गहरे सागर, विशाल मैदान, लाखों नदियाँ, करोड़ों सूर्य, अरबों पृथिवियाँ, सब कुछ हम अपने शरीर के अंदर ही अनुभव कर सकते हैं। चूँकि प्राणी का सम्बन्ध प्रकृति से ज्यादा है, वह पुनः इस सांसारिक मायाजाल में वापस ले आता है, ज्यों-ज्यों हम प्रकृति से दूर हटेंगे उतना ही हम परमात्मा के करीब होंगे। सुख मिलता है जब इन्द्रियाँ मन के वश, मन बुद्धि के वश में और बुद्धि आत्मा के वश में होती है इन्द्रियों के पर्दे को हटा दो आत्मा मिलेगा और प्रकृति के पर्दे को हटा दो परमात्मा अवश्य मिलेगा। (मैं था, मैं हूँ, मैं रहूँगा, किन्तु जिसमें था, न तो वह रहेगा और जिसमें हूँ न तो यह रहेगा)।

योऽयं विज्ञानमयः प्राणेषु हृद्यन्तर्ज्योतिः पुरुषः।

(बृहदारण्यक ४।३।७)

यह जो जीता जागता विज्ञान से भरपूर, प्राणों में संचार करता हुआ, हृदय के अंदर ज्योति बनकर बैठा हुआ पुरुष है, यही आत्मा है और सम्पूर्ण शरीर में अपनी ज्योति पहुँचाता हुआ प्राणों में व्याप्त, हृदय में बैठा हुआ है।

बालादेकमणीयस्कमुतैकं नैव दृश्यते।

(अथर्व० १०।८।२५)

जीवात्मा नामक एक जीता जागता पदार्थ है जो बाल की नोक से भी छोटा है।

बालाग्रशतभागस्य शतधा कल्पितस्य च।
भागो जीवः स विज्ञेयः स चानन्त्याय कल्पते।।

(श्वेताश्व० ५।९)

अर्थ – बाल के नोक के सौ भाग किये जायें और उनमें से एक का पुनः सौ भाग किया जाये, तो उसके एक भाग से भी छोटा है आत्मा का स्वरूप। प्राणी की मृत्यु का समय आते ही पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियाँ, पाँचों प्राण तथा मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार सब के सब सूक्ष्म रूप में आत्मा के पास एकत्र हो जाते हैं। इसमें एक क्षण का भी समय नहीं लगता।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जज्ञानः सप्तमातृभिर्मेधामाशासत श्रिये ।

(सामवेद पू० १०१)

अष्टांग योग की सातवीं मंजिल ध्यान में मनुष्य जब पहुँचता है तो परमात्मा की ज्योति के दर्शन होते हैं ।

तं पश्यते निष्कलं ध्यायमानः

(मुण्डक० ३।१।८)

ध्यान में पहुँचे हुये मनुष्य को उस परम पुरुष परमेश्वर का दर्शन होता है ।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही ।।

(गीता २।२१)

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ।।

(गीता २।२२)

❖❖❖

यो वै भूमा तत् सुखं नाल्पे सुखमस्ति ।

छान्दो० ७।२३।१।।

जो महान् है असीम है वह ही सुखप्रद है, जो ससीम है- परिमित है- क्षुद्र है उसमें सुख नहीं है । इसलिये उस 'भूमा' को, अनादि अनन्त परमेश्वर को ही जानने की इच्छा करनी चाहिये ।। सम्पा० ।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी के जीवन चरित्र सम्बन्धी मुख्य बातें

सृष्टि के आदि में हुये महाराज मनु चक्रवर्ती सम्राट् से लेकर महाराजा रामचन्द्र जी तक चक्रवर्ती सम्राट् हुए हैं। इनके समय में चार प्रमुख वंश थे- (१) इक्ष्वाकु वंश (२) जनक वंश (३) केकय वंश (४) ऋषि पुलस्त्य वंश रावण तक।

महर्षि वाल्मीकि

प्रचेतसोऽहं दशमः पुत्रो राघवनन्दन।
मनसा कर्मणा वाचा भूतपूर्वं न किल्विषम्।।

रा० उत्तर० ९६।१९,२१॥

हे राम ! मैं प्रचेतस मुनि का दसवाँ पुत्र हूँ। मैंने मन, वचन, कर्म से जीवन में कभी कोई पापाचरण नहीं किया।

श्री वाल्मीकि जी रचित रामायण कुल छः काण्डों में बनी थी। लेकिन बाद में किसी पण्डित ने एक उत्तरकाण्ड नाम से सातवाँ काण्ड मिला दिया, जिसमें कुछ असम्भव और मिथ्या कथायें जोड़ दी गयीं। इसकी सत्यता इस प्रकार है कि ग्रन्थकर्ता अपनी पुस्तक का माहात्म्य अन्त में लिखा करता है। किन्तु रामायण पढ़ने का माहात्म्य छठे काण्ड के अन्त में लिखा है। अतः स्पष्ट है कि उत्तरकाण्ड बाद में जोड़ा गया है। वह ऐतिहासिक दृष्टि से प्रामाणिक नहीं है, उत्तर का अर्थ ही है बाद में लिखा हुआ।

कोन्वस्मिन् साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान्।
धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढव्रतः।।

बाल० १।२॥

मुनि श्रेष्ठ नारद जी से तपस्वी महर्षि वाल्मीकि जी पूछते हैं कि भगवन्! इस समय संसार में गुणवान्, धर्मज्ञ, शूरवीर, सत्यवादी, कृतज्ञ और दृढ़ प्रतिज्ञा वाला मनुष्य कौन है ? **'साम्प्रतम्'** का अर्थ है वर्तमान समय में ऐसा कौन पुरुष है।

प्राप्तराज्यस्य रामस्य वाल्मीकिर्भगवानृषिः।
चकार चरितं कृत्स्नं विचित्रपदमर्थवत्।।

(बालकाण्ड सर्ग ४ श्लोक ०१)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीराम जी के राज्य सिंहासन पर बैठने के पश्चात् महर्षि वाल्मीकि जी ने रामायण महाकाव्य लिखा था।

"त्रेता और द्वापर युग की सन्धि में दशरथ जी के घर श्रीरामचन्द्र जी का जन्म हुआ।"

चर्तुविंशे युगे रामो वशिष्ठेन पुरोधसा।
सम्भवो रावणस्यार्थे जज्ञे दशरथात्मजः।।

त्रेता युग के २४वें भाग में ऋषि वसिष्ठ के साथ श्रीराम का जन्म रावण के वध हेतु हुआ था।

राम, परशुराम, वसिष्ठ, रावण, विश्वामित्र आदि सभी त्रेता द्वापर की संधि वेला में उत्पन्न हुए थे। इस प्रकार २४वें त्रेता युग से २८वें त्रेता युग तक चार युग समाप्त हुए, जिनमें द्वापर के आठ लाख, चौसठ हजार वर्ष (८,६४,०००) और कलियुग के पाँच हजार एक सौ छः वर्ष (५,१०६) जोड़ने पर कुल योग एक करोड़, इक्यासी लाख, उन्चास हजार, छियालीस वर्ष (१,८१,४९,०४६) होते हैं। यह गणना संवत् २०६२ (सन् २०) तक की है। श्रीराम सौ वर्ष तक जीवित थे और ३१ वर्ष तक राज्य किया था तथा ५१ वर्ष की अवस्था में राजगद्दी मिली। जब हनुमान् जीं ने लंकापुरी में प्रवेश किया तो उन्होंने वहाँ विभिन्न प्रकार के दृश्य देखते हुए चार दाँत वाले हाथी भी देखे थे। तीन शताब्दी पूर्व आज के वैज्ञानिकों को चार दाँत वाले हाथियों का ज्ञान नहीं था, ऐसे हाथी आज से ढाई करोड़ वर्ष से लेकर पचपन लाख वर्ष पूर्व तक अफ्रीका आदि में पाये जाते थे। महर्षि वाल्मीकि जी ने अपने रामायण महाकाव्य में ऐसे हाथियों का वर्णन किया है। इससे सिद्ध होता है कि राम-रामायण काल जो नौ लाख वर्ष कुछ जगहों पर बताया जाता है, वह गलत है। बल्कि राम, रामायण काल की गणना उपरि लिखित प्रमाणित है।

तुलसीकृत रामायण में वर्णित काल

गोस्वामी तुलसीदास जी ने संवत् १६३१ में रामनवमी के दिन प्रातः काल की वेला में श्रीरामचरित महाकाव्य लिखना प्रारम्भ किया और दो वर्ष सात मास छब्बीस दिन में संवत् १६३३ के मार्गशीर्ष मास शुक्ल पक्ष में सम्पूर्ण रामचरित्र समाप्त किया था। उन्होंने अपने ग्रन्थ के आरम्भ में लिखा है कि-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संबत सोरह सै एकतीसा । कउँ कथा हरि पद धरि सीसा ।
नौमी भौम बार मधु मासा । अवधपुरी यह चरित प्रकासा ।।

रामच० बाल० दो० ३३ चौ० २,३॥

इस प्रकार से तुलसीकृत रामायण की रचना को ४३३ वर्ष (सन् २००५) हो गये । श्रीरामचन्द्र जी की आयु १५ वर्ष की थी जब विश्वामित्र जी दशरथ जी से माँग कर राम-लक्ष्मण को यज्ञ रक्षार्थ अपने साथ ले गये थे और १० वर्षों तक उन्हें शस्त्र विद्या में निपुण करने के बाद अपने साथ जनकपुर ले गये थे। उस समय श्रीराम जी की आयु २५ वर्ष और जनकसुता सीता की आयु १८ वर्ष की थी । विवाह के पश्चात् श्रीराम १२ वर्ष तक अपने पिता श्री दशरथ जी के साथ राज्यकार्य में रहकर निपुण हुए थे । उसके पश्चात् दशरथ जी ने राम को राजगद्दी देने के लिए अपने मंत्रिमण्डल में प्रस्ताव रखा और सब ने सहर्ष स्वीकार किया, परन्तु उस समय रावण का प्रताप बहुत बढ़ गया था इसे ऋषि, मुनि, गन्धर्व, यक्ष, देव सभी जानते थे । रावण के प्रताप को कैसे नष्ट किया जावे इसकी गुप्त मंत्रणा भी सब सोच रहे थे और एक मत से प्रस्ताव पारित हुआ कि श्रीराम जी को राजगद्दी न मिले वनवास होवे और वनवास-प्रवास के दौरान वे दक्षिण प्रदेश के द्रविड़, ऋक्ष, वानर, कोल, भील से अपना सम्बन्ध स्थापित करके उन्हें अपने साथ लेकर रावण पर चढ़ाई करें । इस आर्यावर्त से रावण का आधिपत्य समाप्त किया जावे, जो उस समय अधर्म के मार्ग पर आरूढ़ चारों दिशाओं में बढ़ रहा था । ऋषियों, गन्धर्वों, देवों की गुप्त मंत्रणा से ब्रह्मा जी की पत्नी सरस्वती को चुना कि इस शुभ कार्य में स्त्री की सहायता से मन्थरा के द्वारा कैकेयी को तैयार किया जावे कि श्रीराम जी को वनवास और भरत को राज्य मिले । इस कार्य को सरस्वती ने काफी प्रयास के बाद पूर्ण किया और श्रीराम को वनवास मिला ।

बिपति हमारि बिलोकि बड़ि मातु करिअ सोई आजु ।
रामु जाहिं बन राजु तजि होइ सकल सुरकाजु ।।

रामच० अयो० दो० ११॥

देव, गन्धर्व, ऋषि सब सरस्वती जी से विनम्र प्रार्थना करते हैं कि हे

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माता ! आप कृपया वही कार्य करिये जिससे श्रीराम वन को जावें । जिससे देवताओं का काम रावण-वध सफल होवे, अन्त में तो श्रीराम को राजगद्दी मिलनी ही है ।

तिन्हहि सोहाई न अवध बधावा, चोरहि चांदिनि राति न भावा ।
सारद बोलि विनय सुर करहीं, बारहिं बार पायलै परहीं ।।

रामच० अयो० दो० १० चौ० ४।।

जैसे चोर को चाँदनी रात नहीं भाती वैसे ही अयोध्या के गाजे-बाजे, मंगल गीत देवों को बुरे लगते हैं । वे बारम्बार सरस्वती जी से विनम्र प्रार्थना करते हैं। वैसे सरस्वती जी नहीं चाहती हैं कि इस मंगल कार्य में विघ्न आवे, परन्तु देवों की विनम्र प्रार्थना पर इस कार्य को करने हेतु विवश हो गईं और उस कार्य के लिये मन्थरा के द्वारा कैकेयी को विवश कर श्रीराम को १४ वर्ष वनवास और भरत को गद्दी पर बैठाया ।

नामु मन्थरा मन्दमति चेरी कैकेयी केरि ।
जस पेटारी ताहि करि गई गिरा मति फेरि ।।

रामच० अयो० दो० १२।।

उस मन्दमति मन्थरा दासी की मति फेर कर अपयश की पिटारी बनाकर सरस्वती जी चली गईं । यह था देवों, ऋषियों, मुनियों का षड्यन्त्र रावण-वध का । अस्तु बड़े ही शोक संतप्त करुणा भरे दृश्य की उपस्थिति में श्रीराम, लक्ष्मण, सीता अपने माता-पिता, परिवार और प्रिय नगरवासियों को रोते छोड़कर राज्य के सभी सुखों से वंचित होकर वन के भयंकर कष्टों को सहने और धर्म रक्षार्थ नगर से प्रस्थान करते हैं । ऋषि, मुनि, देवों का आधा षड्यन्त्र तो सफल हो गया ।

प्रथम दिवस अयोध्या से चलकर श्रीराम ने लक्ष्मण, सीता सहित तमसा नदी पर विश्राम किया । आगे वन प्रवास के दौरान वे लोग भरद्वाज मुनि, अत्रि ऋषि, शरभंग ऋषि, अन्य कई ऋषियों के दर्शन, वार्तालाप करते हुए आगे प्रस्थान करते हैं । वन प्रवास के बीच में विश्वामित्र, देवों, गन्धर्वों ने मिलकर जहाँ-जहाँ श्रीराम, लक्ष्मण, सीता रुकते थे वहाँ-वहाँ इन्होंने प्रचारित किया रास्ते में जो राक्षस थे उनका वध करवाया, इस प्रयास द्वारा कुछ समय राम ने चित्रकूट पर व्यतीत किया, फिर अनेक भयंकर जंगलों को

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पार कर वे पंचवटी नामक स्थान पर गोदावरी के निकट पर्णकुटी बनाकर रहने लगे। उससे आगे रावण की सीमा चौकी थी। जहाँ पर शूर्पणखा का नाक-कान काट कर कुरूप कर छोड़ दिया। शूर्पणखा दुःखी होकर लंका पहुँची और भाई रावण को अपनी दुर्दशा का सारा वृतान्त सुनाया। सीता सुन्दर है उसे अपने राजमहल में लाइये यह भी मंतव्य बताया। इस कार्य को पूर्ण करने हेतु रावण-मारीच को साथ लेकर वायुयान द्वारा पंचवटी पर आया और अपनी छल-कपट की नीति से सीता का अपहरण कर लंका ले आया। इस प्रकार रावण ने अपनी बहन का बदला लेकर शूर्पणखा को धैर्य दिलाया। उसके पश्चात् श्रीराम ने सुग्रीव से मित्रता करके उसके भाई अन्यायकारी बालि को मारा फिर सुग्रीव को राजा बनाकर उसकी सहायता से लंका में हनुमान् को भेजकर सीता का पता कराया। पुनः द्रविड़ प्रदेश के समस्त माण्डलिक राजाओं को साथ लेकर लंका पर आक्रमण किया और विभीषण जब शरणागत हुआ उसे अपने पक्ष में करके देवों की सहायता से युद्ध करके वेद विद्या के भण्डार और वयोवृद्ध रावण महाराज को मार डाला गया। इस कार्य के सम्पन्न होने के बाद उत्तराखण्ड के इन्द्रादि सभी देव, राजा, ऋषि, मुनि, गन्धर्व स्वतन्त्र कर दिये। इन सबका जो रावण-वध का षड्यन्त्र था वह पूर्ण हो गया। राम-रावण का यह युद्ध धर्म, संस्कृत तथा राष्ट्र की स्वतन्त्रता-परतन्त्रता को लेकर हुआ था और इसका बीज राम-जन्म से बहुत पहले ऋषियों-गन्धर्वों ने बो दिया था।

रामायण सम्बन्धी मुख्य बातें

राम, लक्ष्मण भी संध्या, गायत्रीजाप, अग्निहोत्र प्रतिदिन दोनों समय करते थे।

बिगत दिवसु गुरु आयसु पाई। संध्या करन चले दोऊ भाई।।

मानस, बाल० दोहा- २३६, चौ० ३॥

इस चौपाई से स्पष्ट है कि-

श्रीराम-लक्ष्मण तो वैदिक विधान के अनुसार संध्या-गायत्रीजाप-अग्निहोत्र करते थे और इनके भक्तगण आज रामनाम का कीर्तन करते हैं जो अवैदिक कार्य हैं। अगर यह विधान होता तो तुलसीदास जी भी चौपाई में लिख देते-

झांझ-मृदंग गले लटकाई। कीर्तन करन चले दोऊ भाई।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षि वाल्मीकि ने अपने अमर ग्रन्थ-रामायण के अयोध्या काण्ड में लिखा है कि-

एकयामावशिष्टायां रात्र्यां प्रतिविबुध्य सः ।
पूर्वां सन्ध्यामुपासीनो जजाप यतमानसः ।।

अयो० ६।५,६।।

जब एक पहर रात्रि शेष रही, तब श्रीराम उठकर और प्रातः सन्ध्योपासना कर एकाग्रचित्त होकर गायत्री का जाप करते थे ।

रावण की लंका कहाँ थी

रावण के बाबा मुनि पुलस्त्य आन्ध्रालय (वर्तमान आस्ट्रेलिया) में गये थे। उन्हें योग्य देखकर वहाँ के राजा तृणबिन्दु ने अपनी कन्या ब्याह दी थी उससे विश्वश्रवा का जन्म हुआ और विश्वश्रवा ने चार विवाह किये थे । प्रथम विवाह बृहस्पति की पुत्री देववर्णिनी से, जिससे कुबेर ने जन्म लिया। दूसरा राक्षस माली की पुत्री केकसी से, जिससे रावण, कुम्भकर्ण, विभीषण, शूर्पणखा ने जन्म लिया । तीसरी पत्नी का नाम पुष्पोत्कटा, इससे महोदर, प्रहस्त, महापार्श्व, खर का जन्म हुआ और चौथी पत्नी वाका, इससे त्रिशिरा, दूषण और कुम्भीनसी कन्या हुई । यहाँ यह सिद्ध है कि रावण उच्च कुल व ब्राह्मण वंश का था । रावण लंका का शासक हुआ । अतः रावण की राजधानी लंका आस्ट्रेलिया में थी । आधुनिक लंका जो कि भारत की सीमा से कुल ६० मील की दूरी पर समुद्र में बसी है । इसका पुराना नाम 'सिंहलद्वीप' था । बाद में इसे लंका के नाम से जानने लगे । इसमें यह प्रमाण है कि जब श्रीराम लंका विजय के बाद सीता सहित पुष्पक विमान द्वारा आकाश मार्ग से लौट रहे थे तो वर्तमान लंका को देखकर सीता को वह स्थान भी दिखलाया जहाँ से समुद्र का पुल बांधा था । समुद्र के पुल की लम्बाई १०० योजन (चार सौ कोस) प्रसिद्ध है । अतः सौ योजन आस्ट्रेलिया समुद्र के उस पार तक ही पूरे होते हैं, वर्तमान लंका तक नहीं।

रावण का वध किस मास में हुआ था ?

वर्तमान समय में पूरे देश में आश्विन (क्वार) सुदी दशमी के दिन रावण का पुतला जलाकर **विजयादशमी** के रूप में मनाया जाता है । प्राचीन काल में तो **विजयादशमी** का शुद्ध रूप इतना ही ज्ञात होता है कि इस दिन

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीरतापूर्वक नाटक खेले जाते थे, कुश्ती कराई जाती, व्यायाम प्रदर्शन होता था और जीतने वाले को पारितोषक दिये जाते थे। यह क्षत्रियों से सम्बन्धित पर्व उनकी राष्ट्र रक्षा की परीक्षा के लिए उपयुक्त अवसर था। अस्त्र-शस्त्रों की सफाई कराई जाती थी और राजा लोग विजय यात्रा के लिए निकलते थे, फिर काल चक्र के अनुसार **रामलीला** का प्रदर्शन होने लगा जिसमें श्रीरामचन्द्र जी के पवित्र जीवन को विकृत रूप दिया गया, उसका दुष्परिणाम यह हुआ कि लोगों में एक नई भ्रान्ति उत्पन्न हो गई। वह यह कि भारत ही नहीं, अन्य बहुत से देशों में इस बात का प्रचार आरम्भ हो गया कि श्रीराम ने रावण को इसी दशमी के दिन मारकर विजय प्राप्त की थी। वस्तुतः विजयादशमी के साथ रावण वध का कोई सम्बन्ध नहीं है। वाल्मीकि रामायण द्वारा यह पता लगता है कि क्वार के महीने में शरद् ऋतु होती है। इस महीने तक तो श्रीराम को यह भी नहीं पता था कि सीता है कहाँ ? वाल्मीकि रामायण के अनुसार वह चैत्र का महीना था।

चैत्रः श्रीमानयं मासः पुण्यः पुष्पितकानन ।
यौवराज्याय रामस्य सर्वमेवोपकल्प्यताम् ।।

अयो० ३।४।।

दशरथ जी ने अपने कुल पुरोहित वसिष्ठादि से कहा-यह चैत्र मास है वन में फूल खिल रहे हैं। आप राम के राज्याभिषेक के लिए आवश्यक सामग्री तैयार कीजिए। देवों, ऋषियों के षड्यन्त्र से श्रीराम को राज्याभिषेक तो न हुआ बल्कि १४ वर्ष के लिए वनवास हो गया। अब चौदह वर्ष भी उसी दिन पूरे होंगे जिस दिन उन्हें राजतिलक होना था। वह चैत्र का महीना था। श्रीराम के वनवास काल का तेरहवां वर्ष चल रहा था। पूष के महीने में शूर्पणखा पंचवटी पर श्रीराम के पास आई, फिर वह विवाह के प्रस्ताव से कुरूप कर दी गई। उसने रावण को सूचित किया। अगले मास माघ कृष्ण अष्टमी के दिन 'रावण' ने राम, लक्ष्मण की अनुपस्थिति में सीता का हरण किया। आगे सर्दी समाप्त हो जाने पर चैत्र का महीना आ गया। यह तेरहवाँ वर्ष पूरा हुआ। चौदहवें वर्ष ज्येष्ठ के अन्त में राम, सुग्रीव की मित्रता हो गई और बालि मारा गया। सुग्रीव राजा बना, तब तक बरसात आ गई। चार माह वर्षा ऋतु में श्रीराम ने पर्वत गुहा में व्यतीत किया। कार्तिक मास में

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीता की खोज के लिए राम ने सुग्रीव को सचेत किया । कार्तिक मास के अन्त में उन्होंने वानर सेना को सीता खोजने हेतु भेजा । पूरे एक माह में सीता की खोज हो पाई । अब माघ मास से लेकर अगहन मास तक सीता को रावण की कैद में दस महीने हो गये, चौदहवां वर्ष शुरू हुआ । अगहन मास तक तो रावण मरा ही नहीं है । अब श्रीराम वानर सेना के साथ समुद्र तट पर आते हैं । पौष शुक्ल दशमी से त्रयोदशी तक समुद्र पर पुल बांधा गया और तीन दिन में सेना समुद्र पार हो गई । अब माघ माह आया, फिर माघ शुक्ल प्रतिपदा को अंगद को दूत बनाकर लंका भेजा गया कि रावण अब भी सीता को वापस कर शरणागत हो जावे, परन्तु ऐसा नहीं हुआ । अगले दिन माघ शुक्ल द्वितीया से युद्ध आरम्भ हुआ, जो चैत्र कृष्ण चतुर्दशी तक चला । बीच-बीच में कभी युद्ध बन्द भी रहा । इस प्रकार लगभग ७२ दिन तक राम-रावण का युद्ध होता रहा जिसमें रावण से युद्ध १८ दिन तक हुआ था । तब चैत्र कृष्ण शुक्ल पक्ष चौदस को श्रीराम ने रावण को मारकर विजय प्राप्त किया था । इस तरह से चौदह वर्ष पूरे हुये । रावण-वध चैत्र मास में हुआ, क्वार सुदी दशमी को नहीं । यह प्रमाण वाल्मीकि रामायण में है । तुलसीकृत रामायण में भी यही दर्शाया है ।

चैत्र शुक्ल चौदस जब आई, मरयौ दशानन जग दुखदाई ।

नोट – पुराणों के अनुसार माघ शुक्ल द्वितीया से चैत्र कृष्ण चतुर्दशी तक ८७ दिन युद्ध चला, इनमें १५ दिन युद्ध बन्द रहा । कुल ७२ दिन युद्ध हुआ । राम से रावण का युद्ध सिर्फ १८ दिन हुआ था तथा सीता जी रावण के यहाँ अशोक वाटिका में कैद १४ महीना १० दिन तक रही थीं ।

(पद्मपुराण खण्ड-३६) (स्कन्द पुराण-ब्रह्म खण्ड-अ०-३६)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भजन संग्रह

ओ३म् है जीवन हमारा, ओ३म् प्राणाधार है ।
ओ३म् है कर्ता विधाता, ओ३म् पालनहार है ॥
ओ३म् है दुःख का विनाशक, ओ३म् सर्वाधार है ।
ओ३म् है बल तेज धारी, ओ३म् करुणाकन्द है ॥
ओ३म् सबका पूज्य है, हम ओ३म् का पूजन करें ।
ओ३म् के ही ध्यान से हम शुद्ध अपना मन करें ॥
ओ३म् के गुरुमंत्र जपने से रहेगा शुद्ध मन ।
बुद्धि दिन प्रतिदिन बढ़ेगी धर्म में होगी लगन ॥
ओ३म् के जप से हमारा ज्ञान बढ़ता जायेगा ।
अंत में यह ओ३म् हमको मुक्ति तक पहुँचायेगा ॥

तुम्हीं नाथ सब ओर छाये हुए हो ।
मधुर रूप अपना दिखाये हुए हो ॥
तुम्हीं व्रत-विधाता नियन्ता जगत् के ।
स्वयं भी नियम सब निभाये हुए हो ॥
प्रभो शक्तियाँ दिव्य अनुपम तुम्हारी ।
तुम्हीं दूर तुम पास आये हुए हो ॥
करें हम यजन पुण्य शुभ कर्म जितने ।
सभी में प्रथम स्थान पाये हुए हो ॥
तुम्हारी करें वन्दना देव निश दिन ।
तुम्हीं इस हृदय में समाये हुए हो ॥

अफसोस मूढ़ मन तू मुद्दत से सो रहा है ।
सोचा न यह कि घर में अंधेरा हो रहा है ॥
अनन्त मंजिलों को तय करके मुश्किलों से ।
जिस घर को तूने ढूँढ़ा उस घर को खो रहा है ॥
घर में है ज्ञान गंगा जिसमें न मारा गोता ।
तृष्णा के गन्दे जल में इस तन को धो रहा है ॥
अनमोल श्वास तेरी पापों में जा रही है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रत्नों को छोड़ कंकड़ और काँच ढो रहा है ॥
संसार सिंधु से तू क्या खाक पार होगा ।
विषयों के सिन्धु में जब किश्ती डुबो रहा है ॥

४. जिन्दगी का सफर करने वाले,
अपने मन का दिया तू जला ले ।
वक़्त की धारा यह कह रही है,
कष्ट क्यों आत्मा सह रही है ॥
देख ऐसी जगह पर खड़ा तू,
ज्ञान गंगा जहाँ बह रही है ।
बढ़के गंगा में डुबकी लगा ले,
अपने मन का दिया तू जला ले ॥
रात लम्बी है गहरा अँधेरा,
कौन जाने कहाँ हो बसेरा ।
तू है अनजान मंजिल का राही,
चलते रहना ही है काम तेरा ॥
रोशनी से डगर जगमगा ले,
अपने मन का दिया तू जला ले ।
सूनी सूनी हैं मंजिल की राहें,
चूमना तेरे कदमों की चाहें ॥
गहन वन में कहीं खो न जाना,
भटक जाये न तेरी निगाहें ॥
हर कदम सोचकर तू उठा ले,
अपने मन का दिया तू जला ले ॥

५. सब मिल के नारि नर करो उच्चार ओ३म् का ।
निज मन-भवन में लीजे बसा प्यार ओ३म् का ॥
आकाश, सूर्य, चन्द्र में उडगन में ओ३म् है ।
जल में, पवन में दामिनी में, घन में ओ३म् है ॥
गिरि, कन्दरा में, वाटिका में वन में, ओ३म् है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोचन में ओ३म्, तन में ओ३म्, मन में ओ३म् है ॥
व्यापक है अखिल विश्व में विस्तार ओ३म् का ।
सब मिल के नारि नर करो उच्चार ओ३म् का ॥
ध्रुव ने बड़े ही प्रेम से इस नाम को ध्याया ।
प्रह्लाद ने इसी से अमिट नेह लगाया ॥
क्रोधित हो असुर ने उसे बहु भांति सताया ।
भय अग्नि व पर्वत से गिराने का दिखाया ॥
त्यागा न किन्तु भक्त ने आधार ओ३म् का ।
सब मिल के नारि-नर करो उच्चार ओ३म् का ॥
इस नाम के प्रताप दयानन्द हुए सबल ।
वैदिक विवेक सत्य के सांचे में गये ढल ॥
भय संकटादि में रहे ध्रुव की तरह अटल ।
दुर्बुद्धि, दुष्ट, दम्भियों के दिल गये दहल ॥
जिस दम किया महर्षि ने जयकार ओ३म् का ।
सब मिल के नारि-नर करो उच्चार ओ३म् का ॥
दुःख रात्रि को मिटायेगा ये ओ३म् का झण्डा ।
शुभ दिन 'प्रकाश' लायेगा ये ओ३म् का झण्डा ॥
वीरों के कर में आयेगा ये ओ३म् का झण्डा ।
फिर विश्व में फहरायेगा ये ओ३म् का झण्डा ॥
गूँजे अनादि नाद निर्विकार ओ३म् का ।
सब मिल के नारि, नर करो उच्चार ओ३म् का ॥

६. मैंने पूछा पपीहा से ऐ! पपीहा ।
तेरा किसके विरह में है तड़पे जिया ॥
है लगन में मगन दिल किसको दिया ।
पी पी करता बता दे तेरा कौन पिया ॥
बोला मेरा 'प्रकाश' वही है विभु ।
ओ३म् भूः ओ३म् भूः ओ३म् भूः ओ३म् भूः ॥
वही आकाश, घन, गिरि शृङ्गों में है ।
वही सिन्धु की तरल तरंगों में है ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वही बाग, तड़ाग विहंगों में है ।
वही रमा हुआ सब अंगों में है ॥
और फूलों में है उसकी खुशबू ।
ओ३म् भूः ओ३म् भूः ओ३म् भूः ओ३म् भूः ॥
वही पूर्ण, ब्रह्म, करुणा-सिन्धु ।
वही प्रणतपाल, प्रिय प्राण प्रभु ॥
वही राजों का राजा, गुरुओं का गुरु ।
वही बन्धु, सखा, वही मात, पितु ॥
वही स्वामी सहायक सच्चा हितू ।
ओ३म् भूः ओ३म् भूः ओ३म् भूः ओ३म् भूः ॥
भक्ति-रस में दयानन्द ऐसे बहे ।
पूर्ण आजन्म ऋषि ब्रह्मचारी रहे ॥
धर्म रक्षा के हित लाख संकट सहे ।
मरते दम तक भी यही शब्द मुख से कहे ॥
होवे इच्छा तेरी पूर्ण प्यारे प्रभु ।
ओ३म् भूः ओ३म् भूः ओ३म् भूः ओ३म् भूः ॥

७. दाता तेरे सुमिरन का वरदान जो मिल जाये ।
मुरझाई कली दिल की एक आन में खिल जाये ॥
सुनते हैं तेरी रहमत दिन-रात बरसती है ।
इक बूँद जो मिल जाये तकदीर बदल जाये ॥
ये मन बड़ा चंचल है सुमिरन में नहीं लगता ।
जितना इसे समझाऊँ उतना ही मचल जाये ॥
ए नाथ मेरे दिल की बस इतनी तमन्ना है ।
पापों से बचा लेना कहीं पाँव न फिसल जाये ॥
देवत्त्व के फूलों से दामन को मेरे भर दो ।
जीवन ये सुगन्धित हो दुर्गन्ध निकल जाये ॥
ए मानव तू दिल से प्रभु नाम का सिमरन कर ।
दुःखों भरे जीवन का काँटा ही बदल जाये ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. तू ही एक सबका सहारा प्रभु है,
तू ही जन्म दाता हमारा प्रभु है ।
तेरा नाम सुनते हैं हम दीनबन्धु,
इसी से तो तुझको पुकारा प्रभु है ॥
डूबा वही भव सिन्धु के भँवर में,
तुझे जिस किसी ने बिसारा प्रभु है ।
तू ही योगियों का है धन प्राण जीवन,
तेरी भक्ति अमृत की धारा प्रभु है ।
करुँ भेंट क्या वस्तु भगवन् तुम्हारे,
सभी विश्व मण्डल तुम्हारा प्रभु है ॥
बिना देखे मरता है तुझ पर जमाना,
तेरा नाम भक्तों को प्यारा प्रभु है ।
सर्वव्यापक होकर तू रमा सबके अंदर,
मगर लीला अद्भुत कि न्यारा प्रभु है ॥

९. नर-नारी सब प्रातः शाम, भजलो प्यारे ओ३म् का नाम ।
ओ३म् नाम का पकड़ सहारा, जो है सच्चा पिता हमारा ।
वो ही है मुक्ति का धाम, भजलो प्यारे ओ३म् का नाम ॥
कैसा सुन्दर जगत् बनाया, सूर्य चाँद आकाश बनाया ।
गुण गाता है जगत् तमाम, भजलो प्यारे ओ३म् का नाम ॥
पृथ्वी और पहाड़ बनाये, नदियाँ नाले खूब सजाये ।
बिन कर कर्म करे निष्काम, भजलो प्यारे ओ३म् का नाम ॥
ऋषियों, मुनियों ने ही ध्याया, अंत न किसी ने इसका पाया ।
करते हैं इसको प्रणाम, भजलो प्यारे ओ३म् का नाम ॥
मन अपने को शुद्ध बनाओ, विषय विकारों से बच जाओ ।
वेदों का यह ही फ़रमान, भजलो प्यारे ओ३म् का नाम ॥
हीरा जन्म गँवाओ न तुम, 'नन्दलाल' घबराओ न तुम ।
संध्या करो सुबह और शाम, भजलो प्यारे ओ३म् का नाम ॥
नर-नारी सब प्रातः शाम, भजलो प्यारे ओ३म् का नाम ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. तेरे पूजन को भगवान् बना मनमंदिर आलीशान ।
किसने देखी तेरी सूरत, कौन बनावे तेरी मूरत ।
तू तो निराकार भगवान्, बना मन मंदिर आलीशान ॥
यह संसार है तेरा मन्दिर, तू तो रमा है इसके अंदर ।
धरते ऋषि-मुनि सब ध्यान, बना मन मंदिर आलीशान ॥
सागर तेरी शान बतावें, पर्वत तेरी शोभा बढ़ावें ।
हारे ऋषि-मुनि-विद्वान्, बना मन मंदिर आलीशान ॥
किसने जानी तेरी माया, किसने भेद तुम्हारा पाया ।
तेरा रूप अनूप महान्, बना मन मंदिर आलीशान ॥
तूने राजा रंक बनाये, तूने भिक्षुक राज बिठाये ।
तेरी लीला ईश महान्, बना मन मंदिर आलीशान ॥
तेरे पूजन को भगवान् बना मन मंदिर आलीशान ॥

११. तूने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तू ।
तुझसे ही पाते प्राण हम, दुःखियों के कष्ट हरता तू ॥
तेरा महान् तेज है, छाया हुआ सभी स्थान ।
सृष्टि की वस्तु वस्तु में, तू हो रहा है विद्यमान ॥
तेरा ही धरते ध्यान हम, माँगते तेरी दया ।
ईश्वर हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला ॥
भगवन् हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला ।
दाता हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला ॥

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋग्वेद का संगठन – सूक्त

सामाजिक उन्नति के साधन

ओ३म् संसमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इडस्पदे समिध्यसे स नो वसून्याभर।।

(ऋक्० १०।१९१।१)

हे प्रभो! तुम शक्तिशाली हो बनाते सृष्टि को।
वेद सब गाते तुम्हें हैं, कीजिए धन-वृष्टि को।।

अर्थ– हे सुखों के वर्षक, सबके स्वामी प्रकाशस्वरूप परमात्मन्! आप संसार के सब पदार्थों को अपनी उचित व्यवस्था के अनुसार परस्पर मिलाते हो और फिर उनका वियोग भी आप ही करते हो, आप अपनी शक्तियों से इस धरती पर चमक रहे हो, ऐसे महान् सामर्थ्य वाले भगवन्! आप हमें सब प्रकार के ऐश्वर्य दीजिए।

भगवान् का उपदेश

ओ३म् सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।।

(ऋक्० १०।१९१।२)

प्रेम से मिलकर चलो बोलो सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भाँति तुम कर्त्तव्य के मानी बनो।।

अर्थ– सब प्रकार के ऐश्वर्य के अभिलाषी हे पुरुषो! तुम परस्पर मिलकर चलो, मिलकर बातचीत करो, ज्ञानी बनकर तुम अपने मनों को भी एक बनाओ, जैसे कि पहले के विद्वान् देव पुरुष सम्यक् ज्ञानवान् और एक मतिवाले होकर अपना भाग प्राप्त करते रहे हैं।

ओ३म् समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि।।

(ऋक्०१०।१९१।३)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हों विचार समान सबके चित्त मन सब एक हों ।
ज्ञान देता हूँ बराबर भोग्य पा सब नेक हों ।।

अर्थ– तुम्हारे गुप्त विषयों के गम्भीर विचार मिलकर हों, विचार के लिए तुम्हारी सभायें एक जैसी हों, जिसमें तुम सब मिलकर बैठ सको, तुम्हारा मनन मिलकर हो, निश्चय मिलकर हो, मैं तुम्हें मिलकर विचार करने का उपदेश देता हूँ और तुमको पारस्परिक उपकार के लिए समान रूप से त्याग के जीवन में नियुक्त करता हूँ ।

ओ३म् समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।
समानमस्तु वो मनो, यथा वः सुसहासति ।।

(ऋक्० १०।१९१।४)

हों सभी के दिल तथा संकल्प अविरोधी सदा ।
मन भरे हों प्रेम से जिससे बढ़े सुख-सम्पदा ।।

अर्थ– तुम्हारे संकल्प और प्रयत्न मिलकर हों, तुम्हारे हृदय परस्पर मिले हुए हों, तुम्हारे अन्तःकरण मिले रहें, जिसमें परस्पर सहायता से तुम्हारी भरपूर उन्नति हो ।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्य समाज के नियम

१. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है ।

२. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है । उसी की उपासना करनी योग्य है ।

३. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है । वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है ।

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए ।

५. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए ।

६. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना ।

७. सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए ।

८. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए ।

९. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए ।

१०. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतंत्र रहें ।

❖❖❖

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्ति पाठ

(यजु० ३६।१७)

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं ꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥

अर्थ – हे जगदीश्वर ! प्रकाशमान सूर्यादिलोक सुखदायक हों, दोनों लोकों के मध्य में स्थित आकाशादि सुखकारी हों । जल व प्राण शान्ति देने वाले हों, सब अन्न व औषधि कल्याण करने वाली हों, वनस्पतियाँ सुख देने वाली हों, ईश्वर, वेदज्ञान व विद्वान् लोग सुखदायक हों और इनके अतिरिक्त अन्य सब पदार्थ भी हमें वास्तविक प्रमादरहित शान्ति देने वाले हों, इस प्रकार की वह शान्ति मुझे सदा प्राप्त होती रहे ।

द्यौः, अन्तरिक्ष, भूमि, जल, वनस्पति औषधि रोग निवारे ।
विश्वदेव की दिव्य दया से सुख शान्ति दें सारे के सारे ।।

पाणिनि कन्या महाविद्यालय तिथि पु०सं० 2126 भारती पुस्तकालय

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.